दादा भगवान कथित

समझ से प्राप्त ब्रह्मचर्य

(उत्तरार्ध)

दादा भगवान प्ररूपित

समझ से प्राप्त ब्रह्मचर्य
(उत्तरार्ध)

मूल गुजराती संकलन : डॉ. नीरूबहन अमीन

हिन्दी अनुवाद : महात्मागण

प्रकाशक : अजीत सी. पटेल
महाविदेह फाउन्डेशन
'दादा दर्शन', 5, ममतापार्क सोसायटी,
नवगुजरात कॉलेज के पीछे, उस्मानपुरा,
अहमदाबाद - ३८००१४, गुजरात
फोन - (०७९) २७५४०४०८

प्रथम संस्करण : २००० प्रतियाँ, सितम्बर २०१३

भाव मूल्य : 'परम विनय' और
'मैं कुछ भी जानता नहीं', यह भाव!

द्रव्य मूल्य : १०० रुपये

लेज़र कम्पोज़ : दादा भगवान फाउन्डेशन, अहमदाबाद

मुद्रक : महाविदेह फाउन्डेशन
पार्श्वनाथ चैम्बर्स, नई रिज़र्व बैंक के पास,
उस्मानपुरा, अहमदाबाद-३८० ०१४.
फोन : (०७९) २७५४२९६४, २७५४०२१६

समर्पण

विकराल विषयाग्नि में दिन-रात जलते;
अरे रे! अवदशा फिर भी उसी में विचरते!

संसार के परिभ्रमण को सहर्ष स्वीकारते;
और परिणाम स्वरूप दुःख अनंत भुगतते!

दावा क़रारी, मिश्रचेतन-संग चुकाते;
अनंत आत्मसुख को विषय भोग से विमुखते!

विषय अज्ञान टले, ज्ञानी से 'ज्ञान' मिलते ही;
'दृष्टि' निर्मलता की कुंजियाँ मिलते ही!

'मोक्षगामी' के लिए - ब्रह्मचारी या विवाहित;
शील की समझ से मोक्ष पद करवाते प्राप्त!

अहो! निर्ग्रंथज्ञानी की वाणी की अद्‌भुतता;
अनुभवी वचन निर्ग्रंथ पद तक पहुँचाता!

मोक्ष पथ पर विचरते 'शील पद' की भावना करते;
वीतराग चारित्र के बीज-अंकुर विकसित करते!

अहो! ब्रह्मचर्य की साधना के लिए निकली;
आंतर बाह्य उलझनों के सत् हल बताती!

ज्ञान वाणी का यह संकलन, 'समझ ब्रह्मचर्य' की है देता;
आत्मकल्याणार्थे 'यह', महाग्रंथ जगचरण समर्पिता!

त्रिमंत्र

नमो अरिहंताणं
नमो सिद्धाणं
नमो आयरियाणं
नमो उवज्झायाणं
नमो लोए सव्वसाहूणं
एसो पंच नमुक्कारो,
सव्व पावप्पणासणो
मंगलाणं च सव्वेसिं,
पढमं हवइ मंगलम् १
ॐ नमो भगवते वासुदेवाय २
ॐ नमः शिवाय ३
जय सच्चिदानंद

‘दादा भगवान’ कौन ?

जून १९५८ की एक संध्या का करीब छः बजे का समय, भीड़ से भरा सूरत शहर का रेल्वे स्टेशन, प्लेटफार्म नं. 3 की बेंच पर बैठे श्री अंबालाल मूलजीभाई पटेल रूपी देहमंदिर में कुदरती रूप से, अक्रम रूप में, कई जन्मों से व्यक्त होने के लिए आतुर ‘दादा भगवान’ पूर्ण रूप से प्रकट हुए। और कुदरत ने सर्जित किया अध्यात्म का अद्भुत आश्चर्य। एक घंटे में उन्हें विश्वदर्शन हुआ। ‘मैं कौन ? भगवान कौन ? जगत् कौन चलाता है ? कर्म क्या ? मुक्ति क्या ?’ इत्यादि जगत् के सारे आध्यात्मिक प्रश्नों के संपूर्ण रहस्य प्रकट हुए। इस तरह कुदरत ने विश्व के सम्मुख एक अद्वितीय पूर्ण दर्शन प्रस्तुत किया और उसके माध्यम बने श्री अंबालाल मूलजीभाई पटेल, गुजरात के चरोतर क्षेत्र के भादरण गाँव के पाटीदार, कॉन्ट्रैक्ट का व्यवसाय करनेवाले, फिर भी पूर्णतया वीतराग पुरुष!

‘व्यापार में धर्म होना चाहिए, धर्म में व्यापार नहीं’, इस सिद्धांत से उन्होंने पूरा जीवन बिताया। जीवन में कभी भी उन्होंने किसीके पास से पैसा नहीं लिया, बल्कि अपनी कमाई से भक्तों को यात्रा करवाते थे।

उन्हें प्राप्ति हुई, उसी प्रकार केवल दो ही घंटों में अन्य मुमुक्षु जनों को भी वे आत्मज्ञान की प्राप्ति करवाते थे, उनके अद्भुत सिद्ध हुए ज्ञानप्रयोग से। उसे अक्रम मार्ग कहा। अक्रम, अर्थात् बिना क्रम के, और क्रम अर्थात् सीढ़ी दर सीढ़ी, क्रमानुसार ऊपर चढ़ना। अक्रम अर्थात् लिफ्ट मार्ग, शॉर्ट कट

वे स्वयं प्रत्येक को ‘दादा भगवान कौन ?’ का रहस्य बताते हुए कहते थे कि ‘‘यह जो आपको दिखते हैं वे दादा भगवान नहीं है, वे तो ‘ए.एम.पटेल’ है। हम ज्ञानीपुरुष हैं और भीतर प्रकट हुए हैं, वे ‘दादा भगवान’ हैं। दादा भगवान तो चौदह लोक के नाथ हैं। वे आप में भी हैं, सभी में हैं। आपमें अव्यक्त रूप में रहे हुए हैं और ‘यहाँ’ हमारे भीतर संपूर्ण रूप से व्यक्त हुए हैं। दादा भगवान को मैं भी नमस्कार करता हूँ।’’

निवेदन

आत्मविज्ञानी श्री अंबालाल मूलजीभाई पटेल, जिन्हें लोग 'दादा भगवान' के नाम से भी जानते हैं, उनके श्रीमुख से अध्यात्म तथा व्यवहार ज्ञान संबंधी जो वाणी निकली, उसको रिकॉर्ड करके, संकलन तथा संपादन करके पुस्तकों के रूप में प्रकाशित किया जाता हैं।

ज्ञानीपुरुष संपूज्य दादा भगवान के श्रीमुख से अध्यात्म तथा व्यवहारज्ञान संबंधी विभिन्न विषयों पर निकली सरस्वती का अद्भुत संकलन इस आप्तवाणी में हुआ है, जो नये पाठकों के लिए वरदानरूप साबित होगी।

प्रस्तुत अनुवाद में यह विशेष ध्यान रखा गया है कि वाचक को दादाजी की ही वाणी सुनी जा रही है, ऐसा अनुभव हो, जिसके कारण शायद कुछ जगहों पर अनुवाद की वाक्य रचना हिन्दी व्याकरण के अनुसार त्रुटिपूर्ण लग सकती है, परंतु यहाँ पर आशय को समझकर पढ़ा जाए तो अधिक लाभकारी होगा।

ज्ञानी की वाणी को हिन्दी भाषा में यथार्थ रूप से अनुवादित करने का प्रयत्न किया गया है। प्रस्तुत पुस्तक में कई जगहों पर कोष्ठक में दर्शाये गए शब्द या वाक्य परम पूज्य दादाश्री द्वारा बोले गए वाक्यों को अधिक स्पष्टतापूर्वक समझाने के लिए लिखे गए हैं। जब कि कुछ जगहों पर अंग्रेजी शब्दों के हिन्दी अर्थ के रूप में रखे गए हैं। दादाश्री के श्रीमुख से निकले कुछ गुजराती शब्द ज्यों के त्यों *इटालिक्स* में रखे गए हैं, क्योंकि उन शब्दों के लिए हिन्दी में ऐसा कोई शब्द नहीं है, जो उसका पूर्ण अर्थ दे सके। हालांकि उन शब्दों के समानार्थी शब्द अर्थ के रूप में कोष्ठक में और पुस्तक के अंत में भी दिये गए हैं।

अनुवाद संबंधी कमियों के लिए आपसे क्षमाप्रार्थी हैं।

दादा भगवान फाउन्डेशन के द्वारा प्रकाशित पुस्तकें

हिन्दी

१. ज्ञानी पुरुष की पहचान
२. सर्व दु:खों से मुक्ति
३. कर्म का सिद्धांत
४. आत्मबोध
५. अंत:करण का स्वरूप
६. जगत कर्ता कौन ?
७. भुगते उसी की भूल
८. एडजस्ट एवरीव्हेयर
९. टकराव टालिए
१०. हुआ सो न्याय
११. चिंता
१२. क्रोध
१३. मैं कौन हूँ ?
१४. वर्तमान तीर्थंकर श्री सीमंधर स्वामी
१५. मानव धर्म
१६. सेवा-परोपकार
१७. त्रिमंत्र
१८. भावना से सुधरे जन्मोंजन्म
१९. दान
२०. मृत्यु समय, पहले और पश्चात्
२१. दादा भगवान कौन ?
२२. सत्य-असत्य के रहस्य
२३. प्रेम
२४. अहिंसा
२५. प्रतिक्रमण
२६. पाप-पुण्य
२७. कर्म का विज्ञान
२८. चमत्कार
२९. वाणी, व्यवहार में...
३०. पैसों का व्यवहार
३१. पति-पत्नी का दिव्य व्यवहार
३२. माता-पिता और बच्चों का व्यवहार
३३. समझ से प्राप्त ब्रह्मचर्य
३४. निजदोष दर्शन से... निर्दोष
३५. क्लेश रहित जीवन
३६. गुरु-शिष्य
३७. आप्तवाणी - १
३८. आप्तवाणी - ३
३९. आप्तवाणी - ४
४०. आप्तवाणी - ५
४१. आप्तवाणी - ६
४२. आप्तवाणी - ८
४३. समझ से प्राप्त ब्रह्मचर्य (उत्तरार्ध)

★ **दादा भगवान फाउन्डेशन के द्वारा गुजराती भाषा में भी कई पुस्तकें प्रकाशित हुई है। वेबसाइट www.dadabhagwan.org पर से भी आप ये सभी पुस्तकें प्राप्त कर सकते हैं।**

★ **दादा भगवान फाउन्डेशन के द्वारा हर महीने हिन्दी, गुजराती तथा अंग्रेजी भाषा में ''दादावाणी'' मैगेज़ीन प्रकाशित होता है।**

संपादकीय

पाँच ही विषय हैं, फिर भी उनकी पकड़ न जाने कैसी अवगाढ़ है कि अनंतकाल से उसका अंत ही नहीं आ रहा?! क्योंकि प्रत्येक विषय के फिर अनंतानंत पर्याय हैं! उस प्रत्येक पर्याय में से मुक्त होगा, तब विषय में से छूटेगा और मोक्ष होगा। लेकिन विषय 'आत्मज्ञान' के बिना सर्वांशरूप से निर्मूल होगा ही कैसे? और आत्मज्ञान की प्राप्ति कहाँ सर्वकाल सुलभ होती है? फिर अनंत काल बीत जाए फिर भी इसका 'एन्ड' आएगा क्या?! वह तो जब प्रत्यक्ष 'ज्ञानीपुरुष' से भेंट हो जाए, तब उनसे संप्राप्त आत्मज्ञान से ही इस विषय के झंझट का अंत आएगा!

जिस विषय को जीतने के लिए प्राचीनकाल के ऋषि-मुनि घोर तपश्चर्या करते थे, फिर भी जो दुष्कर होता था, वही ब्रह्मचर्य आज इस काल में अद्‌भुत 'अक्रमविज्ञान' द्वारा शीघ्रता से सहज साध्य हो गया है! यह 'अक्रमविज्ञान' एक ऐसा अद्‌भुत विज्ञान है कि जो मोक्षमार्ग में विवाहितों को भी एडमिट् करता है। इतना ही नहीं लेकिन उस मार्ग में ठेठ पूर्णाहुति तक पहुँचाता है! हाँ, विवाहित लोगों को यह विज्ञान मात्र 'जैसा है वैसा' समझ लेना है!

तमाम शास्त्रों ने, तमाम ज्ञानीपुरुषों ने मोक्षमार्ग में आगे बढ़ने के लिए, आत्म स्वरूप की अनुभूति के द्वार तक पहुँचने के लिए तथा जगत् के सर्व बंधनों से मुक्त होने के लिए 'सर्व संग परित्याग' की अनिवार्यता के बारे में कहा है, लेकिन इस 'अक्रमविज्ञान' ने एक नया ही मार्ग बताया है कि स्त्री का संग-प्रसंग होने के बावजूद भी असंग आत्मानुभव किया जा सके, ऐसा है! इस 'अक्रमविज्ञान' की गहरी समझ के माध्यम से विवाहित भी पुरुषार्थ और पराक्रम द्वारा मोक्षमार्ग में जागृति की पराकाष्ठा तक पहुँच सकें, ऐसा है! विरले ही यह सिद्धि सिद्ध कर सकें, ऐसा होने के बावजूद भी इस काल में कितने ही विवाहित लोग प्रकट 'ज्ञानीपुरुष' परम पूज्य दादाश्री के सत्संग और सानिध्य में 'समझ' प्राप्त करके आत्मा के स्पष्टवेदन की अनुभूति प्राप्त करने के पंथ पर प्रयाण कर रहे हैं।

संसार में लक्ष्मी-स्त्री-पुत्रादि के साथ के सर्व व्यवहार पूर्ववत् रहने के बावजूद भी आत्मज्ञान में रहकर, आत्मा के अस्पष्टवेदन में से स्पष्टवेदन की ओर जाने का पुरुषार्थ 'प्रत्येक स्वरूपज्ञानी' के लिए इच्छा करने योग्य है! और इस 'अक्रमविज्ञान' द्वारा, वह महान सिद्धि साध्य हो सके, ऐसा है। ऐसा यह सीधा-सादा और सरल अक्रम मार्ग जिसे महा-महा पुण्योदय से प्राप्त हुआ हो, उसे तो यह एक जन्म पूर्णाहुति करने में ही बिता देना चाहिए, अन्यथा अस्सी हज़ार वर्षों तक मोक्षमार्ग तो क्या लेकिन जहाँ 'रिलेटिव' धर्म भी रुँध जानेवाला है, वहाँ मोक्ष की कितनी आशा रखी जा सकती है?!

स्त्री परिग्रह और स्त्री परिषह होने के बावजूद भी उससे अपरिग्रही और परिषह मुक्त हुआ जा सके, उसके लिए परम पूज्य दादाश्री ने सीधी, सरल और सर्वसाध्य दिशा दिखाई है। उस 'दिशा' को 'फॉलो' करनेवालों के लिए उस दिशा के प्रत्येक 'माइल स्टोन' को प्रस्तुत ग्रंथ में स्पष्ट करके बताया गया है, ताकि मोक्षपथिक कहीं भी गुमराह नहीं हो!

प्रकट 'ज्ञानीपुरुष' का 'अक्रमविज्ञान' ऐसा नहीं कहता कि विषय को छोड़ दो, लेकिन निर्विकार-अनासक्त स्वभावी आत्मस्वरूप की ओर की दृष्टि प्राप्त होने के परिणामस्वरूप 'खुद' को विषय से विरक्त बनाकर स्वभाव दशा में रमणता करवानेवाला बनता है! छोटा और सरल, आसान और अति, अति, अति सरल मार्ग ऐसे दूषमकाल के जीवों के लिए अंतिम तारक 'लिफ्ट' इस काल में 'ज्ञानीपुरुष' के सानिध्य में उदय में आई है।

अनंत बार अल्पसुख के लालच में विषय के कीचड़ में सना, लथपथ हुआ, गर्क हो गया फिर भी उसमें से बाहर निकलने को मन नहीं होता, यह भी एक आश्चर्य (!) है न! जो वास्तव में इस कीचड़ में से बाहर निकलना चाहते हैं, लेकिन मार्ग नहीं मिलने के कारण जबरन फँस गए हैं! ऐसे लोग कि जिन्हें सिर्फ छूटने की ही तीव्र इच्छा है, उन्हें तो 'ज्ञानीपुरुष' का यह 'दर्शन' नई ही दृष्टि देकर सारे फँसाव में से मुक्ति दिलानेवाला बन जाता है!

मन-वचन-काया की तमाम संगी क्रियाओं में सर्वथा असंगता के

अनुभव का प्रमाण अक्रमविज्ञान प्राप्त विवाहित लोगों ने सिद्ध किया है। वे भी मोक्षमार्ग की प्राप्ति करके आत्यंतिक कल्याण साध सकते हैं। 'गृहस्थाश्रम में मोक्ष!' यह विरोधाभासी लगता है, फिर भी सैद्धांतिक विज्ञान द्वारा विवाहितों ने भी मोक्षमार्ग पाया है, ऐसी हक़ीक़त प्रमाणभूत साकार हुई है। अर्थात् 'गृहस्थ जीवन मोक्षमार्ग में बाधक नहीं है!' उसका कोई प्रमाण तो होगा न? उस प्रमाण को प्रकाशमान करनेवाली वाणी उत्तरार्ध के खंड-१ में संकलित हुई है।

'ज्ञानीपुरुष' से स्वरूपज्ञान प्राप्त विवाहितों के लिए कि जो विषय-विकार परिणाम और आत्मपरिणाम की सीमारेखा की जागृति के पुरुषार्थ में हैं, उन्हें ज्ञानीपुरुष की विज्ञानमय वाणी से, विषय के जोखिमों के सामने अविरत जागृति, विषय के सामने खेद, खेद और खेद, एवं प्रतिक्रमण रूपी पुरुषार्थ, आकर्षण के किनारे से डूबे बिना बाहर निकल जाने की जागृति देनेवाले समझ के सिद्धांत, जिनमें कि 'आत्मा का सूक्ष्मतम स्वरूप, उसका अकर्ता-अभोक्ता स्वभाव' और 'विकार परिणाम किसका', 'विषय का भोक्ता कौन', और 'उस भोग को अपने सिर पर लेनेवाला कौन?', इन सभी रहस्यों का स्पष्टीकरण जो अन्य कहीं भी खुला नहीं हुआ है, वह यहाँ सादी, सरल और आसानी से समझ में आए, ऐसी शैली में प्रस्तुत हुआ है। इसे समझने की शर्त को ज़रा सा भी चूकने पर, यह सुवर्णकटारी समान बन सकती है। इसके जोखिम और साथ ही निर्भयता प्रकट करती हुई वाणी, यहाँ उत्तरार्ध खंड-२ में प्रस्तुत हो रही है।

सर्व संयोगों से अप्रतिबद्ध रहकर विचरते हुए, महामुक्त दशा का आनंद लेनेवाले ज्ञानीपुरुष ने कैसा विज्ञान देखा! जगत् के लोगों ने मीठी मान्यता से विषय में सुख का आनंद लिया, किस तरह उनकी दृष्टि विकसित करने से उनकी विषय संबंधी सभी उल्टी मान्यताएँ छूट जाएँ और महामुक्तदशा के मूल कारणरूप, ऐसे 'भाव ब्रह्मचर्य' का वास्तविक स्वरूप समझ की गहराई तक फिट हो जाए, विषयमुक्ति हेतु कर्तापन की सारी भ्रांति टूटे और ज्ञानीपुरुष ने खुद जो देखा है, जाना है और अनुभव किया

है, उस 'वैज्ञानिक अक्रम मार्ग' का ब्रह्मचर्य संबंधी अद्‌भुत रहस्य इस ग्रंथ में विस्फोटित हुआ है।

इस संसार के मूल को जड़-मूल से उखाड़नेवाला, आत्मा की अनंत समाधि की रमणता करानेवाला, निर्ग्रंथ वीतराग दशा की प्राप्ति करानेवाला, वीतरागों द्वारा, खुद प्राप्त करके अन्यों को बोधित किया हुआ, यह अखंड त्रियोगी शुद्ध ब्रह्मचर्य, निश्चित रूप से मोक्ष की प्राप्ति करवानेवाला ही है। ऐसे दूषमकाल में 'अक्रमविज्ञान' की उपलब्धि होने के बाद जिसने आजीवन मन-वचन-काया से शुद्ध ब्रह्मचर्य सँभाल लिया, उसे अवश्य ही एकावतारी पद प्राप्त हो सकता है, ऐसा है!

अंत में, ऐसे दूषमकाल में कि जहाँ समग्र जगत् में वातावरण ही विषयाग्निवाला फैल गया है, ऐसे संयोगों में ब्रह्मचर्य संबंधी 'प्रकट विज्ञान' को स्पर्श करके निकली हुई ज्ञानीपुरुष की अद्‌भुत वाणी को संकलित करके विषय मोह में से छूटकर, ब्रह्मचर्य की साधना में रहकर, अखंड शुद्ध ब्रह्मचर्य के पालन हेतु, सुज्ञ पाठक के हाथ में यह 'समझ से प्राप्त ब्रह्मचर्य' ग्रंथ के रूप में प्रस्तुत किया गया है। विषय के जोखिमों से छूटने के लिए, इसके बावजूद भी गृहस्थी में रहकर सारा व्यवहार निर्भयता से पूरा करने के लिए, और मोक्षमार्ग निरंतराय रूप से बर्त सके, इसके लिए 'जैसी है वैसी' वास्तविकता को प्रस्तुत करते हुए, सोने की कटार रूपी कही गई इस समझ को थोड़ी भी विपरीतता की ओर न ले जाकर, सम्यक् प्रकार से ही उपयोग किया जाए, ऐसी प्रत्येक सुज्ञ पाठक से अत्यंत भावपूर्ण विनती! 'ज्ञानीपुरुष' की तात्विक-निश्चय-वाणी तो त्रिकाल सत्य, अविरोधाभासी, सैद्धांतिक ही होती है, जबकि व्यवहार वाणी निमित्ताधीन, संयोगाधीन और द्रव्य-क्षेत्र-काल और भाव के अधीन होती है, इस कारण से इस वाणी में सुज्ञ पाठक को भासित भूल कहीं भी क्षति के रूप में दिखे, तो वह संकलन की भूल हो सकती है, लेकिन उसे क्षम्य मानकर मोक्षमार्ग पर यथायोग्य पूर्णाहुति हेतु इस महाग्रंथ का उपयोगपूर्वक आराधन करें, यही अभ्यर्थना!

- डॉ नीरूबहन अमीन के जय सच्चिदानंद

उपोद्घात

खंड - १

विवाहितों के लिए ब्रह्मचर्य की चाबियाँ

१. विषय नहीं, लेकिन निडरता ही विष

संसार के सभी ब्रह्मचर्य के उपदेशकों ने विषय को ही विष कहा है। जबकि 'अक्रमविज्ञान' ने ऐसा कहा है कि, 'विषय विष नहीं हैं, विषयों में निडरता, वह विष है। इसलिए विषय से डरो।' 'विषय में मुझे हर्ज नहीं है, मैं चाहे जैसे बर्तूं' ऐसी निडरता ही विष है! विषय से डरनेवाला, विषय सेवन में निरंतर खेद, खेद और खेद रखनेवाला, उस दोष से छूट जाता है। अर्थात् हक़ के विषय की भी 'ज्ञानीपुरुष' ने छूट तो दी ही नहीं है, विषय भले ही विष नहीं हो लेकिन विषय में निडरता तो होनी ही नहीं चाहिए क्योंकि निडरता को ही 'ज्ञानीपुरुष' ने विष कहा है! यानी विषय में तो अंत तक निडर होना ही नहीं है।

हक़ के विषय के बारे में 'ज्ञानीपुरुष' क्या कहना चाहते हैं कि 'यह दवाई' मीठी है, इसलिए रोज़-रोज़ नहीं पीनी चाहिए। यह 'दवाई जैसा' है और 'बुख़ार' चढ़ने पर, दोनों में से किसी एक को नहीं लेकिन दोनों को बुख़ार चढ़े और वह असह्य हो जाए, तभी दवाई पीनी चाहिए, वर्ना, यदि मीठी है इसलिए बार-बार पीने लगे तो वह दवाई ही पॉइज़न बन जाएगी। उसके लिए फिर डॉक्टर ज़िम्मेदार नहीं है! मानो पुलिसवाला पकड़कर ले जाए और चार दिन भूखा रखने के बाद डंडे मारकर मांसाहार करवाए, उस समय जैसे बरबस-मज़बूर होकर, चिढ़कर मांसाहार करना पड़े, उसी प्रकार विषय सेवन करना चाहिए। वर्ना विषय में मिठास की मान्यता ऐसी छा जाती है कि जागृति, ध्यान, ज्ञान आदि सबकुछ खत्म हो जाता है और महा पुण्ययोग से गृहस्थाश्रम में प्राप्त मोक्षमार्गीय विज्ञान को धक्का मार देती है!

२. दृष्टि दोष के जोखिम

ओपन बाज़ार में सभी कितने ही सौदे कर डालते हैं? शाम होते-होते बीस-पच्चीस सौदे तो हो ही चुके होते हैं। यदि शादी में गए हों तो? देखने से ही सौदे हो जाते हैं। जब ज्ञान होता है, तब शुद्धात्मा देखता है, इसलिए सौदे नहीं होते। कुछ आकर्षक देखे, तो दृष्टि खिंच ही जाती है। ये तो आंख के ही चमकारे हैं न? आँखें देखें और चित्त चिपके। इसमें गुनाह किस का? आँखों का? मन का? या अपना? गुनाह 'अपना' ही है! इसमें आँखों का क्या दोष? उनमें मिर्च डालने से दृष्टि खिंचनी बंद हो जाएगी क्या? मन कुछ भी दिखलाए, लेकिन यदि हम हस्ताक्षर नहीं करें तो? भैंस की भूल पर चरवाहे को मार? दृष्टि ज़रा सी भी खिंचे तो पूरा दिन उसका प्रतिक्रमण करते रहना होगा।

व्यवहार में स्त्री-पुरुष एक-दूसरे को मान दें तो उसमें हर्ज नहीं है, लेकिन नज़रें झुकाकर बात करनी चाहिए, क्योंकि मान से तो दृष्टि तुरंत ही बिगड़ जाती है। कुछ लोगों में मान की गाँठ के आधार पर विषय होता है और कुछ लोगों में विषय के आधार पर भी मान की गाँठ होती है। यानी एक का आधार निराधार होते ही दूसरा खत्म हो जाएगा। जिनमें आधार विषय है, उनका विषय चला जाने पर मान चला जाएगा और जिनका आधार मान है, उनका मान जाने पर विषय चला जाएगा।

आजकल मुँहबोले भाई-बहन या कज़िन्स के बीच में बहुत विषय चलता है, इसलिए वहाँ सावधान रहना। स्त्री-पुरुष के बीच बिल्कुल भी *लप्पन-छप्पन* (बेमतलब का व्यवहार या लेन-देन) नहीं रखनी चाहिए।

भले ही कितने भी शुद्धात्मा भाव से देखें लेकिन दृष्टि तो गड़नी ही नहीं चाहिए! किसी ने दो मीठे शब्द बोले कि दृष्टि स्लिप हुए बगैर रहेगी नहीं। व्यवहार में साधारण मान चलाया जा सकता है, लेकिन ज़रा सा भी विशेष, अत्यधिक मान देने लगे तो वहाँ पर स्लिप हुए बगैर रहेगा ही नहीं।

जिसके प्रति दृष्टि बिगड़े, तो दूसरे जन्म में वहाँ जाना ही पड़ता है।

हरिजनवास हो, फिर भी! आज तो हर जगह दृष्टि बिगड़ती रहती है! इसके परिणाम का पता नहीं है, इसी कारण से लोग भयंकर नुकसान उठा रहे हैं।

हम ड्रेसअप और मेकअप करके किसी को आकर्षित करें, उसमें अपनी ही ज़िम्मेदारी है। अत: वीतरागों ने कहा है, 'अपने से, सामनेवाले को अपने निमित्त से मोह न हो जाए, दु:ख नहीं हो उसकी जागृति हमें रखनी चाहिए।' इसीलिए तीर्थंकरों ने लुंचन (खींचकर बाल उखाड़ने की क्रिया) अपनाया था। आजकल रूप है ही कहाँ? ये तो मेकअप की वजह से ठीक लगती हैं और अहंकार से और अधिक बदसूरत दिखाई देती हैं। सुंदर चमड़ीवालों को मोह ज़्यादा होता है और वे ज़्यादा भोग लिए जाते हैं।

तीर्थंकर सुंदर नहीं होते लेकिन लावण्यमय होते हैं। बहुत ही सुडौल और अंग-उपांग संतुलित होते हैं। निरअहंकारी का, ब्रह्मचर्य का तेज अद्‌भुत होता है!

शास्त्रकारों ने विषय सुख का वर्णन दाद की बीमारी के समान किया है। उसमें क्या स्वाद?

प्राचीन ऋषिमुनि एक पुत्रदान जितना ही विषय सेवन करते थे। फिर पूरी ज़िंदगी में कभी भी नहीं। फिर तो परस्पर मोक्षमार्ग के साथी के रूप में, परस्पर पूरक बनकर जीते थे। साथ मिलकर आत्मा हेतु ही साधना, भक्ति आदि किया करते थे।

श्रीमद् राजचंद्रजी ने तो यहाँ तक कहा है कि विषय भोग का स्थान वमन करने योग्य भी नहीं है, जो सर्व प्रकार से जुगुप्सा उपजाए, वैसा सब है उसमें।

शास्त्रों में स्त्री को नर्क की खान कहा है, बहुत ही बुरा कहा है। लेकिन मोक्षमार्ग में ऐसा नहीं होता। स्त्री तो देवी है। फिसलन के लिए पुरुष की कमज़ोरी ज़िम्मेदार है, न कि स्त्री।

यह तो जितने लोगों ने शादी की, उतनों ने ऐसी हवा फैलाई है

कि 'शादी करने में कितना मज़ा है।' भौरें के बिल में एक ने डंक खाया, वह चुप बैठकर सभी को डंक खिलाए, उसके जैसी बात है!

३. *अणहक्क* की गुनहगारी

जो संसारी हों, उन्हें तो हक़ के विषय ही भोगने चाहिए। *अणहक्क* के विषय के बारे में तो सोचना भी पाप है। त्यागी के लिए तो विषय का प्रश्न ही नहीं उठता। हक़ और *अणहक्क* के विषय के बीच की भेदरेखा कौन सी? जिनसे विवाह हुआ, उतना ही हक़ का, उसके अलावा अन्य सारा *अणहक्क* का माना जाएगा। चोर नीयत ही *अणहक्क* की ओर खींच ले जाती है। किसी की बेटी पर दृष्टि बिगड़ती है, यदि अपनी बेटी पर कोई दृष्टि बिगाड़े तो क्या होगा? *अणहक्क* के विषयभोग के खूब प्रतिक्रमण करने से सज़ा कम हो जाएगी।

अणहक्क के विषय में तो पाँचों महाव्रतों का भंग होता है। हक़ का तो हर कोई स्वीकार करता है, लेकिन *अणहक्क* का नहीं। चारित्रभ्रष्टता आत्मा के मार्ग पर तो क्या, लेकिन सीधे नर्क में ही ले जाती है।

विषय में क्या सुख है? जानवरों को भी पसंद नहीं आए। उन्हें तो सीज़नल उत्तेजना होती है। सीज़न पूरा होने के बाद फिर उन्हें वैसा कुछ भी नहीं होता।

विषयभोग की गति कैसी है? इस जन्म की पत्नी अथवा रखैल अगले जन्म में खुद की ही बेटी बनकर आती है!

अणहक्क का खाया, पीया या भोगा हो तो उसके खूब सारे प्रतिक्रमण करना। तभी कुछ छूटने का मार्ग मिलेगा।

४. एक पत्नीव्रत का मतलब ही ब्रह्मचर्य

वैसे खुद की ब्याहता अर्थात् हक़ की स्त्री के साथ विषयभोग में आपत्ति नहीं उठाई लेकिन मन-वचन-काया से जो एक पत्नीव्रतधारी होगा, उसे अक्रमज्ञानी ने इस काल में ब्रह्मचारी कहा है और उसके ब्रह्मचर्य की उन्होंने खुद ने गारन्टी ली है।

हक़ की स्त्री के साथ विषय सेवन के लिए भी 'ज्ञानीपुरुष' से आज्ञा लेकर बनाई गई नियम मर्यादा के अनुसार ही (महीने में दो, पाँच या सात दिन का) हो, तब जाकर धीरे-धीरे विषय कम होते-होते निर्मूल हो जाता है।

५. *अणहक्क* के विषयभोग, नर्क का कारण

'अक्रमविज्ञान' में विवाहितों के लिए 'ज्ञानीपुरुष' ने एक ही जोखिम बताया है कि 'जो लोकमान्य है, ऐसे हक़ के विषय को अक्रम मार्ग में निकाली बाबत के तौर पर मान्य किया है, लेकिन *अणहक्क* के विषय सेवन का, यानी परस्त्री या परपुरुषगमन का सर्वांश निषेध है। *अणहक्क* के विषय सेवन से ठेठ नर्कगति का अधिकारी बन जाता है। क्योंकि वकील यदि गुनाह करे तो वह भयंकर दंड का पात्र होता है, उसी प्रकार 'स्वरूपज्ञान' की प्राप्ति के बाद 'महात्मा' बना व्यक्ति *अणहक्क* के विषय सेवन से नर्कगति का पात्र बनता है। यदि कभी ऐसा दोष हो जाए तो 'ज्ञानीपुरुष' के सामने प्रत्यक्ष में आलोचना-प्रतिक्रमण-प्रत्याख्यान हो जाए, तो जोखिमदारी कुछ हलकी हो जाएगी और छूटा जा सकेगा। ऐसा दोष फिर यदि मन से या दृष्टि से भी हो जाए तो भी उसे नहीं चला सकते। फिर भी यदि ऐसा हो जाए तो 'ज्ञानीपुरुष' द्वारा दिया गया 'शूट ऑन साइट' प्रतिक्रमण करना आवश्यक है और साथ ही, ऐसा दोष हुआ उसके लिए दिल से पश्चाताप के साथ खेद, खेद और खेद रहना चाहिए।

६. विषय बंद वहाँ दखलंदाज़ी बंद

पत्नी के साथ क्लेशमय और कलहयुक्त व्यवहार का मूल कारण विषय ही है। उसमें स्त्री पुरुष को वश में नहीं करती, लेकिन पुरुष की विषय लोलुपता ही पुरुष को परवश बनाती है। स्त्री के साथ वीतरागी व्यवहार तभी संभव हो पाता है कि जब पुरुष विषयासक्ति में से छूट जाए। सच्चा पुरुष तो स्त्री के पास कभी भी विषय की याचना नहीं करेगा। यदि पुरुष स्त्री से विषय की याचना करे तो उसका प्रभाव स्त्री पर कभी नहीं पड़ता। संसार व्यवहार की गरज़ के बजाय विषय की गरज़ ही पुरुष को

अबला बना देती है। सिर्फ विषय के लिए स्त्री के सामने अबला हो जाना, उसके बजाय विषय को ही दूर न कर दें? उसमें फिर अहंकार करके भी उस विषय में से छूट जाना चाहिए। उस अहंकार से भले ही कर्मबंधन होता हो, लेकिन वह सभी मुसीबतों से छुड़वानेवाला होने के कारण परभव में ज़बरदस्त वैभव दिलवानेवाले पुण्यकर्म के रूप में फलित होता है। ऐसा अहंकार किया हो तो उस अहंकार या उसके परिणाम से छूटा जा सकता है, लेकिन विषयमोह या उसके परिणामों से छूटना अति-अति दुष्कर है। इसलिए एकबार अहंकार कर लेना चाहिए कि, 'चाहे कुछ भी हो जाए लेकिन विषय-विष को तो छूऊँगा ही नहीं' तब भी शायद उसका हल निकल जाए। अथवा तो जिसे 'विषय' की परवशता से छूटना है, वह अपने हृदय की उलझनें 'ज्ञानीपुरुष' से कहकर खाली कर दे, तो 'ज्ञानीपुरुष' स्व-पर हितकारी मार्गदर्शन दे कर आत्यंतिक कल्याण करवाते हैं।

विषय का जन्म आकर्षण में से होता है और बाद में नियम से आकर्षण विकर्षण में परिणमित होता है। और उसमें से फिर बैर बंधता है। बैर की नींव पर यह संसार खड़ा है, टिका हुआ है। उसमें भी यह विषय का बैर अत्यंत ज़हरीला होता है, अनंतकाल खराब कर दे उतना भयंकर है।

७. विषय, वह पाशवता ही

पुराने जमाने में, आज से सत्तर-अस्सी साल पहले सौ में से पाँच-सात लोग विषय में बिगड़ जाते थे। *अणहक्क* के विषय के लिए किसी विधवा को खोज निकालते, दूसरी नहीं। पंद्रह साल तक तो सभी लड़कियों के प्रति बहन जैसी दृष्टि ही रखते थे। दस-ग्यारह साल के होने तक तो गलियों में दिगंबर रहकर ही घूमते थे। माँ-बाप की किसी भी प्रकार की सीक्रेसी, तीन साल के बच्चे ने भी कभी नहीं देखी होती थी। बाप ऊपरी मंजिल पर और माँ नीचे सोती थीं। एक बैडरूम या डबलबेड जैसा कुछ था ही नहीं तब। तब तो कहावत थी कि 'जो मर्द सारी रात औरत के साथ सो जाए, वह अगले जन्म में स्त्री बन जाता है!' उसके पर्याय असर डालते हैं!

एक साल यदि प्रयोग करो, स्त्री संग से अलग रहने का, तो सुंदर प्रगति हो जाए।

विषय कैसी चीज़ है? कपटवाली। रात के अँधेरे में ही किया जाता है। सूर्य की मौजूदगी में करे तो हार्टफेल और ब्लडप्रेशर हो जाए। सारे ब्रह्मांड को कंपायमान कर दे ऐसा मनुष्यपन, फिर भी विषय में लथपथ होकर मनुष्य जानवर जैसा हो गया है।

कई लोग ब्रह्मचर्य का विरोध करते हैं और कहते हैं कि अब्रह्मचर्य तो कुदरती है, इसमें गलत क्या है? ब्रह्मचर्य का पालन क्या अकुदरती है? नहीं, ब्रह्मचर्य कुदरती है। सभी जानवर भी ब्रह्मचर्य का ही पालन करते हैं। उनका अब्रह्मचर्य किसी खास सीज़न तक ही सीमित रहता है। साल में पंद्रह-बीस दिनों तक ही रहता है, फिर कुछ भी नहीं होता।

एक व्यक्ति ने पूज्य दादाश्री से पूछा कि, 'यदि ब्रह्मचर्य व्याप्त हो जाएगा तो मनुष्यों की आबादी कम हो जाएगी जगत् में' तब परम पूज्य दादाश्री ने बताया, 'संतति नियमन के इतने सारे ऑपरेशन होते हैं, फिर भी आबादी बढ़ती ही चली जा रही है। जानवर भी विषय सेवन करते हैं लेकिन वह कुदरती है, सीज़नल ही है और इनका तो सुबह-शाम यही धंधा। विषय की भीख माँगता है? शरम नहीं आती?'

पति-पत्नी में जहाँ विषय ज़्यादा होता है, वहाँ बहुत क्लेश और कलह होते हैं।

जो ब्रह्मचर्य में आ गया, वह देवस्थिति में आ गया। वह मनुष्यों में देवता! शीलवान हुआ।

८. ब्रह्मचर्य की क़ीमत, स्पष्टवेदन और आत्मसुख

जब हक़ की स्त्री के साथ का विषय व्यवहार छूटने लगे, तब आत्मविज्ञान सूक्ष्म रूप से समझ में आता है। परिणाम स्वरूप जागृति वर्धमान होने से अत्यंत भारहीन मुक्त दशा अनुभव में आती है। और तब खुद का स्व-आत्मानंद निरंतर स्पष्ट अनुभव में रहा करता है। लेकिन 'विषय

में सुख है' ऐसा अनादि का अभ्यास तो तभी छूटेगा, जब उस सुख से बेहतर, आत्मसुख को चखेगा। तब चित्तवृत्ति बाहर विषय में सुख खोजना बंद कर देगी और निजघर में वापस आकर निजसुख में लीन हो जाएगी। वह आत्मसुख, आत्मा का स्पष्टवेदन 'स्वरूप ज्ञानप्राप्ति' के बाद क्यों रुका हुआ है? स्वयं क्रियाकारी विज्ञान प्राप्त होने के बावजूद आत्मा की अनंत समाधि का अनुभव क्यों रुका हुआ है? सिर्फ विषय दोष के कारण ही। सिर्फ यदि विषय पर काबू आ जाए तो सारे अंतराय दूर हो जाएँ। 'ज्ञानीपुरुष' विवाहितों को ऐसे प्रयोग बता देते हैं कि 'स्पष्टवेदन' तक के सारे अंतराय टूट जाएँ।

जब तक *पुद्गल* में से कुछ भी सुख प्राप्त करने की नीयत रही हुई है, तब तक आत्मसुख का स्पर्श संभव नहीं है और जब विषय में से सुख प्राप्त करना बिल्कुल बंद हो जाए, तब आत्मसुख का स्पष्टवेदन अनुभव में आता है। 'यह आत्मा का ही सुख है' ऐसे स्पष्टवेदन के अनुभव के लिए, विवाहितों को कम से कम छः महीनों के लिए विषय बंद करना ज़रूरी है और उसके लिए 'ज्ञानीपुरुष' से छः महीने की 'व्रतविधि' करवा लेनी चाहिए। छः महीने आज्ञापूर्वक विषय बंद हो जाए, तो वे वृत्तियाँ जो विषय के प्रति झुकी हुई थीं, उन्हें स्वसुख की ओर मुड़ने का अवकाश प्राप्त होता है और एकबार स्वसुख चखने के बाद वृत्तियाँ विषय की ओर से वापस मुड़ जाती हैं। लेकिन क्या वृत्तियों को ऐसा अवकाश कभी मिला है? किस जन्म में विषय भोग नहीं किया?

९. लेना व्रत का ट्रायल

आत्मज्ञान के बाद आत्मा के सुख का स्पष्ट रूप से अनुभव करना हो तो ब्रह्मचर्य आवश्यक है। सुख विषय का है या आत्मा का है? उन दोनों के बीच डिमार्केशन हो पाएगा। मिलावटी सुख नहीं चलेगा।

ग्रहस्थ जीवन में भी ब्रह्मचर्य का पालन हो सकता है। दोनों समझकर ज्ञानी से व्रत ग्रहण कर लें, तो क्या नहीं हो सकता? इस जन्म में ब्रह्मचर्य की भावना करते रहें तो अगले जन्म में सहज रूप से ब्रह्मचर्य का पालन हो सकेगा। भावना, वह बीज है और अमल, वह परिणाम है।

पूज्यश्री से ब्रह्मचर्यव्रत ग्रहण करने के बाद मोक्षार्थियों को जो अनुभव हुए हैं, उसका वर्णन हो पाए, ऐसा नहीं है। वह तो खुद अनुसरण करने पर ही पता चलेगा।

ब्रह्मचर्य के पालन का निश्चय होते ही वीर्य का ऊर्ध्वीकरण शुरू हो जाता है।

विषय के लिए ही 'बिवेयर-बिवेयर' के बोर्ड लगे हुए हैं। साल भर के लिए ब्रह्मचर्यव्रत लेकर देखे तो अनुभव होगा। वह तो विधि करवानेवाले की शक्ति ही काम करती है! लेकिन वह ज्ञानी की आज्ञासहित होना चाहिए। प्रतिक्रमण से ब्रह्मचर्य में टेस्टेड हो जाता है।

ब्रह्मचर्य या अब्रह्मचर्य का जिसे अभिप्राय नहीं रहा, उसे ब्रह्मचर्यव्रत बरता, ऐसा कहा जाएगा। जिसे अब्रह्मचर्य याद तक नहीं आए, उसे ब्रह्मचर्य महाव्रत बरतता है, ऐसा कहा जाएगा।

टुकड़े-टुकड़े करके, यानी कि छः महीने तक विषय बंद करके, फिर से बारह महीनों के लिए आज्ञापूर्वक बंद रखे, फिर थोड़े समय रुककर दो साल के लिए व्रत ले, ऐसा करते-करते चार-पाँच बार में साल-दो साल तक विषय बंद रहे तो उसका विषय हमेशा के लिए छूट जाएगा। क्योंकि जितना विषय से दूर रहा, उसका परिचय छूटा वैसे-वैसे विषय विस्मृत होता जाएगा। यानी प्रसंग-परिचय का छूटना ही आवश्यक है। लेकिन उसके लिए हिम्मत करके एक बार ऐसे दृढ़ निश्चय के साथ कूद जाना पड़ेगा, उसके बाद फिर 'ज्ञानीपुरुष' की वचनसिद्धि का अनुभव हो सकेगा, ऐसा है। फिर आत्मा का स्पष्टवेदन भी अनुभव किया जा सके, ऐसा है। एक विषय का त्याग करने से, सामने उसके बदले में कितनी बड़ी सिद्धि प्राप्त होती है! वर्ना अनंत जन्मों में विषय की आराधना की, इसके बावजूद क्या परिणाम आया? विषय ने तो आत्मवीर्य का हनन किया है और देह का नूर भी निचोड़ लिया। सबसे बड़े आत्मशत्रु को साथ में लेकर सो गए, यह तो कैसी भयंकर भूल? इस भूल को मिटाने के लिए एक बार पति-पत्नी दोनों को 'ज्ञानीपुरुष' के पास प्रत्यक्ष में ब्रह्मचर्यव्रत, भले ही मियादी

ले पाओ तो मियादी लेना, लेकिन समझकर व्रत ले लें तो वापस लौटने का चान्स रहता है वर्ना विषय तो, अंत तक छूटे, ऐसा है ही नहीं।

व्रत लेने के बाद व्रत के रक्षण हेतु पहले से ही जागृति रखना हितकारी है। एकांत शैयासन और स्पर्शदोष तक से रहित व्यवहार इस व्रत का रक्षण करता रहता है एवं 'ज्ञानीपुरुष' से प्रतिदिन दस-पंद्रह मिनट ब्रह्मचर्य व्रत में रहने की शक्तियाँ माँगते रहने से बल मिलता रहता है। खुद का निश्चय और 'ज्ञानीपुरुष' का वचनबल, उनकी विधि और उनके आशीर्वाद जो कि कल्पनातीत शक्तियाँ प्रकट करानेवाले हैं। इसमें खुद का तो मात्र दृढ़ निश्चय और निश्चय के प्रति सिन्सियारिटी चाहिए, बाकी का सब काम तो 'ज्ञानीपुरुष' का वचनबल ही कर देता है। उस अद्‌भुत 'व्रत-विधि' के परिणाम तो वही जाने जिसने 'व्रत-विधि' प्राप्त की है।

१०. आलोचना से ही जोखिम टलें व्रत भंग के

संयोगवश किसी से व्रतभंग हो जाए तो? उसके भयंकर जोखिम हैं, भयंकर नर्कगति के जोखिम खड़े हो जाते हैं। जान-बूझकर, नीयत बिगाड़ी इसीलिए तो व्रतभंग हुआ न? फिर भी करुणामय 'ज्ञानी' तो ऐसे व्रतभंग करनेवालों को भी, उनके द्वारा सच्चे दिल से तुरंत की हुई आलोचना-प्रतिक्रमण और प्रत्याख्यान से व्रतभंग के दोष से छुड़वा देते हैं। लेकिन इससे किसी को व्रतभंग की छूट नहीं मिल जाती। यह उपाय तो व्रतरक्षा की संपूर्ण सावधानी रखने के बाद भी 'एक्सीडेन्ट' हो जाए तब करना है। बाकी जो जान-बूझकर टकराए उसका क्या करें? 'ज्ञानीपुरुष' भी पात्रता देखकर ही माफ़ी देते हैं न? हृदयपूर्वक किए गए पश्चाताप और दृढ़ता से पुनः निश्चय करके, खुद की भूल मिटाने का उसका पुरुषार्थ और शुद्ध नीयत देखकर ही 'ज्ञानी' फिर से 'विधि' करके, उसे दोष में से छुड़वाते हैं! जो किसी भी चीज़ के कर्ता नहीं हैं, ऐसे 'ज्ञानीपुरुष' कुछ भी कर सकते हैं।

'अक्रमविज्ञान' एकावतारी या दो अवतारी पद की प्राप्ति करानेवाला होने के कारण, विषय यदि पूर्णरूप से नहीं छूट सके तो विषय से सर्वांश

छूटना ही है ऐसी भावना सतत करता रहे, प्रत्येक दोष का खूब पछतावा करे, हक़ के विषय के भी प्रतिक्रमण करता रहे तो अगले जन्म में स्त्री परिग्रह से मुक्ति का उदय आएगा। जिन्हें इस अद्‌भुत 'अक्रमविज्ञान' का संपूर्ण लाभ उठाकर इसी जन्म में आत्मा के स्पष्टवेदन तक की दशा प्राप्त करनी हो, उन्हें तो फिर 'ज्ञानीपुरुष' से समझकर ब्रह्मचर्यव्रत की आज्ञा-विधि प्राप्त कर लेनी पड़ेगी। जहाँ खुद का दृढ़ निश्चय और 'ज्ञानीपुरुष' का वचनबल, ये दोनों साथ हों तो वहाँ पर अवश्य निर्विघ्न रूप से सिद्धि प्राप्त होगी ही। मात्र खुद के निश्चय के प्रति दृढ़ता से 'सिन्सियर' रहना पड़ेगा। उसमें ज़रा सी भी पोल नहीं चलेगी। यह तो निश्चय करने में ही पोल (ढीलापन, दानतखोरी) रहती है कि, 'ये सभी तो अक्रमज्ञान में रहते हैं और विषय भी भोगते हैं, तो इसमें हर्ज क्या है? हमें व्रत की क्या ज़रूरत? 'ज्ञान' तो मिल ही गया है, निपटारा तो हो ही जाएगा न, फिर विषय में क्या हर्ज है? विषय तो 'डिस्चार्ज' है न, इसलिए छूटेगा ही नहीं न? अंतिम जन्म में ब्रह्मचर्य पालन करेंगे, तब भी क्या मोक्ष रुक जाएगा? आपके स्थूल विषय भले ही न छूटें, लेकिन आपकी भावना तो ब्रह्मचर्य पालन की ही है न? फिर कोई तकलीफ नहीं आएगी।' ऐसे बुद्धि अंदर ही अंदर तरह-तरह की 'पोल' दिखा-दिखाकर खुद की प्रगति को रूंधनेवाले आवरण खड़े कर देती है। अतः बुद्धि का एक भी अक्षर सुने बगैर, 'ज्ञानीपुरुष' किस दृष्टि से बात को समझाना चाहते हैं, उसे 'एक्ज़ेक्टनेस' में समझकर, सही अर्थ में खुद के निश्चय पर अडिग रूप से 'सिन्सियर' रहेगा तभी विषय को जीत पाएगा, और तभी ये जो 'ज्ञानीपुरुष' मिले हैं, उसमें खुद का काम निकल जाएगा।

अब, एक ही बार किया गया विषय सेवन महीनों तक ध्यान कि एकाग्रता की स्थिरता में बाधक सिद्ध होता है। तो जिसे *पुद्‌गल* ध्यान में से छूटकर आत्मध्यान में ही लीन होना है, उनके लिए मात्र विषयसेवन ही सबसे अधिक बाधक है और जिन्हें ऐसा एक ही ध्येय और निश्चय बरतता है कि मोक्ष के सिवाय और कुछ भी नहीं चाहिए, उनके लिए विषय जो कि पुद्‌गल स्पृहा, पुद्‌गल रमणता ही है, वही सबसे बड़ा अंतराय बन जाता है। अतः भावना ब्रह्मचर्य की हो, ध्येय शुद्धात्मा का और *नियाणां*

मोक्ष का हो तो फिर उसे मोक्ष में जाने तक निरंतराय पद सहज रूप से बरते, वैसे ही संयोग मिलते हैं। बाकी, विषय के वश में तो अनंत जन्मों तक बर्ते हैं, उसमें एक ही जन्म स्वरूपज्ञान की जागृति समेत, विषय से छूटने में बीते तो अनंत जन्मों की कमी पूरी हो जाएगी।

लोकसंज्ञा के अनुसार जीनेवाले जगत् को जो प्रिय है, ऐसे इस विषय में ही अनंत जन्मों तक डूबकर, उसकी *गारवता* में मौज मनाई, लेकिन परिणाम स्वरूप निज आत्मऐश्वर्य, आत्मवैभव और आत्मसिद्धि खो दी, इतना ही जन्मों जन्म के सार के रूप में प्राप्त हुआ है। फिर विषय के प्रति वैराग्य लानेवाले शास्त्रों का पठन या विषय जीतने के लिए व्यर्थ कसरतें करने की ज़रूरत नहीं रहती। सिर्फ अनंत जन्मों का लेखा-जोखा 'जैसा है वैसा' दिखाई दे जाए तो विषय के प्रति सहज ही वैराग्य बरतेगा! संसार का मूल बीज विषय है, जिसका निर्मूलन होने पर संसार अस्त हो जाता है। सिर्फ विषय को जीतने से पाँचों महाव्रत आसानी से सिद्ध हो जाते हैं। संसार की वृद्धि करनेवाले और संसार में डूबोकर रखनेवाले निमित्त, 'ब्रह्मचर्य' द्वारा आसानी से गायब हो जाते हैं। परिणाम स्वरूप अपरिग्रही दशा साधी जा सकती है। विषय में कपट, असत्य, चोरी और विषय की वजह से होनेवाली भयंकर जीवहिंसा है-शुद्ध ब्रह्मचर्य पालन द्वारा इन सभी जोखिमदारियों से आसानी से मुक्त हो जाते हैं। ब्रह्मचर्य की ऐसी अद्‌भुत सिद्धि को समझने के बाद कौन उसे लुटाएगा?!

११. चारित्र्य का प्रभाव

क्रमिक मार्ग में या फिर अक्रम मार्ग में, लेकिन चारित्र की नींव ही मोक्षपंथ का आधार है। जो चारित्र से स्ट्रोंग हो गया, वह जगत् जीत गया। अन्यथा विषय ने जिसे जीत लिया, वह जगत् हार गया। इसलिए ब्रह्मचर्य साधने के लिए तो सिर्फ ब्रह्मचर्य का परिणाम, और अब्रह्मचर्य के जोखिमों को सिर्फ समझना ही है। 'चारित्र' में लाने के लिए कुछ भी नहीं करना है। 'चारित्र' से संबंधित ज्ञान चारों ओर से समझ में फिट कर लेना है, परिणामतः उसका निश्चय ही उस वस्तु को वर्तना में लाता है!

लेकिन उस 'ज्ञान' की गेड़(अच्छी तरह समझ में आना) तो 'प्रत्यक्ष ज्ञानीपुरुष' ही बिठा सकते हैं।

जिसे संसार के सर्व बंधनों से मुक्त ही होना है, मोक्ष में ही जाना है, उसे सर्व बंधनों से मुक्त होते-होते, विषय बंधन जो कि संसार के सर्व बंधनों का मूल है, उससे छूटना ही पड़ेगा। दो प्रकृतियाँ कभी भी एक नहीं हो सकतीं। *पुद्गल* का आकर्षण कभी भी *पुद्गल* की ओर से आत्मा की ओर नहीं जाने देता। आत्मरूप रहकर, ऐक्य-अभेदता सिद्ध करके अनंत आत्माओं ने मोक्ष पाया है, लेकिन दैहिक एकता साधकर कोई कभी अल्पसिद्धि प्राप्त कर सका हो, ऐसा कभी भी संभव नहीं है। वीतरागों द्वारा बताए गए एकांत शैयासन के पंथ पर ही विचार करने योग्य है। ऐसा भाव, ऐसा निश्चय एक दिन अवश्य ही वीतरागता प्रकट कराएगा।

खंड:२

आत्मजागृति से ब्रह्मचर्य का मार्ग

१. विषयी स्पंदन, मात्र जोखिम

जैसे-जैसे विषय का स्वरूप पूर्ण रूप से समझ में आता जाए, उसके जोखिमी परवशतामयी परिणाम समझ में आते जाएँ, उससे होनेवाली आत्मिक और अध्यात्मिक हानि अनुभव में आती जाए, तब विषय में से वापस लौटने की तैयारी होती है। फिर जब 'विषय में सुख है' यह अभिप्राय टूटा, तभी से विषय में से छूटने की भावनाएँ जागती हैं। जब 'विषय में से खुद को छूटना ही है', ऐसा दृढ़ निश्चय होता है, तब फिर दिशा तय होती है और विषय दोषों के समक्ष छूटने की जागृति बढ़ती जाती है। वह जागृति निरंतर विषय-विकार परिणाम से जूझती रहती है और विषय के एक-एक विचार को उखाड़कर फेंक देती है। अंकुर फूटने से पहले ही प्रत्येक कोंपल को उखाड़कर फेंक दिया जाए, तभी विषयबीज का सर्वांश निर्मूलन होता है। वर्ना यदि अंकूर फूटते ही उखाड़ा नहीं जाए तो फिर काबू में नहीं रहता। फिर उसे बढ़कर वृक्ष बनते देर नहीं लगती और उसके

फल कि जिनसे असंख्य बीज डल जाएँ ऐसे हैं, वैसे असंख्य जोखिम खड़े हो जाते हैं! इसलिए विषय-कोंपल को तो अंकुर फूटने से पहले ही उखाड़ लेना चाहिए। यानी क्या कि विषय का विचार आए या दृष्टि ज़रा सी भी खिंचे या दृष्टि बिगड़ने लगे, उससे पहले ही जागृति हाज़िर रखकर और 'थ्री-विज़न' के उपयोग करके तथा सामनेवाले के शुद्धात्मा के दर्शन से 'देखतभूली' टालने का पुरुषार्थ प्रारंभ करना है। मन और वृत्तियों का दोष होते ही उस घड़ी स्वच्छ रखने का 'ज्ञानीपुरुष' का प्रतिक्रमण का अद्भुत प्रयोग सदा जागृत रखना पड़ेगा। फिर बाद में उन-उन दोषों को और विषयग्रंथि को दिनभर में कभी भी सामायिक-प्रतिक्रमण के प्रयोग से साफ करते-करते परिणाम स्वरूप निर्ग्रंथ दशा उत्पन्न होगी, ऐसा यह 'अक्रमविज्ञान' है!

'अक्रमविज्ञान' से उत्पन्न होनेवाली जागृति पूर्वक वाले, 'थ्री विज़न' की दृष्टि से देखते ही मोहदृष्टि विलय हो जाती है। इसमें फर्स्ट विज़न में नेकेड दिखाई देता है, दूसरे ही सेकन्ड में, सेकन्ड विज़न में त्वचा रहित अंग दिखाई देते हैं और तुरंत उसके बाद के सेकन्ड में कटा हुआ, चिरा हुआ शरीर दिखाई देता है, जिसमें हाड़-माँस, काटी हुई आंतें, खून-विष्ठा आदि दिखने लगते हैं। वहाँ पर फिर एक क्षण के लिए भी मोहदृष्टि खड़ी रहेगी क्या?

२. विषय भूख की भयानकता

जिन्हें 'अक्रमविज्ञान' की प्राप्ति हुई है, उनके लिए 'देखतभूली' टालने का रास्ता खुल गया है। दृष्टि बिगड़ते ही प्रतिक्रमण और शुद्ध उपयोग से सब साफ कर देना है। वर्ना जो किसी काल में उपलब्ध नहीं हो, ऐसे इस अद्भुत 'अक्रमविज्ञान' को भी क्षणभर में हिला कर रख दे, 'देखतभूली' का यह दोष ऐसा है। इसलिए वहाँ अत्यंत सावधान रहना है। किंचित् मात्र भी गफलत वहाँ पर नहीं चला सकते। बाकी पॉइज़न की आज़माइश तो नहीं ही होती न? उसे तो पीने से पहले फेंक देने पर ही छुटकारा मिलेगा!

क्रमिक मार्ग का ब्रह्मचर्य और अक्रम मार्ग का ब्रह्मचर्य, इनमें से

क्रमिक मार्ग में नौ-बाड़ के कड़े पालन के साथ लक्ष्मी, गृह, स्त्री-पुत्रादि का त्याग करके, अहंकार करके वृत्तियों को विषय में से मोड़ने की प्रक्रिया है जबकि अक्रम मार्ग में किसी का भी निरोध नहीं है, मन का भी नहीं। केवल 'अक्रमविज्ञान' से मन के सारे विकारी परमाणुओं को विशुद्धि में विपरिणमित होने देना है। इस मार्ग में मुख्य लाभ तो यही होता है कि 'खुद' को 'आत्मपद' की प्राप्ति होने से अहंकार भाव छूट जाता है। फिर मन-वचन-काया की सारी अशुद्धियों को ज्ञान से पिघलाना होता है। अहंकार करके पालन किया गया ब्रह्मचर्य अत्यंत उपकारी है, फिर भी वह वैज्ञानिक तरीका नहीं कहलाता। क्योंकि उसमें ब्रह्मचर्य पालन करनेवाला वह 'खुद' ही है। जबकि वैज्ञानिक तरीके में तो 'खुद' रियल स्वरूप में रहता है, ज्ञाता-दृष्टा रहता है और 'रिलेटिव' भाग ब्रह्मचर्य का कैसा पालन करता है, उसे 'खुद' 'जानता' है। अक्रम मार्ग में यह विज्ञानमयी दृष्टि खुली होने की वजह से ब्रह्मचर्य का यथार्थ रूप से पालन किया जा सकता है और 'खुद' अपने स्व-स्वभाव में भी एक्ज़ेक्ट रह सकता है! आत्मज्ञान सहित पालन किया गया संपूर्ण शुद्ध ब्रह्मचर्य ही आत्यंतिक कल्याणकारी सिद्ध होता है।

परम पूज्य दादाश्री के एक घंटे के ज्ञान प्रयोग में ज्ञानाग्नि से तमाम पाप भस्मीभूत होकर वृत्तियाँ निज घर की ओर वापस लौटती हैं। अशुद्ध चित्त शुद्धता प्राप्त करके खुद 'शुद्ध चिद्रूप' शुद्धात्मा बनता है। फिर जो 'विषय' बचता है, वह 'डिस्चार्ज' भाग का है। पूर्व जन्म में जो उल्टी मान्यता थी कि 'विषय में सुख है', उसके कारण पैदा होनेवाले अभिप्राय के आधार पर वह आसक्ति टिकी रहती है। लेकिन जैसे जलेबी खाने के बाद चाय फ़ीकी लगती है, वैसे ही 'ज्ञानीपुरुष' से 'स्वरूपज्ञान' प्राप्ति के बाद विषय सुख फ़ीके लगते हैं। लेकिन विषय से संबंधित 'रोंग बिलीफ' सर्वांश रूप से खत्म नहीं होने के कारण विषय टिका रहता है। 'ज्ञानीपुरुष' के वचन ही उन उल्टी मान्यताओं को खत्म करनेवाला एक मात्र ऐसा ज़बरदस्त हथियार है कि जिसके बगैर उल्टी मान्यताओं का टूटना असंभव है। 'रोंग बिलीफ' खत्म हुई कि अभिप्राय भी खत्म होने लगते हैं। जैसे-जैसे अभिप्राय खत्म होते जाते हैं, वैसे-वैसे मन भी विषय के प्रति विरक्त

होता जाता है। मानसिक दोष भी आज्ञापूर्वक किए गए प्रतिक्रमणों से साफ होते जाते हैं और चित्त निर्मल और मुक्त रहने लगता है। जागृति उत्पन्न होकर वर्धमान होती जाती है, जिसकी वजह से विषय विचार या चित्त के दोष पकड़ में आते हैं और प्रतिक्रमण द्वारा वे शुद्धि में परिणामित होते हैं। विषय दोषों के सामने तीव्र जागृति उत्पन्न होना, वह 'अक्रमविज्ञान' की अद्‍भुत भेंट है।

अब्रह्मचर्य का अभिप्राय ही अब्रह्मचर्य में जकड़े रखता है। 'ज्ञानीपुरुष' के परिचय से सूक्ष्मातिसूक्ष्म रूप से अब्रह्मचर्य का अभिप्राय खत्म हो जाता है और ब्रह्मचर्य का अभिप्राय फिट हो जाता है। जब ब्रह्मचर्य का निश्चय यथार्थ रूप से पकड़ में आ जाए, तभी से ग़ज़ब का सुख छलकने लगता है, वह सुख ही विषय सुख की उल्टी मान्यताओं को छुड़ानेवाला सिद्ध होता है। उसमें भी जो 'ज्ञानीपुरुष' द्वारा बताई गई ब्रह्मचर्य की चाबियाँ पुरुषार्थ हेतु प्रयोग में लाना सीख जाए, उसकी तो हर तरह से 'सेफसाइड' हो जाती है। ऐसी सभी चाबियाँ, स्थूल प्रसंगों से लेकर आंतरिक सूक्ष्म उदयों में से किस तरह निर्लेप रहकर बाहर निकला जाए और अपने ध्येय को पकड़े रहें, सिर्फ इतना ही नहीं लेकिन ध्येय स्वरूप हो जाने के लिए आवश्यक सर्व वैज्ञानिक वाणी यहाँ पर संकलित हुई है!

'विषय में सुख है' यह 'रोंग बिलीफ' इतनी गाढ़ हो गई है कि उसके निमित्त मिलते ही वह 'रोंग बिलीफ' हाज़िर हो जाती है, और उसमें तन्मयाकार कर देती है। 'विषय में सुख है', इस बात की 'रोंग बिलीफ' जहाँ-जहाँ, जिस-जिस प्रकार से बैठी हो, उसके साधनों संबंधित जिस प्रकार से 'रोंग बिलीफ' बैठी हो, उन सभी को, एक-एक को जागृतिपूर्वक मूल से पहचानकर, 'सामायिक प्रयोग' में लेकर, ज्ञान द्वारा, 'थ्री-विज़न' की जागृति से बदलना है। जब तक यह 'रोंग बिलीफ' मूल में से नहीं जाएगी, तब तक विषय का आकर्षण सहजरूप से रहेगा ही। अत: आकर्षण को नष्ट करने के लिए उसके 'रूट कॉज़' रूपी बिलीफ को ही सर्वांश रूप से निर्मूलन करने का पुरुषार्थ रखना आवश्यक हो जाता है!

३. विषय सुख में दावे अनंत

सारा जगत् विषय में सुख मानता है। सिर्फ ब्रह्मचारी और समकिति देवगण ही विषय में नहीं मानते।

खाने-पीने में और अन्य किसी में सुख खोजे तो उसे चलाया जा सकता है, लेकिन विषय में तो निरी गंदगी ही है, उसमें क्या सुख है? सिर्फ इतना ही छोड़ने जैसा है, वर्ना वह 'फाइल' के रूप में मोक्ष में जाने में रुकावट डालेगा।

विषय, वह जीवंत परिग्रह है। फिर मिश्र चेतन दावा करता है। बैर भी बाँधता है। इसलिए सावधान, पूरी ज़िंदगी उसका गुलाम होकर रहना पड़ेगा। दो मन एकाकार हो ही नहीं सकते। इसलिए आमने-सामने दावे, अपेक्षाएँ आदि शुरू हो ही जाते हैं। एक ही बार जिसके साथ विषय भोग किया हो, उसके पेट से जन्म लेना पड़ता है। क्या जलेबी दावा करेगी, यदि उसे खाना बंद कर दें तो?

राग से विषय भोगता है और जब उसका परिणाम आता है तब द्वेष आकर खड़ा रहता है। राग से जो लपेटा गया, वह द्वेष से खुलता है और निरा बैर बाँधता है। अतः जिस व्यक्ति के साथ मन बंध गया हो, उसके खूब प्रतिक्रमण करो और उसीके शुद्धात्मा से ब्रह्मचर्य की शक्ति माँगते रहना कि विषय से मुक्त कीजिए।

विषय से बैर बँधता है और जन्मोंजन्म तक बढ़ता ही रहता है। दूसरे बीज पड़ते ही रहते हैं, पड़ते ही रहते हैं। उन्हें भूनने की चाबी जान जाएँ, तभी छूट पाएँगे। बीज कैसे भूने जाएँ? प्रतिक्रमण द्वारा, विषय का जो जो सुख लिया, वह लोन पर लिया जाता है उसे 'रीपे' करना ही पड़ता है और 'रीपे' करते समय दुःख भुगतना ही पड़ता है। अतः आत्मा में से ही सुख लेने जैसा है, ऐसी बिलीफ तो फिट कर लो।

४. विषय भोग, नहीं है *निकाली*

अक्रमज्ञान प्राप्त करने के बाद एकावतारी होना हो तो भीतर सतर्क

रहना पड़ेगा। 'मैं शुद्धात्मा हूँ', जिसके लक्ष्य में यह निरंतर रहता है, वह सबसे बड़ा ब्रह्मचर्य है। विषय कोई शौक़ की चीज़ नहीं है, निकाल करने जैसी चीज़ है। ब्रह्मचर्यव्रत होगा तो जल्दी हल आएगा।

जिसे एकावतारी होना है, उसे विषय में एक सेन्ट (प्रतिशत) भी रुचि नहीं होनी चाहिए। पुलिसवाला मार-पीटकर मांस खिलाए, वैसा रहना चाहिए। ज्ञानी जगत्‌निष्ठा में से ब्रह्मनिष्ठा में बिठा देते हैं। उसके लिए ज्ञानी से ज्ञान प्राप्त करना पड़ता है। खरा आनंद तो सच्चा ब्रह्मचर्य हो, तभी आ पाएगा। यदि शादीशुदा हों तो दोनों की मर्ज़ी से ब्रह्मचर्य होना चाहिए, न कि तिरस्कार करके।

उदयकर्म से विषयभोग किया, ऐसा कब कहलाएगा? पुलिसवाला तीन दिनों तक भूखा रखकर मार-पीट कर मांस खिलाए, उसे उदयकर्म कहा गया है। यह तो राज़ी-खुशी से विषय भोगते हैं, उसे उदयकर्म कैसे कहा जाएगा? वह पोल (जानबूनझकर,लापरवाही और ढीलापन) कहलाएगी, वहाँ पह कर्म चार्ज होगा ही।

जिस-जिस विषय की गाँठ टूटेगी, उस-उस विषय पर खुलेआम व्याख्यान दिया जा सकेगा। अंदर ज़रा सी भी पोल नहीं चलेगी। वर्ना उससे खुद का और बाकी, सभी का बिगड़ेगा।

एक बार विषयभोग कर ले तो मनुष्य तीन दिनों तक ध्यान में स्थिर नहीं रह सकता। वीतरागों का धर्म, वह विलासियों का धर्म नहीं है।

डिस्चार्ज किस भाग को कहते हैं? चलती ट्रेन में से गिर पड़ें उसे।

ब्रह्मचर्य से संबंधित ज्ञान जानकर रखना। फिर जब वह बिलीफ में आएगा, उसके बाद विषय खत्म हो जाएगा।

अक्रमविज्ञान में हक़ के विषयों की छूट दी गई है, क्योंकि एक जन्म का सबकुछ डिस्चार्ज है। लेकिन फिर अन्यत्र दृष्टि नहीं बिगड़नी चाहिए। अन्यत्र बिगड़ेगी तो चार्ज हो ही जाएगा। भगवान के ताबे में रहना छोड़कर कहीं विषय के ताबे में तो फँस नहीं गए हो न?

विषय में से छूटने के बाद शुद्धात्मा पद में ज़्यादा रहा जा सकता है। हक़ के विषय में एतराज़ नहीं है, लेकिन वह भी नियम से होना चाहिए।

५. संसारवृक्ष की जड़ विषय

जहाँ विषय है वहाँ कषाय, टकराव और द्वेष हैं।

विषय और कषाय में मूल अंतर क्या है?

विषय पिछले जन्म का परिणाम है और कषाय वह अगले जन्म का कारण है।

क्रमिक मार्ग में विचार करके आत्मा प्राप्त करता है। निरंतर एकसमान विचारधारा रहती है, जिससे कर्म खपते हैं, उसके विचार ज्ञानाक्षेपकवंत होते हैं।

विषय को नो-कषाय (नहीं के बराबर कषाय) में रखा गया है, क्योंकि क्रोध-मान-माया-लोभ विषय में नहीं आते। फिर भी ब्रह्मचर्य को महाव्रत में रखा गया है। कषाय कॉज़ेज़ हैं और विषय इफेक्ट हैं। अत: बड़ा दोष कषाय का है।

६. आत्मा अकर्ता-अभोक्ता

वैज्ञानिक दृष्टि से आत्मा सूक्ष्मतम है और विषय स्थूल है। सूक्ष्मतम स्थूल को कैसे भोग सकता है? अत: आत्मा ने कभी विषय भोगा ही नहीं। अहंकार सूक्ष्म है और विषय स्थूल है, इसलिए अहंकार भी विषय को नहीं भोग सकता। अहंकार केवल भ्रांति से मानता है कि मैंने विषय भोगा। उससे भयंकर *भोगवटा* आता है। गीता में कहा है, 'विषय विषय को भोगते हैं', जबकि आत्मा तो त्रिकाल शुद्ध ही है।

७. आकर्षण-विकर्षण का सिद्धांत

आकर्षण होता है *पुद्गल* को, वह लोहचुंबक और आलपिन जैसा है। बाकी, आत्मा ने कभी विषय भोगा ही नहीं।

विषयों में निडर यानी स्वच्छंदी। 'मुझे दादा का ज्ञान मिला है, अब विषय बाधक नहीं है', ऐसा कहा कि भयंकर प्रकार से लुढ़क गया। यही निडरता है और यही विष है। अत: दुरुपयोग हुआ। अक्रमविज्ञान हर तरह से निर्भय बनानेवाला है लेकिन विषय में निर्भय नहीं होना है, वहाँ पर जागृत रहना है। हक़ के विषय की ही छूट है, अन्यत्र नहीं। विषय में कपट करना, अन्य सबकुछ करना वह विष ही है न?

परम पूज्य दादाश्री अत्यंत करुणा से कहते हैं, 'ऐसा ज्ञान मिलने के बाद यदि आप मुक्त नहीं होते, तो कब छूट पाओगे? ये सभी है और उसमें से छूटना है। अत: काम निकाल लो। हम आपका काम निकलवाने बैठे हैं।' ज्ञानी के पास बैठकर यदि ज्ञानी जैसे नहीं हो पाएँ तो उसमें किस का कसूर?

ज्ञानीपुरुष निरंतर द्रव्य-क्षेत्र-काल-भाव से अप्रतिबद्ध रूप से विचरते हैं। उन्हें देखकर सीखना है।

'अक्रमविज्ञान' स्त्री-पुरुष के आकर्षण के बारे में क्या कहता है? लोहचुंबक लोहे को आकर्षित करता ही है, ऐसा परमाणुओं का स्वभाव है। उसी प्रकार स्त्री-पुरुष के परमाणु एक दूसरे को आकर्षित करते हैं। खुद ने नहीं खिंचने का तय किया हो फिर भी खिंच जाता है, तो यह क्या सूचित करता है कि इसमें अब 'खुद' का चलन नहीं है। कोई परसत्ता यानी मेग्नेटिक फोर्स खींच रहा है। पूर्वजन्म के 'चार्ज' हुए परमाणुओं के कारण जब स्त्री-पुरुष आमने-सामने 'फील्ड' में आते हैं, तब परमाणु खिंचते हैं। तब खुद मानता है कि, 'मैं खिंच गया, मुझे अभी भी आकर्षण होता रहता है।' वास्तव में इसमें परमाणु खिंचते हैं। उनमें यदि 'मैं' तन्मयाकार नहीं होता, तो परमाणु इफेक्ट देकर सहज स्वभाव से डिस्चार्ज होकर निर्जरित हो जाते हैं। लेकिन विज्ञान की ऐसी वास्तविकता नहीं समझने के कारण 'खुद' को मान्यता की आँटी रहती है और मिठास की लालच के कारण खुद इफेक्ट में एकरूप हुए बगैर नहीं रह पाता। परिणाम स्वरूप नया 'चार्ज' करता है। उसमें भी यदि 'आत्मज्ञान' की जागृति रहे तो वह तुरंत ही प्रतिक्रमण करके वापस आत्मभाव में आ जाए तो

परमाणुओं के असर से छूट जाता है और फिर 'खुद' प्रकृति के परिणामों के लिए जोखिमदार नहीं रहता।

अवस्था दृष्टि से आकर्षण का उद्भव होता है और तत्वदृष्टि से वीतरागता उत्पन्न होती है। अवस्था में तन्मयाकार होने पर ही अंदर चुंबकत्व उत्पन्न होता है और उसे फिर स्वभाव से ही आकर्षण होने लगता है। अत: जब 'दृष्टि' बदलेगी, तभी चुंबकत्व खत्म होगा और आकर्षण रुकेगा। यानी 'खुद' आत्मस्वभाव में रहे और परमाणुओं की प्रत्येक क्रिया को सिर्फ देखता और जानता रहे। परमाणु जब ग्रंथि के रूप में फूटें, तब खुद उनमें तन्मयाकार नहीं हो, उनके असर को नोट करे, एक क्षण के लिए भी उस असर को अपना नहीं माने, पर परिणाम को जाने और खुद के स्व परिणाम की यथार्थ समझ बरते, तो विषय विषयरूप नहीं रहकर, ज्ञेय बनकर निर्जरित हो जाएगा। लेकिन ऐसी जागृति तो, जब सभी स्थूल दोष होने बंद हो जाएँ, सूक्ष्म में भी काफ़ी कुछ साफ हो जाए और 'विज्ञान' की यथार्थ समझ बरते, तभी परिणामित होती है।

८. वैज्ञानिक 'गाइड' ब्रह्मचर्य हेतु

ब्रह्मचर्य पर इतने सारे सूक्ष्म, वैज्ञानिक स्पष्टीकरण कहीं भी नहीं बताए गए हैं। परम पूज्य दादाश्री ने बहुत ही सरल तरीके से तमाम रहस्य खोल दिए हैं। जिनकी पुस्तकें साधकों को बहुत ही काम आएँ, ऐसी हैं। कितने ही साधक दादाश्री की पुस्तकें पढ़कर ब्रह्मचर्य सिद्ध कर लेते हैं। ब्रह्मचर्य का महत्व बतानेवाली उनकी सचोट वाणी और विषय के परिणामों की भयंकरता को बतानेवाली सचोट वाणी सुज्ञ पाठकों को खड़ा ही कर देती है। अंदर से जागृत कर देती है और ब्रह्मचर्य की ओर मोड़ देती है। ऐसी वाणी पढ़कर ही ब्रह्मचर्य का पालन संभव है।

–डॉ. नीरुबहन अमीन

अनुक्रमणिका

खंड - १

विवाहितों के लिए ब्रह्मचर्य की चाबियाँ

[१] विषय नहीं, लेकिन निडरता वही विष

[२] दृष्टि दोष के जोखिम

[३] *अणहक्क* की गुनहगारी

[४] एक पत्नीव्रत का अर्थ ही ब्रह्मचर्य

[५] *अणहक्क* के विषयभोग, नर्क का कारण

खंड - २

आत्मजागृति से ब्रह्मचर्य का मार्ग

खंड - १

विवाहितों के लिए ब्रह्मचर्य की चाबियाँ

[१]

विषय नहीं, लेकिन निडरता वही विष

सावधान, विषय में निडरता से

विषय, वे विष नहीं हैं, विषय में निडरता वही विष है। इसलिए घबराना मत। सभी शास्त्रों ने ज़ोर देकर कहा है कि विषय वे विष हैं। विष कैसे हैं? विषय कहीं विष होता होगा? विषय में निडरता, वही विष है। विषय यदि विष होता न, तो फिर आप सभी घर पर रह रहे होते और आपको मोक्ष में जाना होता तो मुझे आपको हाँककर भेजना पड़ता कि जाओ उपाश्रय में, यहाँ घर पर मत पड़े रहो। ऐसे हाँककर भेजना पड़ता या नहीं भेजना पड़ता? लेकिन क्या मुझे किसी को हाँकना पड़ता है? हम तो कहते हैं कि जाओ, घर जाकर आराम से पलंग पर सो जाओ।

विषयरहित ब्रह्मचारी कितने होंगे इस दुनिया में? यानी पाँच-दस हज़ार होंगे, शायद बीस-पच्चीस हज़ार होंगे, लेकिन फिर भी ये साढ़े चार अरब लोग तो विष पीया ही करते हैं। विषय को विष रूपी लिखा है, उससे मनुष्य के मन पर क्या असर होगा? 'विषय विष हैं' ये शब्द शादीशुदा लोगों के सुनने में आए, तो क्या होगा? शादीशुदा लोगों के सामने यह शब्द बोलना ही नहीं चाहिए और जो ऐसा शब्द बोले तो उससे कहें

कि 'अरे, ऐसे यदि विषय ही विष होता तो शादी की ज़रूरत ही क्या थी? ये तो कुछ ही लोग बिना शादी किए घूमते रहते हैं। बाकी का, सारा जगत् तो विवाहित ही हैं। अत: यदि गलत होता तो सारा जगत् शादी करता ही क्यों?' ये जो शादी किए बिना घूमते रहते हैं, वे तो व्यायामशाला में गए हैं कि स्त्री के बिना जीया जा सकता है या नहीं? यानी वह तो व्यायामशाला है। बाकी आपको 'टेस्ट एक्ज़ामिनेशन' में से गुज़रना पड़ेगा, और यहाँ पर स्त्री के साथ, पत्नी-बच्चों के साथ ही वीतराग होना पड़ेगा। भागकर वहाँ हिमालय पर जाकर, वीतराग होकर(!) 'हमकु क्या, हमकु क्या' ऐसे करता रहा, तो वह नहीं चलेगा।

स्त्री डाँटे और रात उसी घर में गुज़ारनी पड़े, वह तो सबसे बड़ा टेस्ट एक्ज़ामिनेशन है! यानी स्त्री के साथ रहते हुए भी मोक्ष होना चाहिए। स्त्री की गालियाँ खाए फिर भी समता रहे, ऐसा मोक्ष होना चाहिए।

भगवान ने आत्मा के दो भेद बताए; एक संसारी और दूसरे सिद्ध। जो मोक्ष में चले गए हैं, वे सिद्ध कहलाते हैं और बाकी के सभी संसारी। अत: यदि आप त्यागी हो, फिर भी संसारी हो और ये गृहस्थ भी संसारी हैं। इसलिए आप मन में कुछ रखना मत। संसार बाधक नहीं है, विषय बाधक नहीं है, कुछ भी बाधक नहीं है, अज्ञान बाधक है। इसीलिए तो मैंने पुस्तक में लिखा है कि विषय विष नहीं हैं, विषय में निडरता, वह विष है।

बीवी-बच्चों के साथ रहते हुए भी मोक्ष हो, वह रास्ता हमने दिखाया है। अभी यहाँ से सीधा मोक्ष नहीं है। यह एकावतारी पद है। वीतरागों की बात बिल्कुल सही है कि यदि सीधे ही मोक्ष में जा पाते तो बीवी-बच्चों को इस अंतिम जन्म में छोड़ना पड़ता, लेकिन यह तो एकावतारी पद है। मोक्ष का और संसार का क्या लेना-देना? एक भी कर्म नहीं बँधेगा, उसकी हम गारन्टी देते हैं। स्त्री-बच्चों के साथ रहते हुए भी कर्म नहीं बँधेगा।

स्त्री की नहीं, गलती खुद की

'विषय विष नहीं है' सिर्फ ऐसा कहा जाए तो कितने ही त्यागियों के साथ मतभेद हो जाएगा कि 'आप ऐसा कहते हैं?' नहीं, मैं विषय को

विष कहना ही नहीं चाहता। मैं विषय में निडरता को विष कहता हूँ। आप विषयों को विष कहते हो, वह मैं कबूल नहीं करता। जो अविवाहित है और यदि वह ब्रह्मचारी की तरह रहना चाहता हो तो मैं बहुत खुश हूँ। यदि कोई विवाहित हो तो उसे क्या ऐसा कहेंगे कि पत्नी को छोड़कर भाग जा तू? फिर भी यदि वह पत्नी को छोड़कर भाग जाए और उसका मोक्ष हो जाए, क्या ऐसा कभी हो सकता है? ऐसा किसी के मानने में आता है क्या? तो फिर शादी क्यों की थी? शर्म नहीं आती? किसी को दग़ा नहीं देना चाहिए। इस दुनिया में किसी जीव को किंचित् मात्र भी दुःख दिया होगा तो मोक्ष नहीं होगा। इसलिए हमने यह सरल रास्ता खोज निकाला। वर्ना ये सारे विवाहित लोग कहते हैं कि 'हम मोक्ष में जानेवाले हैं'। वे ऐसा क्यों कह रहे हैं? उन्हें खुद को ऐसा लगा कि 'हम मोक्ष में जाने के लिए इस ओर जा रहे हैं।' 'कितने मील की दूरी पर थे और अब सेन्ट्रल (स्टेशन) कितना पास आ गया', आपको ऐसा लगता है?

प्रश्नकर्ता : नज़दीक है।

दादाश्री : बीवी-बच्चे साथ में हैं, बच्चों को पढ़ाता है, सब करता है। स्त्री मोक्ष में बाधा नहीं डालती। आपकी गलती से मोक्ष रुकता है। गलती आपकी है, स्त्री की गलती नहीं है। स्त्री बाधक नहीं है, आपकी अज्ञानता बाधक है।

ऐसा है न कि मनुष्यों ने विषय का तो पृथक्करण करके कभी देखा ही नहीं। यदि मानवधर्म के तौर पर, विषय का पृथक्करण करें, जैसे कि हम किसी चीज़ का पृथक्करण करते हैं कि उसमें क्या-क्या चीज़ें मिली हुई हैं, ऐसे अलग करते हैं। उसी तरह यदि विषय का पृथक्करण करे तो मनुष्य कभी भी फिर विषय करेगा ही नहीं। दो दिन से ज़्यादा के बासी पकौड़े खा ही नहीं सकते। फिर भी यदि तीन महीने के बासी पकौड़े खा लिए हों, तो भी वह जीवित रहेगा, लेकिन विषय करेगा तो वह जीवित नहीं रहेगा। विषय, वह ऐसी चीज़ है कि उसका पृथक्करण करे तो खुद को वैराग्य ही रहा करे। यदि विषय विष होते तो भगवान महावीर तीर्थंकर ही नहीं बन पाते। भगवान महावीर की भी बेटी थी। अतः विषयों में

निडरता, वह विष है। अब मुझे कुछ भी बाधक नहीं है, ऐसा होना, वही विष है।

प्रश्नकर्ता : निडरता, वह लापरवाही कहलाती है न?

दादाश्री : मैंने निडरता शब्द इसलिए दिया है ताकि विषय से डरे। सिर्फ लाचार होकर ही विषय में पड़े। इसलिए विषय से डरो, ऐसा कहते हैं। क्योंकि भगवान भी डरते थे, बड़े-बड़े ज्ञानी भी डरते थे, तो आप ऐसे कैसे हो कि जो विषय से नहीं डरते? मुझे अब कुछ बाधक नहीं है, वही विष है। अत: विषय से डरो। विषय भोगो ज़रूर, लेकिन विषय से डरो। जैसे सुंदर भोजन मिला हो, रस-रोटी वगैरह, वह सब भोगो अवश्य, लेकिन डरते हुए भोगो। डरते हुए किसलिए कि ज़्यादा खाओगे तो तकलीफ हो जाएगी, इसलिए डरो।

एक साधु खोज लाओ कि जिसकी आज हम शादी करवाएँ और यदि एक महीना भी घर चला ले, तो वह सच्चा! अरे! यह तो तीसरे दिन ही भाग जाएगा। 'फलाना ले आओ, वह फलाना ले आओ, कहा कि भाग जाएगा। और ये (साधु) लोगों को परेशान करते हैं कि, 'अब आपका क्या होगा?' इसलिए मुझे ये भारी शब्द लिखने पड़े कि 'विषय विष नहीं हैं, जाओ घबराना मत', और कहा, 'मैं आपकी घबराहट निकालने आया हूँ। सहज भाव से विषय भोगो न! सहज होना चाहिए। यदि सहज भाव से विषय भोगे तो विषय विषय को ही भोगते हैं। यह तो, सहज भाव से भोगना आता नहीं है न?

प्रश्नकर्ता : यानी विषय में जो पड़ता हैं, उसमें उसकी कोई हिम्मत काम नहीं करती, वह तो उसकी आसक्ति ही करवाती है।

दादाश्री : नहीं, हमें उसमें भी हर्ज नहीं है। निडरता में हर्ज है। यानी 'अब मुझे कुछ भी बाधक नहीं है, मैं भले ही कैसे भी विषय भोगूँ, फिर भी मुझे कुछ नहीं होगा।' ऐसी लापरवाही रहे तो, उस लापरवाही को हम निडरता कहते हैं। लोगों ने विषयों को एकांतिक रूप से 'विष' कहा है, इसलिए संसारी 'डिस्करेज' हो गए। तो फिर इन संसारियों को विष ही पीते

रहना है न? क्या सिर्फ इन त्यागियों को ही विष नहीं पीना है? सिर्फ यह स्त्री-विषय ही विषय नहीं है। त्यागियों के भी सभी विषय होते हैं और संसारियों के भी सभी विषय होते हैं, लेकिन शास्त्रों में सिर्फ स्त्री-विषय को ही ऐसा ज़हर समान कहा गया है। लेकिन इससे उन्होंने लोगों को डरा दिया है कि 'हम तो संसारी लोग हैं। विषय विष समान हैं, फिर भी करने तो पड़ते ही हैं न!' इसलिए फिर वह उन्हें खटकता रहता है। यह गुत्थी निकाल देने योग्य है और यह जो खटकता रहता है, वह दुःख कहलाता है।

प्रश्नकर्ता : विषयों में निडरता, यदि वह विष है तो फिर जो निडरता उत्पन्न होती है, वह किसे आती है?

दादाश्री : खुद निडरता रखे तो रहेगी। यदि वह अहंकार करने लगे कि, 'मैं विषय से जीत गया, अब कोई हर्ज नहीं है।' वह निडरता कहलाती है। वह अहंकार कहलाता हैं। यदि निडर रहा तो वह विष हो गया। इस विषय में तो आखिर तक निडर नहीं होना है। पुलिस के पकड़े बिना तो कोई जेल में नहीं जाता न? पुलिस पकड़कर जेल में ले जाए, तभी जाओगे न? पुलिस द्वारा ले जाए बिना कोई जेल में जाए, तो नहीं समझ जाएँगे कि वह निडर हो गया है? अगर पुलिसवाला पकड़कर जेल में ले जाए तब उसका गुनाह नहीं है। इसी तरह यदि संयोग उसे विषय के गड्ढे में गिराएँ तो उसमें हर्ज नहीं है। यदि अब्रह्मचर्य की गाँठ विलय हो जाए तब तो सबकुछ चला जाएगा। यह सारा संसार उसी पर खड़ा हुआ है। रूट कॉज़ यही है। इन लोगों के दुःख दूर करने के लिए, लोगों के मन पर से बोझ हट जाए, इसीलिए ज्ञानीपुरुष ऐसा कहते हैं कि विषय, वह विष नहीं हैं। ताकि आपको ऐसा लगे कि चलो, इतनी तो शांति हुई।

पत्नी के साथ मोक्ष, एक शर्त पर

प्रश्नकर्ता : शुद्धात्मा स्वरूप होने के बाद दुनिया में पत्नी के साथ संसार व्यवहार करना चाहिए या नहीं? और वह किस भाव से? यहाँ समभाव से *निकाल* (निपटारा) कैसे करें?

दादाश्री : यह व्यवहार तो, यदि आपकी पत्नी हो तो पत्नी के साथ

समाधानपूर्वक आपसी व्यवहार रखना। आपको और उन्हें, दोनों का समाधान हो ऐसा व्यवहार रखना। उन्हें असमाधान हो और आपको समाधान रहे, तो ऐसा व्यवहार बंद कर देना। आपसे स्त्री को कोई दुःख नहीं होना चाहिए। आपको क्या लगता है? कैसा व्यवहार करना चाहिए? उसे दुःख नहीं हो, ऐसा। हो सकेगा या नहीं? हाँ, यह जो स्त्री से विवाह किया है वह संसार व्यवहार के लिए है, न कि साधु बनने के लिए। तब फिर स्त्री मुझे गालियाँ नहीं देगी कि 'दादाजी ने मेरा संसार बिगाड़ दिया!' मैं ऐसा नहीं कहना चाहता। मैं तो आपसे इतना कहता हूँ कि यह जो दवाई (विषय संबंध) है, वह मीठी दवाई है। और जिस तरह दवाई हमेशा सही मात्रा में ली जाती है, उसी तरह यह भी सही मात्रा में लेना।

मीठी लगी इसलिए बार-बार पीते रहें, ऐसा कहीं करना चाहिए? थोड़ा तो सोचो। क्या नुकसान होता है? तो वह यह है कि जो भोजन लेते हैं उससे ब्लड बनता है, अन्य सब होते-होते आख़िर में उससे रज और वीर्य बनकर खत्म हो जाता है। विवाहित जीवन की शोभा कब रहेगी? कि जब दोनों को बुख़ार चढ़ने पर ही वे दवाई पीएँ, तब। बिना बुख़ार दवाई पीते हैं या नहीं? एक को बुख़ार नहीं चढ़ा हो फिर भी दवाई पीए तो उससे विवाहित जीवन की शोभा नहीं रहती। दोनों को बुख़ार चढ़े तभी दवाई पीनी चाहिए। दिस इज़ ऑन्ली द मेडिसिन। मेडिसिन मीठी है, सिर्फ इसलिए रोज़ पीने योग्य नहीं है। विवाहित जीवन की शोभा रखनी हो तो संयमी की ज़रूरत है। सभी जानवर असंयमी कहलाते हैं। अपना जीवन तो संयमी होना चाहिए! ये सभी जो पहले, राम-सीता आदि सभी हो चुके हैं, वे सभी संयमवाले थे। स्त्री के साथ संयमी! तब यह असंयम, वह क्या कोई दैवीगुण है? नहीं, वह पाशवी गुण है। मनुष्य में ऐसे गुण नहीं होने चाहिए। मनुष्य असंयमी नहीं होना चाहिए। जगत् को यह समझ ही नहीं है कि विषय क्या है! एक बार के विषय में करोड़ों जीव मर जाते हैं, वन टाइम में तो। समझ नहीं होने की वजह से यहाँ मज़े लेते हैं। समझते नहीं हैं न! मजबूरन जीव मरें, ऐसा होना चाहिए। लेकिन यदि समझ नहीं हो, तब क्या हो सकता है?

इसलिए हमने कहा है कि पत्नी का संग रखने में हर्ज नहीं है।

लेकिन दोनों को इसी शर्त के साथ कि 'एकता और समझदारी के साथ रहना।' डॉक्टर ने बताया हो, उतनी बार दवाई पीना। ये तो रोज़ दो-दो, तीन-तीन बार दवाई पीते हैं, लोगों ने ऐसा कर दिया है न! और वास्तव में वह दवाई मीठी नहीं है।

प्रश्नकर्ता : इसमें भी, इतनी ही दवाई पीना, वह क्या अपने काबू में है? वह डोज़ काबू में नहीं रहे तो क्या करना चाहिए?

दादाश्री : काबू में नहीं रहे, ऐसी कोई चीज़ होती ही नहीं इस दुनिया में।

दवाई कब पीनी चाहिए? बुख़ार से छटपटाए तब !

यह 'अक्रमविज्ञान' है। विवाह करने पर भी मोक्ष चला जाए, ऐसा नहीं है। आप सभी संसारी हो और होना है एकावतारी तो उसका मेल कैसे बैठेगा? ये जैन शास्त्र स्पष्ट मना करते हैं, आचार्य भी मना करते हैं, फिर अपने लिए यह मेल कैसे बैठ गया? तब मैंने कहा कि 'स्त्री के साथ रहो, लेकिन मेरी शर्त क्या है कि आप भले ही कुछ भी खाना-पीना, लेकिन इस स्त्री विषय संबंध में तो जब दोनों को बुख़ार चढ़े, तभी दवाई पीना। यह दवाई मीठी है,इस वजह से शौक़ की खातिर मत पीना।' वर्ना इन संसारियों को एकावतारी तो क्या लेकिन समकित भी जल्दी नहीं हो सकता न! जबकि इन सभी को तो क्षायक समकित बरतता है। सिर्फ इतनी सी ही भूल रही है। पूरा ही जगत्, 'यह मीठा है' मानकर बस पीते ही रहते हैं। बुख़ार हो या नहीं हो। अतः लोगों को तो अनादि से ऐसा अध्यास हो गया है, इसलिए हमें बार-बार कहना पड़ता है!

सभी धर्मों ने उलझन पैदा कर दी कि स्त्रियों को छोड़ दो। अरे! यदि स्त्री को छोड़ दूँ, तो मैं कहाँ जाऊँ? मेरे लिए खाना कौन बनाएगा? मैं अपना व्यापार संभालूँ या घर में चूल्हा फूँकूँ? अब ऐसा कहते हैं कि 'पत्नी छोड़ दो तो मोक्ष मिलेगा', तो पत्नी ने क्या गुनाह किया है?

प्रश्नकर्ता : और बीवियाँ भी ऐसा कहती हैं न कि 'हमें भी मोक्ष चाहिए, हमें आपकी ज़रूरत नहीं है।'

दादाश्री : हाँ, ऐसा ही कहेंगी न! आपका और इन महिला का, दोनों का साझा व्यापार। अतः इसमें स्त्री का दोष नहीं है, बुख़ार का दोष नहीं है। बुख़ार नहीं चढ़ा हो और दवाई पीओ, उस चीज़ का दोष है। यानी यह सब जोखिमदारी समझ लेना। अपनी यह बात भरोसे लायक है और तुरंत ही अनुभव में आए, ऐसी बात है!

ऐसी सरलता मोक्षार्थी को कहाँ से?

दवाई नियम से ली जाए, तभी उसे 'आज्ञा में रहा' ऐसा कहा जाएगा।

विषय की लिमिट होनी चाहिए। स्त्री-पुरुष का विषय कहाँ तक होना चाहिए? परस्त्री नहीं होनी चाहिए और परपुरुष नहीं होना चाहिए। और कभी उसका विचार भी आए तो उन्हें प्रतिक्रमण से धो देना चाहिए। सबसे बड़ा जोखिम हो, तो इतना ही है-परस्त्री और परपुरुष! खुद की स्त्री में जोखिम नहीं है। अब हमारी इसमें कहीं कोई भूल है? क्या हम डाँटते हैं किसी भी तरह? उसमें क्या कोई गुनाह है? यह हमारी साइन्टिफिक खोज है कि कितने से, कहाँ पर कर्म नहीं चिपकते, ऐसी खोज है! वर्ना साधुओं को तो यहाँ तक कहा गया है कि यदि स्त्री का लकड़ी का पुतला हो, तो उसे भी मत देखना। जहाँ स्त्री बैठी हो उस जगह पर बैठना नहीं। लेकिन मैंने ऐसा कुछ नहीं कहा है न? और इतना आसान हो तो पालन करना चाहिए न? या उसमें कोई मुश्किल आती है?

प्रश्नकर्ता : हमें आगे बढ़ना है, इसलिए पालन करना ही है।

दादाश्री : बुख़ार चढ़े तभी पीना। यह तो समझदार इन्सान का ही काम है न? अतः हमारा यह थर्मामीटर मिल गया है। तभी तो हम कहते हैं न कि स्त्री के साथ मोक्ष दिया है! ऐसी सरलता किसी ने नहीं दी है। बहुत ही सरल और सीधा मार्ग दिया है। अब आपको जैसा सदुपयोग करना हो, वैसा करना। एकदम सरल! ऐसा कभी हुआ ही नहीं! यह निर्मल मार्ग है, भगवान भी जिसे एक्सेप्ट करें, ऐसा मार्ग है!

किसी व्यक्ति को सजा हुई हो और उसे जेल में डाल दिया जाए और वह वहाँ जाकर ज़मीन लीप रहा हो तो हम क्या समझेंगे? क्या उसे

लीपने का शौक़ है? वह पुलिस से चिरौरी करके कहेगा कि 'ज़रा पानी ला दीजिए न।' यानी लीपने के लिए चिरौरी भी करता है, क्यों? क्योंकि उसे ऐसे में सोना अच्छा नहीं लगता, यानी उसे शौक़ नहीं है। कब छूटूँ, ऐसा उसके मन में रहता ही है, फिर भी वह लीपता है। तो क्या यह विरोधाभास नहीं है? नहीं, यह विरोधाभास नहीं है। यह तो, कामचलाऊ चाहिए या नहीं? वर्ना कमर टूट जाए। इसी तरह हम कहते हैं कि आप यह दवाई पीना, लेकिन 'इसमें से कब छूटूँ?' यह तो चूकना ही नहीं चाहिए न? ऐसी जागृति नहीं रहे तो किस काम का?

है डिस्चार्ज, लेकिन माँगे जागृति

अपना यह अक्रमविज्ञान क्या कहता है? चार्ज को 'चार्ज' कहता है और डिस्चार्ज को 'डिस्चार्ज' कहता है। डिस्चार्ज यानी हमने कोई भी त्याग करने को नहीं कहा है। यह ज्ञान दिया, अतः आपको जिनका त्याग करना था, वे अहंकार और ममता, उन दोनों का त्याग हो गया और ग्रहण करना था निज स्वरूप, 'शुद्धात्मा', वह ग्रहण हो गया। यानी त्याग करने की चीज़ का त्याग हो गया और ग्रहण करने की चीज़ ग्रहण हो गई! अतः ग्रहण-त्याग का झंझट रहा ही नहीं कि मुझे यह ग्रहण करना है या इसका त्याग करना है, ऐसा! दूसरा, अब सिर्फ *निकाल* करना रहा, क्योंकि हमने हमारे ज्ञान से खोज की है कि यह सब डिस्चार्ज है। अब है डिस्चार्ज, फिर भी इस काल के लोगों को हमें चेतावनी देनी पड़ती है, स्त्री-पुरुष के विषय संबंध में चेतावनी देनी पड़ती है।

एक महात्मा हैं, जो फिर ऐसा मान बैठे थे कि यह सब डिस्चार्ज ही है। तब मैंने उन्हें समझाया कि डिस्चार्ज का मतलब क्या है? जब आपको बुख़ार चढ़ा हो तो फिर पत्नी से पूछना कि आपको बुख़ार चढ़ा है? दोनों को बुख़ार चढ़े तो दवाई पी लेना। एक को बुख़ार चढ़ा लेकिन अगर पत्नी को बुख़ार नहीं चढ़ा हो, तब तक आपको भी दवाई नहीं पीनी है यदि दोनों को बुख़ार चढ़े, तभी पीना। यह तो रोज़ पीता है। मीठी है न, फर्स्ट क्लास, दोनों... यानी मैं ऐसा कहता हूँ उन्हें। नहीं तो शरीर कैसे दिखेंगे! अब, उस अज्ञानता में पहले दुःख था, जलन ही थी पूरा दिन, इसलिए तू पूरा दिन,

यही धंधा लेकर बैठ गया था लेकिन अब जलन नहीं रही। अब ज़रा सीधा चल न! जब तक किसी को जलन रहे, तब तक मैं नहीं डाँटता उसे। मैं समझता हूँ कि जलनवाला इन्सान क्या नहीं करेगा? अब मैंने आपको अखंड आनंदवाला बना दिया है, अब क्यों यह पीते रहते हो? बिना बुख़ार के दवाई पीते हो? कोई बिना बुख़ार के दवाई पीता है भला? ज़रूरत ही नहीं है शरीर को। यों ही आनंद में है! समझने जैसी बात है!

और वह जो है, वह शरीर के लिए नुकसानदेह चीज़ है। यह आप जो खाते-पीते हो उसका एक्स्ट्रैक्ट निकलते-निकलते जो वीर्य बनता है, वह पूरा सार है। इसलिए उसका उपयोग इकोनोमिकली करना चाहिए। यों ही फ़िज़ूल खर्च नहीं करना है। हाँ! यानी आपको तो चंदूभाई से कहना है कि, 'भाई, ऐसा नहीं चलेगा, फ़िज़ूल खर्च मत करना, आप तो विषयी हो ही नहीं। आपका लेना-देना नहीं है लेकिन आपको चंदूभाई से कहना चाहिए। वर्ना फिर चंदूभाई बीमार हो गए तो आपको ही मुसीबत होगी न? अतः यदि सावधान रहो तो उसमें गलत क्या है? वर्ना यदि शरीर निर्वीर्य हो जाएगा, तो यह कहेगा 'अरे! गया, वह गया, यह गया।' घन चक्कर! तो क्यों पहले दादाजी का कहा नहीं माना और अब गया-गया कर रहा है? पैंतीस साल की उम्र में तो एक व्यक्ति को पक्षाघात हो गया था, वे बहुत आसक्तिवाले थे। यों तो अच्छी तरह धर्म का पालन करते थे। फिर मैंने उनसे कहा, 'आप आसक्ति मंद नहीं कर रहे थे, लेकिन अब तो मंद करनी पड़ेगी न!' तब कहने लगे, 'मंद क्या? अब तो पूरी ही गई न। अब कहाँ रही आसक्ति?' तब मैंने कहा, 'पहले से समझ गए होते तो यह झंझट नहीं हुआ होता न!' इस तरह जब जेल में बंद हो जाते हो, तब सीधे होते हो, तो फिर मुक्त रहने में क्या हर्ज है?' लेकिन मुक्ति में नहीं रहता। नहीं? जेल में जाएँगे तब रहेंगे सीधे!

इसलिए फिर यह अक्रम मार्ग निकला है कि 'भाई नहीं, ऐसा-वैसा नहीं, दोनों को बुख़ार आए तब दवाई पीना। बुख़ार में सारी रात हुड... हुड... करते बैठे रहो, उसके बजाय पी लेना न! ऐसा अक्रमविज्ञान निकला है।

इसीलिए आख़िर में मैंने क्या कहा? ये लोग कच्चे हैं इसलिए मुझे

यह नया वाक्य रखना पड़ा। यदि थोड़े पक्के होते, चवन्नीभर कच्चे होते और बारह आने पक्के होते तो मुझे यह भी नहीं कहना पड़ता। यह एक अपवाद रखना पड़ा! अब इससे यह ज्ञान कुछ चला नहीं जाएगा, लेकिन उसे खुद को वह उलझा देता है। दवाई लेनी तो ज़रूरी है ही, क्योंकि 'मेरिज' हुई है। लेकिन स्त्री-पुरुष का जो संबंध है, उसमें से मैंने आपको अलग नहीं किया है। लेकिन नियम क्या कहता है कि यदि मोक्ष में जाना है तो खाना क्यों है? जैसे भूख मिटाने के लिए खाना है, वैसे ही दवाई तो बुख़ार चढ़े तभी पीनी चाहिए न? आपको समझ में आया कि 'बुख़ार चढ़ा' किसे कहेंगे और किसे नहीं?

अब इतना ही, एक छोटे से नियम का पालन करने को कहता हूँ। इसमें कोई बहुत मुश्किल चीज़ है? उसमें भी यदि आप साइन्टिस्ट (जैसी सोचवाले) व्यक्ति हो, तो आपसे कहने की ज़रूरत नहीं है। ये सभी साइन्टिस्ट नहीं हैं न? यह दवाई तो बहुत अच्छी है, सुगंधित है, इसलिए पी लो न, कहता है! अरे! वह दवाई है। दवाई का शौक़ नहीं रखते! दवाई का शौक़ तो होता होगा? दवाई तो उपाय है।

प्रश्नकर्ता : शौक़ किसका रखना चाहिए?

दादाश्री : आनंद का। हमेशा आनंद रहे, उसीका शौक़ रखना और थाली में जो आए वह खाना-पीना और मौज करना। उसके लिए कोई मनाही नहीं है। और ब्रह्मचर्य पालन किया जा सके तो उसके समान कोई सुख, उस सुख की तो कोई मर्यादा (सीमा) ही नहीं है, इतना अधिक सुख है! अमर्यादित(असीम) सुख है! वह मैंने देखा है और अनुभव किया है! इसीलिए तो हमें पूरे दिन आनंद ही रहता है न! ऐसा आनंद रहे तो फिर विषय याद ही नहीं आए। विषय याद ही नहीं आए तो फिर झंझट ही कहाँ रहा?

शुरू करो आज से ही....

'बुख़ार चढ़े तो दवाई पीना' मेरी यह बात आपको पसंद आई या नहीं आई?

प्रश्नकर्ता : पसंद आई न!

दादाश्री : ऐसा! पसंद आई हो तो आज से शुरू कर देना। पसंद नहीं हो तो थोड़े दिनों बाद। जल्दी क्या है? पच्चीस साल बाद! इसमें थोड़े ही कोई ज़बरदस्ती है? बाकी, सबसे बड़ी जोखिमदारी तो इस विषय की जोखिमदारी है! फिर भी हमने कहा है कि बुख़ार चढ़े तभी दवाई पीना, तो जोखिमदारी हमारी, और आपको मोक्षमार्ग में बाधा नहीं आएगी। यह इतनी सारी जोखिमदारी लेने के बावजूद आप कहते हो कि हमें ठीक से पूरी छूट नहीं देते, तो वह आपकी भूल ही है न? आपको क्या लगता है? अपना यह 'अक्रमविज्ञान' है! स्त्री के साथ रहना। आज सभी शास्त्रों ने स्त्री के साथ रहने को मना किया है, जबकि हम रहने को कहते हैं। लेकिन साथ में यह थर्मामीटर देते हैं। यानी कि स्त्री को दुःख नहीं हो, उस तरह से विषय का व्यवहार रखना।

प्रश्नकर्ता : वह बुख़ार चढ़ना बंद होगा या नहीं?

दादाश्री : नहीं, वह तो वापस फिर से चढ़ेगा।

प्रश्नकर्ता : तो उसे बंद कैसे करें?

दादाश्री : उसे बंद मत करना। दोनों को बुख़ार चढ़े और दवाई पीओ तो जोखिमदारी आपकी नहीं है, तब फिर मेरी जोखिमदारी। यदि शौक़ की खातिर दवाई पीओ, तो आपकी जोखिमदारी। मैं जानता हूँ कि आप सभी शादीशुदा हो, यानी सभी को कुछ यों ही ज्ञान नहीं दिया है! लेकिन साथ ही साथ अक्रम की इतनी ज़िम्मेदारी ली है कि यहाँ तक नियम में रहो, तो जोखिमदार मैं हूँ।

प्रश्नकर्ता : वाइफ की इच्छा नहीं हो और हज़बेन्ड के फोर्स से दवाई पीनी पड़े तब क्या करें?

दादाश्री : लेकिन उसमें तो क्या करें? किस ने कहा था शादी करो?

प्रश्नकर्ता : भुगते उसकी भूल। लेकिन दादा कुछ ऐसा बताइए न,

ऐसी कोई दवाई बताइए कि जिससे सामनेवाले व्यक्ति का प्रतिक्रमण करें, कुछ करें तो कम हो जाए।

दादाश्री : वह तो इसे समझने से, बात समझाने से कि 'दादा ने कहा है कि यह तो बार-बार पीते रहने की चीज़ नहीं है। ज़रा सीधे चलो न।' यानी महीने में छः-आठ दिन दवाई पीनी चाहिए। अपना शरीर अच्छा रहेगा, दिमाग़ अच्छा रहेगा, तो फाइल का निकाल होगा। वर्ना डिफॉर्म हो जाएगा।

प्रश्नकर्ता : बुख़ार चढ़े ही नहीं; ऐसा कुछ कर दीजिए न।

दादाश्री : ऐसा ही कर दिया है, लेकिन आपको अभी तक....

प्रश्नकर्ता : निश्चय कच्चा है।

दादाश्री : निश्चय कच्चा है। यह तो इफेक्ट है, यह डिस्चार्ज है, ऐसा करके निश्चय कच्चा पड़ जाता है।

प्रश्नकर्ता : समझ में आए, तो वर्तन में आएगा ही न?

दादाश्री : समझ में तो आया ही नहीं है। यह बुद्धिपूर्वक का सुख नहीं है। ऐसे समझ में आया ही नहीं है। मैंने जलेबी खाने की छूट दी, खीर खाने की छूट दी है। इस शराब में से जो सुख आता है, वह बुद्धिपूर्वक का सुख नहीं कहलाता। सिगरेट में से जो सुख आता है, वह बुद्धिपूर्वक का सुख नहीं कहलाता। यों देखा-देखी से ही है।

एक बार सिर्फ जान लेने की ही ज़रूरत है कि बुख़ार आने पर ही दवाई पीनी चाहिए। फिर उस ओर का तय हो जाए तो फिर मन वैसा ही निश्चय रखता है। क्योंकि उसे आत्मसुख तो मिला ही है न! जिसे किसी भी प्रकार का सुख हो ही नहीं, उसके लिए तो फिर यह विषय सुख है ही। उसे तो हम मोड़ेंगे ही नहीं और उसे तो मोड़ भी नहीं सकते न। जबकि यह तो आत्मा की तरफ का सुख मिला है, इसलिए खुद के इस सुख की ओर मुड़ जाता है और वापस जब मन ज़रा सा भी बाहर कहीं टकराए तो उस समय वह बाहर विषय की ओर नहीं मुड़ता बल्कि अंदर आत्मा की ओर मुड़ जाता है। लेकिन जिसे यह ज्ञान नहीं मिला हो, उसे

क्या होगा? यह मोक्ष का मार्ग है, इसलिए यहाँ ज़रा इतना ही समझ लेना। आपको यह बात पसंद आई क्या? यह 'अक्रमज्ञान' सही है न?

प्रश्नकर्ता : हाँ, सही है।

दादाश्री : विषय की उपस्थिति में भी मोक्ष हो सके, ऐसा यह ज्ञान है न! यह हमारी खोज है। बहुत उच्च प्रकार की खोज है! आपको लड्डू-जलेबी वगैरह खाने की छूट दे रखी है। कृपालुदेव ने तो क्या कहा है कि, 'मनपसंद थाली आए तो औरों को दे देना।' तो क्या किसी ने कभी औरों को दी है? एक भी ऐसा जन्मा है कि जिसने अपनी मनपसंद थाली किसी और को दे दी? ये कोई दे दें ऐसे हैं? वह तो, सिर्फ 'ज्ञानीपुरुष' ही ऐसा कर सकते हैं। जबकि मैंने तो आपसे कहा है कि, 'मनपसंद थाली आराम से खाना! आम खाना, आमरस खाना।' किसी ने भी ऐसी छूट नहीं दी है। अभी तक किसी शास्त्र ने ऐसा नहीं कहा है कि संसारी वेश में ऐसा संभव है। इन सभी शास्त्रों ने तो 'स्त्री से दूर भागो', ऐसा कहा है। लेकिन हमने यह नयी खोज की है! मेरी यह नयी वैज्ञानिक खोज है। चौबीस तीर्थंकरों का इकट्ठा विज्ञान है यह!

यहाँ हम आपको खुद की स्त्री या खुद के पुरुष की मर्यादा में ही विषय की छूट देते हैं, उसमें ऐसी ज़िम्मेदारी नहीं रहती। इसीलिए हमने छूट दी है। बाकी शास्त्रकारों ने तो इसे बिल्कुल निकाल ही दिया है कि, 'अरे, स्त्री को छोड़ दो', ऐसा कह दिया। लेकिन यह तो अपना विज्ञान है, इसलिए एक ओर शांति रहे, ऐसा है। और इसीलिए आज्ञा में रहने को तैयार होते हैं। बल्कि छूट दी है। उसका यदि उल्टा अर्थ निकाले तब तो इसमें मार खा जाएगा न?

लोकसंज्ञा से फँसा विषय में

बाकी, विषय तो लोकसंज्ञा है। सिर्फ बिना सोचे-समझे की हुई बात है। कृपालुदेव ने तो उसका बहुत खराब तरह से वर्णन किया है। 'वह भूमिका थूकने योग्य भी नहीं है' उसे ऐसा कहा है। उस बात की लोग टीका-टिप्पणी करते हैं! दुनिया है न! दुनिया को यह बात पसंद नहीं आती

न? दुनिया में तो हर किसी की दृष्टि अलग ही होती है। अत: किसी एक व्यक्ति के व्यूपोइन्ट से कहा हुआ सही मानना ही नहीं चाहिए।

प्रश्नकर्ता : लेकिन 'व्यवस्थित' के क्षेत्र में विषय आता है या नहीं?

दादाश्री : आता है न! लेकिन अगर बुख़ार चढ़े तो वह 'व्यवस्थित' के क्षेत्र में है, वर्ना 'व्यवस्थित' का दुरुपयोग कर रहे हैं। बुख़ार चढ़ने पर दवाई ले तो हर्ज नहीं है। रोज़ बुख़ार चढ़े तो रोज़ दवाई लेना, लेकिन बुख़ार चढ़े तभी लेनी चाहिए, वर्ना नहीं लेनी चाहिए। आपको यह बात पसंद आई?

प्रश्नकर्ता : ग़ज़ब की बात है दादाजी!

दादाश्री : ऐसा! देखो हमने कोई एतराज़ किया है? वर्ना एक बार के स्त्री संयोग के लिए भी शास्त्रकारों ने मना किया है। वे तो क्या कहते हैं कि, 'ज़हर खाना, मर जाना, लेकिन स्त्री संयोग मत करना।' जबकि हमने तो आपकी ज़िम्मेदारी ली है, क्योंकि आप आत्मा के प्रति नि:शंक हुए हो। सिर्फ इतना ही कहा है न कि 'बुख़ार चढ़े तभी दवाई पीना।' बाकी जगत् में तो सारे विषय ही हैं, सिर्फ यह स्त्री विषय ही विषय नहीं है। स्त्री को छोड़ दिया, फिर भी निरे विषय ही हैं। विषयरहित मनुष्य हो ही नहीं सकता। जब तक दृष्टि नहीं बदलती, तब तक विषय ही है। जब दृष्टि बदले, उसमें भी जब सम्यक दृष्टि हो, तब विषय कम होते हैं, लेकिन विषय जाते नहीं हैं। वह तो जब सातों प्रकृतियाँ निकल जाएँ, तब विषय जाता है।

अक्रम के अलावा कहीं ऐसी छूट मिलेगी?

इसलिए अक्रमविज्ञान में तो आपकी खुद की पत्नी के साथ के अब्रह्मचर्य व्यवहार को हम ब्रह्मचर्य कहते हैं। लेकिन वह भी विनयपूर्वक का, और बाहर किसी स्त्री के प्रति दृष्टि नहीं बिगड़नी चाहिए। यदि दृष्टि बिगड़े तो तुरंत धो डालना चाहिए। तो उसे, इस काल में हम ब्रह्मचारी कहते हैं। दूसरी जगह पर दृष्टि नहीं बिगड़ती, इसलिए उसे ब्रह्मचारी कहते हैं। वह क्या कोई ऐसा-वैसा पद है? और फिर लंबे समय बाद, जब उसे समझ में आता है कि इसमें भी बहुत गलती हो रही है, तब हक़ का भी

छोड़ देते हैं। अनेकों ने छोड़ दिया है। यह तो, इस जगत् में सबसे बड़ी अहितकारी चीज़ कोई हो तो सिर्फ यह स्त्री विषय ही है!

अतः यह सब समझना पड़ेगा, ऐसे ही गप्प चलती होगी? कितने अच्छे बेटे और बेटी हैं! अब क्यों आपको.... अच्छे मित्रों की तरह एक होकर मित्रतापूर्वक रहो। और प्रारब्ध में यदि उदय हो, तब दोनों को यदि बुख़ार चढ़े तो दवाई पीना, मैं ऐसा कह रहा हूँ। मैं कुछ गलत कह रहा हूँ या मैं क्या आपका विरोधी हूँ? सब सोच-समझकर ही लिखा है न मैंने।

प्रश्नकर्ता : ठीक है। सही बात है।

दादाश्री : खाने-पीने में तो हमने कहाँ कोई एतराज़ किया है कि यह मत खाना और वह मत खाना? तो क्या कपड़े पहनने पर कभी एतराज़ किया है? चार गद्दे बिछाओ तो भी कोई एतराज़ है? अन्य कोई झंझट नहीं है। यहाँ पर आप कान में इत्र डालकर आओ तो भी हमें कोई एतराज़ नहीं है। सिर्फ विषय से संबंधित माल ही जोखिमवाला है। इसलिए हम आपको धीरे से समझाते हैं। क्योंकि हमारे शब्द आपको यथार्थ जागृति में रहते नहीं हैं न, कि आत्मा कैसा है? मूल आत्मा कैसा है? कि 'मन-वचन-काया की तमाम संगी क्रियाओं में भी असंग है।' और वही स्वरूप हमने आपको दिया हुआ है। संगी क्रियाओं में भी खुद असंग है। खुद संगी क्रियाओं का जाननेवाला हैं। अब इतनी अधिक जागृति आपको रहती नहीं है न!

प्रश्नकर्ता : 'मन-वचन-काया की तमाम संगी क्रियाओं में बिल्कुल असंग है', ऐसी स्टेज आती होगी न?

दादाश्री : आती है। वह किसी क्षण ही आती है, प्रतिक्षण नहीं आती। यह ज्ञान है, इसलिए घूमता तो रहता है। किसी क्षण आ जाता है। अपने यहाँ क्या हर रोज़ सूर्यग्रहण होता है? उस जैसा है!

हमने इतने सारे ज्ञान वाक्य दिए हैं कि आपको हर एक अवसर पर एलर्टनेस रहे, तो इतनी अधिक जागृति रहनी चाहिए।

[२]

दृष्टि दोष के जोखिम

आँखों का क्या गुनाह?

आजकल तो सब ओपन बाज़ार ही हो गया है न? इसलिए शाम होने तक लगता है कि एक भी सौदा नहीं किया, लेकिन यों ही बारह सौदे लिख दिए होते हैं। केवल देखने से ही सौदे हो जाते हैं! अन्य सौदे तो जो होनेवाले होंगे वे होंगे, लेकिन यह तो मात्र देखने से ही सौदे हो जाते हैं! हमारा ज्ञान होने पर ऐसा नहीं होता। स्त्री जा रही हो तो उसके अंदर आपको शुद्धात्मा दिखाई देंगे, लेकिन अन्य लोगों को शुद्धात्मा कैसे दिखाई देंगे? देखने से सौदा हो जाता है तुझसे अब? नहीं होता न? और ज्ञान लेने से पहले तो कितने हो जाते थे शाम तक?

प्रश्नकर्ता : दस-पंद्रह हो जाते थे।

दादाश्री : और किसी की शादी में जाए तब? किसी की शादी में गए हों, उस दिन तो आप बहुत कुछ देखते हो न? सौ एक सौदे हो जाते हैं न? यानी ऐसा है यह सब! वह तेरा दोष नहीं है! मनुष्यमात्र से ऐसा हो ही जाता है। क्योंकि आकर्षणवाला देखे तो दृष्टि खिंच ही जाती है। उसमें स्त्रियों को भी ऐसा और पुरुषों को भी ऐसा, आकर्षणवाला देखा कि सौदा हो ही जाता है! जैसे मार्केट में आकर्षक सब्ज़ी हो तो हम शाम को लेकर ही आते हैं न? नहीं लेनी हो फिर भी ले आते हैं न? कहेंगे, 'बहुत अच्छी सब्ज़ी थी, इसलिए ले आया!' आकर्षक आम दिखाई दें तो ले नहीं आते लोग? अच्छे, सुंदर दिख रहे हों तो? सुंदर दिख रहे हों, तो सौदा कर डालते हैं न? फिर काटकर खाने पर मुँह खट्टा हो जाए तो

कहेंगे पैसे पानी में गए! ऐसा है यह जगत्! यह तो सब आँख का चमकारा हैं! आँखें देखती हैं और चित्त चिपक जाता है। इसमें आँख का क्या गुनाह? गुनाह किस का है?

प्रश्नकर्ता : मन का?

दादाश्री : मन का भी क्या गुनाह? गुनाह अपना है कि हम कच्चे पड़े, तभी मन चढ़ बैठा न! गुनाह अपना ही। पहले तो ऐसा भी सोचते थे कि यहाँ हमें नहीं देखना चाहिए, यह तो बहन है। यह तो मामा की बेटी है, फलाँ है। अभी तो देखने में कुछ बाकी ही नहीं रखते न? यह तो सब पाशवता कहलाएगी। थोड़ा-बहुत विवेक जैसा भी कुछ नहीं होता?

दृष्टि का ज़रा-भी विच्छेद नहीं होना चाहिए। किसी के प्रति अपनी दृष्टि खिंचे तो पूरे दिन प्रतिक्रमण करना पड़ेगा। तूने कितना बड़ा बीज बोया होगा कि तेरी दृष्टि खिंचती रहती है? एक संत ने तो, उनकी दृष्टि खिंचती थी, इसलिए उन्होंने आँखों में मिर्च डाल दी, लेकिन हम ऐसा करने को नहीं कहते। हम ऐसा कहते हैं कि मिर्च मत डालना। हमें तो प्रतिक्रमण करते रहना है। उन्होंने मिर्च क्यों डाली होगी? कि आँख का दोष है इसलिए मिर्च डाली। आँखों को दंड दो, ऐसा कहते हैं। अरे! दोष तेरा है। 'आँखों को दंड दो', ऐसा क्यों कहता है? भैंस की भूल पर चरवाहे को मारता है।

भैंस की भूल पर चरवाहे को मार

भगवान ने कहा है कि एक भूल मत करना। जिसका दोष हो, उसे दंड देना! भैंस की गलती और चरवाहे की गलती, दोनों की गलती देखना और बाद में दंड देना! लेकिन इस जगत् के लोग तो भैंस की भूल पर चरवाहे को मारते हैं! 'यह गुनाह किस का है?' उसकी जांच तो करनी ही चाहिए न? यों तो कहता है कि, 'मुझे ब्रह्मचर्य पालन करना है', और फिर कहता है कि 'मेरी इच्छा नहीं है, फिर भी देह खिंच रही है।' तो तूने उपाय क्या किया? तब कहता है, 'देह में खाना कम डाला है।' अरे! भैंस की भूल के लिए चरवाहे को क्यों मार रहा है? लेकिन यह बात

उसे समझ में कैसे आए? ज़रा सोच न, कि मेरी इच्छा नहीं है, तो फिर इस देह को खींच कौन रहा है? यह देह तो आलपिन जैसी है। यदि लोहचुंबक सामने रखोगे तो पिन हिलने लगेगी! इस देह में 'इलेक्ट्रिकल बॉडी' है। इसलिए समान परमाणु मिलने पर 'बॉडी' खिंचती है। लेकिन यह तो कहेगा कि, 'कल से अब देह को खाना नहीं देना है, इस देह को अब भूखा रखूँगा।' अरे! गलती ढूँढ निकाल न! यह तो *पूरण-गलन* (चार्ज होना-डिस्चार्ज होना) है। तूने *पूरण* किया है, तो *गलन* होगा ही। इसलिए मूल 'रूट कॉज़' खोज निकाल। लेकिन 'रूट कॉज़' खुदको, अपने तरीके से कैसे मिलेगा? वह तो ज्ञानीपुरुष बता सकते हैं। इसलिए ज्ञानी को ढूँढो! और ज्ञानी तो कभी-कभार ही होते हैं, वे तो अति-अति दुर्लभ हैं!

कोई स्त्री बाहर सब्ज़ी-भाजी लेने निकले, तब किसी पुरुष को देखकर उसका चित्त वहाँ चिपक जाता है। ऐसे चित्त चिपकने से बीज डल जाते हैं। आते-जाते ऐसे पच्चीस-पचास पुरुषों के साथ बीज डलते हैं। ऐसा प्रतिदिन होता रहता है, ऐसे अनेक पुरुषों के साथ बीज डलते हैं। ऐसा ही पुरुषों को स्त्रियों के प्रति होता है। अब, अगर ज्ञान हाज़िर रहे तो बीज डलने बंद हो जाए, फिर भी प्रतिक्रमण करने पर ही निबेड़ा आएगा। ये बीज तो मिश्रचेतन के संग डलते हैं। फिर मिश्रचेतन दावा करेगा। मिश्रचेतन तो कैसा होता है कि दोनों की मरज़ी में डिफरेन्स, दोनों का संचालन अलग। वहाँ खुद की इच्छा नहीं हो, फिर भी यदि सामनेवाले को सुख भोगने को चाहिए, तो क्या होगा? उसमें से फिर राग-द्वेष के कारखाने शुरू होंगे। अपने पास तो ज्ञान है, इसलिए शुद्धात्मा देखकर, जो चित्त पर चिपका था उसे धो देना। वर्ना यदि चित्त चिपके तो उसका फल दो-पाँच हज़ार सालों बाद भी आ सकता है!

इस कलियुग की वजह से स्त्री-पुरुषों में आमने-सामने असर होता है। दोनों को संतोष हो, फिर भी यदि बाहर कुछ देखे, तो दृष्टि गड़ जाती है। वह सबसे बड़ा भय सिग्नल है। इस दृष्टि में मिठास बर्ते, वह भी बहुत बड़ा जोखिम है। आप यदि मानी हों और आपको यदि कोई स्त्री मान

दे तो आपकी दृष्टि खिंच जाएगी। कोई लोभी हो और उसे लोभ दे तो भी दृष्टि खिंच जाती है। फिर पूरा जीवन मटियामेट कर देता है!

अतः सावधान कहाँ रहना है कि स्त्री को पुरुष से और पुरुष को स्त्री से, बिल्कुल *लप्पन-छप्पन* नहीं करनी चाहिए, वर्ना वह तो भयंकर रोग है! उस विचार से ही मनुष्य को बेशुद्धि रहती है! तो फिर आत्मा की जागृति कब होगी? यानी कि इतना सावधान रहना है। क्या इसमें कुछ मुश्किल है?

प्रश्नकर्ता : वहाँ सावधान रहना चाहिए।

दादाश्री : इतनी सी चीज़ से ही दूर रहने जैसा है। अन्य सभी चीज़ें हम छुड़वा देते है, रास्ता निकाल लेते हैं, लेकिन यहाँ तो चेतन मिश्रित हुआ न? यानी स्त्री-पुरुष दोनों को सावधान रहने जैसा है, भयंकर जोखिम है! हमेशा नज़रे झुकाकर ही रखना, हमारे मार्ग में अन्य कोई रोक नहीं है। घर में भी यही बातचीत करते रहना। ताकि घर के सब लोग समझ जाएँ कि दृष्टि ऊपर उठाने जैसी है ही नहीं।

'वैराइटीज़ ऑफ पैकिंग्स' हैं! इनका अंत आए, ऐसा नहीं है, लेकिन इतनी अधिक जागृति भी नहीं रह पाती। इसलिए तय ही कर लेना कि जो होना हो वह हो, लेकिन दृष्टि गड़ानी ही नहीं है। वर्ना बीज तो बहुत बड़े डल जाएँगे, जो अगला जन्म खत्म कर देंगे! वह जहाँ जाएगी, वहाँ इसे भी जाना पड़ेगा और फिर खत्म हो जाएगा।

नहीं मिलाना दृष्टि कभी

प्रश्नकर्ता : व्यवहार में एक-दूसरों को मान देना, वह तो कुछ बुरा नहीं कहलाता न?

दादाश्री : मान देना, लेकिन दृष्टि नीची रखकर। दृष्टि बिगड़ते ही तुरंत पता चल जाता है। मान में तो तुरंत दृष्टि बिगड़ती है। इतना ही जोखिम है, अन्य कोई जोखिम नहीं है।

आपको यह सब काम आएगा क्या?

कुछ लोगों को कैसा होता है कि मान की गाँठ विषय के लिए ही रक्षा करती है। अतः उसका विषय खत्म होते ही मान की गाँठ छूट जाएगी। कुछ लोगों में पहले मान की गाँठ होती है, और बाद में विषय होता है, यानी मान की गाँठ के आधार पर विषय होता है और कुछ लोगों को विषय के आधर पर मान की गांठ होता है! अतः एक का आधार निराधार हुआ कि दूसरा गायब हो जाता है।

प्रश्नकर्ता : किसी स्त्री को हम बहन मानें, बेटी मानें या माता मानें, तो फिर उसके लिए हमें बुरा भाव नहीं होगा न?

दादाश्री : मानने से कोई फल नहीं मिलता, माना हुआ रहता ही नहीं न! लोग तो सगी बहन के साथ भी 'व्यवहार' करते हैं! ऐसे कई उदाहरण मैं जानता हूँ। अतः माना हुआ कुछ भी रह नहीं पाता।

प्रश्नकर्ता : तो उसका अर्थ यह कि हर एक बात में सावधान रहना चाहिए?

दादाश्री : बहुत ही सावधान रहना चाहिए और यह तो दादा की आज्ञा है न! इसलिए यह आज्ञा तो, खास तौर पर सभी को दी हुई ही है! जिसे जीतना है, उसे हमारी इस सबसे बड़ी आज्ञा का पालन करना है। बाकी, माना हुआ कुछ भी रहता नहीं है।

प्रश्नकर्ता : शुद्धात्मा भाव से देखें, तो फिर परेशानी ही नहीं होगी न?

दादाश्री : शुद्धात्मा भाव से तो देख ही लेना है। लेकिन दृष्टि तो गड़ानी ही नहीं चाहिए। आपको कोई नमस्कार करे और दो मीठे शब्द बोले तो तुरंत उस पर आपकी दृष्टि मिठासवाली हो जाएगी और फिर उसकी दृष्टि आपके लिए बिगड़ेगी। अतः कोई मान देना शुरू करे, तभी से उसे दुश्मन मान लेना। व्यवहार में साधारण मान दे तब तो कोई हर्ज नहीं है, लेकिन यदि दूसरे प्रकार का मान दे, तभी से हमें समझ जाना चाहिए कि ये अपने दुश्मन हैं, हमें खड्डे में ले जाएँगे!

सबसे बड़ा जोखिम ही यही है, दूसरा कोई जोखिम है ही नहीं। बाकी, माना हुआ कुछ रहता नहीं। ऐसा आप कहाँ से लाए? माना हुआ।

प्रश्नकर्ता : नहीं, वह तो प्रश्न उठा कि किसी को भाई-बहन की दृष्टि से देखें तो कैसा है?

दादाश्री : नहीं, उस दृष्टि से देखना ही नहीं चाहिए न! वह दृष्टि तो अब रही ही नहीं न! यानी उस दृष्टि से देखने में 'सेफसाइड' नहीं रही। आपको क्या पता कि यह प्रजा कैसी है? सगे चाचा की बेटी पर भी दृष्टि बिगड़ जाती है! यह तो, घर-घर में माल ही सारा ऐसा हो गया है! कलियुग तो सर्वत्र फैल चुका है।

दृष्टि बिगड़े वहाँ भव जुड़ जाएँ

प्रश्नकर्ता : ब्रह्मचर्य के बारे में बाहर कोई बोलता ही नहीं।

दादाश्री : 'मेरी भी चुप और तेरी भी चुप', ऐसी पोलंपोल चली है। मैं जब ब्रह्मचर्य से संबंधित बात करता हूँ, तब बड़े-बड़े आचार्य महाराजों को आश्चर्य होता है कि, 'इस काल में यदि ऐसा नहीं होगा, तो लोग नर्क में जाएँगे।' क्योंकि पहले तो लोगों की दृष्टि एकाध जगह ही बिगड़ती थी। आज तो जगह-जगह दृष्टि बिगड़ती है! इसलिए फिर हिसाब चुकाने जाना ही पड़ेगा। यानी वह जहाँ जाए, हल्की जाति में जाए तो उसे भी हलकी जाति में जाना पड़ेगा। और कोई चारा ही नहीं। हिसाब चुकाना ही पड़ेगा। अब इन बेचारों को इसका पता ही नहीं है न कि इसकी ज़िम्मेदारी क्या है? आप समझते हो कि ये लोग ऐसा कर रहे हैं? तो आप भी वैसा ही करते हो, बिच्छू यदि डंक मारे तो तुरंत ही क्यों दूर हो जाते हो? 'इसमें डंक मारनेवाला है' ऐसा कोई दिखानेवाला नहीं है न?

ऊँचे पुरुषों को नीची जाति में क्यों जन्म लेना पड़ता है? विषय-विकार के रोग जिन्हें लगे हैं, वे सभी नीची जाति में जन्म पाते हैं, इसी एक आधार पर। जिन में विषय-विकार कम होते हैं, वे उच्च जाति में, उच्च कुल में और उच्च गौत्र में होते हैं, विषयदोष कम हैं, इसलिए! केवल

दृष्टि में फर्क होने से, वह जहाँ जाए वहाँ जाना पड़ता है। इसलिए सावधान रहना है। खुद की स्त्री के अलावा और कहीं दृष्टि बिगड़नी ही नहीं चाहिए। और कहीं दृष्टि बिगड़ी तो खत्म हो गया। मैं क्या कहता हूँ कि अन्य किसी स्त्री को मत देखना, कुदरती तेरे हिस्से में जो आई है, उसे तू भोग। किसी अन्य की स्त्री पर नज़र बिगाड़े तो वह चोरी करने के बराबर है। अपनी स्त्री पर कोई नज़र बिगाड़े तो हमें अच्छा लगेगा क्या?

प्रश्नकर्ता : नहीं।

दादाश्री : उसी प्रकार हमें भी नियम से रहना चाहिए। भले ही कैसी भी खूबसूरत हो फिर भी, किसी लड़की की ओर नज़र नहीं जाए, इतना सँभालने को कहा है।

प्रश्नकर्ता : पवित्र रहना है।

दादाश्री : हाँ, पवित्र रहना है। पवित्र रहने के बावजूद भी कहीं आँखें खिंच जाए और कहीं ज़रा भूल हो जाए तो हमने साबुन दिया है, उससे तुरंत दाग़ धो डालना। तुरंत नहीं धोओगे तो कपड़ा मैला होता रहेगा। इन बेचारे लड़कों की दृष्टि बिगड़ जाती है। आपको, बड़ी उम्रवालों को भी साबुन देना पड़ता है। क्योंकि यह दृष्टि तो कब बिगड़े, वह कहा नहीं जा सकता। हमने आपको स्त्री के साथ रहते हुए भी यह मोक्ष दिया है। आपसे मैं कहूँ कि स्त्री को छोड़कर यहाँ आ जाओ और उनके मन में यदि दु:ख हुआ, तो फिर क्या आप कभी मोक्ष में जा सकोगे? और मैं आपको बुलाऊँ तो मैं भी मोक्ष में जा सकूँगा क्या? आप दोनों को भटका दिया, उसमें क्या मेरा भी मोक्ष हो सकेगा?

परेशानी केवल स्त्री-पुरुष दोनों आमने-सामने मिलते हैं, वहाँ पर है। वहाँ मूल दृष्टि का रोग है। दृष्टि बिगड़ जाए तो प्रतिक्रमण कर लेना। बस, इतनी ही परेशानी है! दूसरी कोई परेशानी नहीं है। क्योंकि शास्त्रकारों ने कहा है, जगत् ने कहा है कि पेट्रोल और अग्नि दोनों साथ में नहीं रखने चाहिए। फिर भी, हमारे यहाँ ऐसा होता है तो इतना सावधान रहकर चलना है कि दियासलाई नहीं गिरनी चाहिए।

यहाँ इन स्त्रियों को, पुरुषों को हर एक को प्रतिक्रमण का साधन दिया है। दृष्टि बिगड़ी कि तुरंत ही प्रतिक्रमण कर लेना, फिर जोखिमदारी मेरी। क्योंकि आपने प्रतिक्रमण किया, मेरी आज्ञा का पालन किया इसलिए सब जोखिमदारी मेरी। फिर आपको क्या चाहिए? जोखिमदारी दादा ले लें तो, फिर क्या परेशानी है?

अपने ज्ञान के कारण बाहर तो दृष्टि गड़ती ही नहीं और यदि बैठे तो उखाड़कर फिर प्रतिक्रमण कर लेता है। पहले का माल भरा है इसलिए गड़ती ज़रूर है, लेकिन उखाड़कर प्रतिक्रमण कर लेता है।

प्रश्नकर्ता : दृष्टि नहीं बिगड़े और मन साफ रहे, उसके लिए तो कितनी अधिक जागृति रखनी पड़ेगी?

दादाश्री : ओहोहो, यदि ऐसी जागृति नहीं रखे, तब फिर और करना क्या है? वे फाइलें तो अगले जन्म में भी फिर से चिपकेंगी। पिछले जन्म से चिपकी हुई हैं, उन्हें ज्ञान से उखाड़ फेंक देना है। नई नहीं चिपके, वही देखना है न!

क़ीमत खूबसूरत चमड़ी की

आपने सुंदर कपड़े पहने हों, तो किसी को मोह होगा न? वह किस का गुनाह कहा जाएगा? अत: यदि अपने पर किसी को मोह हुआ तो वह अपना ही गुनाह है! इसलिए वीतराग कहते हैं कि, 'भाग छूटो। अपने कारण सामनेवाले को मोह हो जाए तो वह बेचारा दु:खी होगा, वह अपने निमित्त से ही न!' तब फिर यह वीतरागों का विज्ञान कैसा होगा? तब फिर वीतराग कितने समझदार होंगे? आपको कैसे लगते हैं? सयाने नहीं लगते? सामनेवाले को दु:ख नहीं हो, इसलिए खुद के बाल नोच डाले।

पहले के साधु-आचार्य महाराज रूपवान होते थे, फिर भी वे सिर के बाल बढ़ाकर, रूप को बढ़ावा नहीं देते थे, रूप कैसे दब जाए, वही ढूँढते रहते थे। दाढ़ी बढ़ाते, लोच करते, ऐसा सब करते थे! लेकिन वे लोग बहुत जागृतिपूर्वक रहते थे। क्योंकि 'मेरे रूप से किसी को दु:ख होगा।' वे ऐसा कहते थे।

प्रश्नकर्ता : किसी को सुख भी होता है न?

दादाश्री : जिसे सुख हुआ होगा, उसके परिणाम स्वरूप दुःख आएगा ही। क्योंकि उसका परिणाम दुःखदायी है। अतः यदि उससे सुख हो तो भी उसका परिणाम दुःखदायी है।

आजकल तो लोगों में ऐसा रूप, ऐसा लावण्यभाव नहीं होता इसलिए वह बाल न रखे या दाढ़ी बढ़ाए तो वह बीमार आदमी जैसा दिखाई देगा। दाढ़ी बढ़ गई हो, फिर शरीर भले ही तगड़ा हो लेकिन लोग उसे पूछेंगे कि, 'क्यों तबियत खराब हो गई है क्या? क्या हुआ है?' आज के लोगों में रूप होता ही नहीं, जो थोड़ा-बहुत रूप होता है, वह भी अहंकार के कारण कुरूप लगता है! उस रूप, उस लावण्य की तो बात ही अलग होती है! अंग-उपांग सभी संतुलित होते हैं। अंग-उपांग नाटे-मोटे हों, उसे रूप कहेंगे ही कैसे? वह तो सभी संतुलित, 'रेग्युलर स्टेज' में होना चाहिए। वैसा लावण्य इस काल में है ही नहीं न! रूप और लावण्य का आधार तो, उसके क्या-क्या विचार हैं, उस पर है।

सुंदर भोगे जाते हैं, अधिक

प्रश्नकर्ता : मोह किसे ज़्यादा होता है? खूबसूरत चमड़ीवाले को या काली चमड़ीवाले को?

दादाश्री : खूबसूरत चमड़ीवाले को। जिसकी सुंदर चमड़ी हो, तो समझ लेना कि लोगों के हाथों वह ज़्यादा भोगे जाएँगे।

प्रश्नकर्ता : जो खूबसूरत चमड़ीवाले होते हैं, उनके *पुद्‌गल* (जो पूरण और गलन होता है) में क्या मोह ज़्यादा भरा हुआ होता है?

दादाश्री : हाँ, तभी चमड़ी सुंदर होती है न! ऐसा है, खूबसूरत चमड़ी यानी गोरी चमड़ी नहीं। हमारे हिन्दुस्तान में गेहुँआ चमड़ी को 'बेस्ट' माना गया है। मेरा और आपका रंग गेहुँआ कहलाता है। उसे 'बेस्ट' रंग कहा है और वही अंतिम प्रकार का रंग है। खूबसूरत चमड़ीवाले तो गोरेगब जैसे होते हैं, वे ज़्यादा मोही होते हैं, इसलिए वे ज़्यादा भोग लिए जाते

हैं। ऐसे सब ये कुदरत के नियम हैं। हमें तो अब यह 'ज्ञान' हाज़िर रहना चाहिए।

जो-जो आकर्षणवाला माल होता है, आकर्षक माल होता है, वह सब बिक जाता है। लड़के-लड़कियाँ सब बिक जाते हैं!

प्रश्नकर्ता : ऐसा आकर्षणवाला माल किस आधार पर होता है?

दादाश्री : मोह ज़्यादा होता है, इसलिए फिर माल ऐसा आकर्षक होता है। उसे मूर्छित कहा जाता है। मोह कम होने के बाद फिर सभी अंग सुडौल होते हैं, लेकिन चमड़ी आकर्षक नहीं होती। सुडौल होते हैं इसलिए वे सुंदर कहे जाते हैं। चमड़ी आकर्षक हो तो उसे रूप नहीं कहते। वह तो एक तरह का बाज़ारू माल कहलाता है। जिसकी खरीदारी-बिक्री होती ही रहती है। इन सभी को आम लाने भेजें, तो वे कैसे लाएँगे? ऊपर से सुंदर दिखें, वैसे लाएँगे। फिर अंदर से वे खट्टे निकलेंगे या कैसे, वह तो फिर भगवान ही जानें!

खुला सुंदरता का रहस्य

प्रश्नकर्ता : अभी अपना जो है वह निकाली है, वह ठीक है, लेकिन अगला जन्म जो होगा, उसमें तो सब सुडौल, सुंदर और भव्य होगा न?

दादाश्री : तब तो अंग-उपांग सब सुडौल होंगे, लेकिन चमड़ी (त्वचा) ऐसी आकर्षक नहीं होगी। आकर्षक चमड़ी तो हल्की जातिवालों की होती है, जो मोही जाति होती है। जो भोगे जानेवाले हों वहीं पर चमड़ी आकर्षक होती है। जबकि उच्च जाति में चमड़ी आकर्षक नहीं होती, आकार बहुत सुंदर होता है, आँख, कान, नाक, कपाल वगैरह सुंदर होते हैं। वे सब सुडौल होते हैं।

जो प्रभावशाली होते हैं, उन्हें देखते ही प्रभाव पड़ता हैं यानि कि अपने भाव बदल जाते हैं, जबकि आकर्षक चमड़ीवाले को देखकर ऐसे भाव हो जाते हैं कि जो अधोगति में ले जाएँ। बोलो, तब फिर देखने मात्र

से ही जो माल अधोगति में ले जाए, वह माल कैसा होगा? इसीलिए लोग कहते हैं न कि, 'भाई, प्रभावशाली से मिलना ताकि अपने भाव उच्च हो, और हम पर उनका प्रभाव पड़े। और आकर्षक चमड़ीवाले को तो देखते ही, जो ज्ञान होगा वह भी चला जाएगा।

प्रश्नकर्ता : दादा, अपना यह जो भरा हुआ माल है, वह इसी जन्म में बदल जाएगा न?

दादाश्री : वह तो सारा बदल जाएगा। हमने बदलने का निश्चय किया तो सबकुछ बदल ही जाएगा न! यह तो सारा पुराना नुकसान। अब वह धंधा बंद कर दिया।

तीर्थंकर भगवान महावीर की त्वचा आकर्षक नहीं थी। भगवान सुडौल होते हैं। उनमें मोह की प्रकृति होती ही नहीं न! मोह प्रकृति, वही आकर्षक चमड़ी है। मोही प्रकृतिवालों की आँखें भी विकारी होती हैं। और फिर आज के जीव क्या मानते हैं कि, 'मैं कितना सुंदर हूँ!' अरे! तेरी क़ीमत ही नहीं है दुनिया में! प्रभाव नहीं पड़ता। बल्कि, देखते ही ऐसा भाव होता है कि जो अधोगति में ले जाए और जो ज्ञान हो, वह भी चला जाए। पुरुष लड़कियों को देखें, तो देखते ही ज्ञान चला जाता है और लड़कियाँ पुरुषों को देखें, तो देखते ही ज्ञान चला जाता है। इसलिए ऐसे माल को देखना ही नहीं है। जिससे प्रभाव उत्पन्न हो, अपने भाव बदलें, विचार बदलें, ऐसे माल को देखना। यह तो सारा कचरा माल, 'रबिश', बिकाऊ माल!

ऐसा दुनिया में कोई कहेगा ही नहीं न? ऐसी बात बताई ही नहीं है न! दुनिया जानती ही नहीं है यह! लोग ऐसा समझते हैं कि कैसा देहकर्मी है यह! अरे, देहकर्मी का क्या करना है? उससे तो लोगों की अधोगति होती है! मनुष्य तो कैसा होना चाहिए? प्रभावशाली होना चाहिए कि जिसे देखते ही अपने मन में अच्छे विचार आएँ, हम संसार भूल जाएँ। इसीलिए तो लोग प्रभावशाली का गुणगान करते थे। चमड़ी की क़ीमत तुझे समझ में आई न?

प्रश्नकर्ता : 'ज़ीरो वेल्युएशन।'

दादाश्री : यह रेशमी चादर से बाँधा हुआ माल है। उसमें माँस, खून, पीप, सारी गंदगी है। गटर वगैरह सबकुछ इसमें है। यह तो लोग अभानता में, बिना भान के चलते हैं। यह माल यदि चादर में बाँधे बगैर दिया जाए तो कितने लोग खुश होंगे?

प्रश्नकर्ता : कोई छूएगा तक नहीं।

दादाश्री : अरे! देखेगा भी नहीं। देख भी ले तो तुरंत बाहर थूक दे! अरे, तो फिर यह तेरे पेट में क्या है? यह तो फिर हाथ भी घुमाता रहता है और फिर विषय की आराधनाएँ चलती हैं।

जाँचो विषय का पृथक्करण

एक भाई को वैराग्य नहीं आ रहा था। इसलिए मैंने उसे 'थ्री विज़न' दिया। फिर 'थ्री विज़न' से उसने देखा, तो उसे बहुत वैराग्य आ गया। तुझे ऐसे देखना पड़ता है क्या?

प्रश्नकर्ता : हाँ, ऐसा उपयोग देना पड़ता है।

दादाश्री : ऐसा? यानी अभी तक मोह है न?

प्रश्नकर्ता : हाँ, अभी भी ऐसे कभी मोह सवार हो जाता है। मान लो बीवी अच्छे कपड़े पहनकर ऐसे चले तो फिर अंदर मूर्छा उत्पन्न हो जाती है।

दादाश्री : ऐसा? तब जब जापानीज़ पुतले को अच्छे कपड़े पहनाते हैं, वहाँ क्यों मोह नहीं होता? स्त्री की मृतदेह हो और उसे अच्छे कपड़े पहनाए जाएँ तो मोह होगा?

प्रश्नकर्ता : नहीं होगा।

दादाश्री : क्यों नहीं होगा? तो इन सभी को किस पर मोह होता है? स्त्री है, कपड़े अच्छे पहने हैं, लेकिन मुर्दा हो और अंदर आत्मा नहीं

हो तो, उस पर मोह होगा? तो मोह किस पर होता है? यह सोचा नहीं है न? जिस में आत्मा नहीं हो, ऐसी स्त्री पर मोह करता है कोई?

प्रश्नकर्ता : नहीं करता।

दादाश्री : तो इसका क्या कारण है? तो वह क्या आत्मा से मोह करता है? तेरी जो बीवी है न, उस पर पिछले जन्म की तेरी दृष्टि चिपक गई थी, उसका यह फल आया है।

प्रश्नकर्ता : मेरा विचार ब्रह्मचर्य लेने का है और उसका ऐसा विचार नहीं है, इसलिए वह ऐसी बिगड़ी है न!

दादाश्री : वही परवशता है न! कितनी अधिक परवशता!

प्रश्नकर्ता : और उसे तो बल्कि आश्चर्य होता है कि 'आपको मेरे प्रति आकर्षण क्यों नहीं होता?'

दादाश्री : उससे ऐसा कहना कि तू जब संडास में जाती है, फिर भी बाहर रहकर मुझे दिखाई देता है, इसलिए आकर्षण नहीं होता।

प्रश्नकर्ता : तब तो वह भड़क जाएगी।

दादाश्री : नहीं, लेकिन उसे समझ में आ जाएगा कि संडास में जाए, ऐसा दिखाई दे तो आकर्षण होगा ही कैसे? वह कैसा खराब दिखेगा? लेकिन यह भी बम फटने जैसा ही हो जाता है न? तब तो यों भी फँसाव हो गया न? लक्कड़ का लड्डू जिसने खाया, वह भी पछताया, नहीं खाया, वह भी पछताया।

दाद खुजलाए ऐसा सुख

प्रश्नकर्ता : दादा, सच बताऊँ तो मुझे अभी भी, कभी-कभी विषय में स्वाद आ जाता है।

दादाश्री : वह स्वाद तुझे छोड़ नहीं रहा है? लेकिन इसमें स्वाद जैसा है ही कहाँ? निरी गंदगी! इस गंदगी को चूसने जाएँ तो भी उसमें

इतनी दुर्गंध है, ओहोहो! इतनी दुर्गंध है! कितनी दुर्गंध होगी? अपार दुर्गंध है! कृपालुदेव ने क्या लिखा है? तूने पढ़ा है? उन्होंने उसका ऐसा वर्णन किया है कि हमें घिन आ जाए।

प्रश्नकर्ता : फिर भी इस इन्द्रिय को उसमें स्वाद आ जाता है न।

दादाश्री : कोई स्वाद नहीं आता। वह स्वाद तो दाद हो गया हो और खुजलाए, ऐसा स्वाद आता है! उसे खुजला रहा हो तब हम कहें कि 'अब बंद करो।' फिर भी उसका ऐसा स्वाद आता है कि वह छोड़ता नहीं है। फिर जलन होती है, तब फिर बुरा लगता है! जलन तो होगी ही न? कृपालुदेव ने इस सुख की तुलना दाद खुजलाने पर होनेवाले सुख के साथ की है। मनुष्य जब विषय करे, उस घड़ी उसका फोटो खींचें तो कैसा दिखेगा?

प्रश्नकर्ता : गधे जैसा।

दादाश्री : ऐसा? क्या बात कर रहा है? ऐसा इन मनुष्यों को शोभा देता है क्या?

विषय का विवरण,'राजचंद्रजी' की दृष्टि से...

पहले के ऋषि-मुनि एक पुत्रदान के लिए ही विषय करते थे, फिर ज़िंदगीभर नहीं।

प्रश्नकर्ता : ज़िंदगीभर नहीं?

दादाश्री : नहीं, शादी किस लिए करते हैं? परस्पर आमने-सामने संसारकाल पूरा करने के लिए, कि 'भई, तुझे इतना काम करना है और मुझे इतना काम करना है।' और स्त्री को भय नहीं लगे और पुरुष को ज़रा हूँफ (अवलंबन, सलामती) रहे।

प्रश्नकर्ता : तो ऋषि-मुनि पूरी ज़िंदगी क्या करते थे?

दादाश्री : यों तो साथ-साथ रहते और खाना-पीना सब होता था। लेकिन साधना ही किया करते थे। भगवान की भक्ति करते। आत्मा के

लिए सबकुछ करते थे! शादी करना, वह तो मदद के लिए शादी करनी होती है, कि संसार में हेल्पिंग हो! अकेला हो, तो क्या करे? कमाने जाए या खाना पकाए? लेकिन यह तो बच्चों के कारखाने खोल दिए! चार-आठ होते हैं, किसी के डज़न भी हो जाते हैं! बच्चों की ज़रूरत नहीं हो, फिर भी विषय में पड़ता है। अरे! बच्चों की ज़रूरत नहीं है तो अब तुझे विषय का क्या करना है? लेकिन उसमें उसे टेस्ट आता है! विषय में भला कौन सा सुख है? श्रीमद् राजचंद्रजी ने तो कहा है कि, 'यह तो वमन करने योग्य भूमिका भी नहीं है। थूकने को कहे तो भी अच्छा नहीं लगे।' अन्य जगह पर थूक सकते हैं, लेकिन यहाँ तो हमें थूकने में भी शर्म आए। लोग कैसा मान बैठे हैं? सब उल्टा ही मान बैठे हैं न?!

कृपालुदेव ने कहा है स्त्री के बारे में....

कृपालुदेव के पत्र में क्या लिखा है? "स्त्री के संबंध में मेरे विचार।"

"अति अति स्वस्थ विचारणा से यह सिद्ध हुआ है कि शुद्धज्ञान के आश्रय में निराबाध सुख है तथा वहीं पर परम समाधि है। स्त्री, वह संसार का सर्वोत्तम सुख है, यह मात्र आवरणिक दृष्टि से कल्पना की गई है, लेकिन वह ऐसा है ही नहीं। स्त्री से संयोग सुख भोगने का जो चिन्ह है, उसे विवेक से दृष्टिगोचर करने पर वमन करने योग्य भूमिका के योग्य भी नहीं रहता।"

कृपालुदेव क्या कहते हैं कि वह स्थान वमन करने योग्य भी नहीं है, इसलिए किसी अन्य अच्छी जगह पर उल्टी करना। फिर आगे क्या कहते हैं कि,

"जिन-जिन पदार्थों पर जुगुप्सा रही है, वे-वे पदार्थ तो उसके शरीर में हैं और वही उनकी जन्मभूमिका है।"

जन्मभूमिका क्यों कहा है कि यह जन्मभूमिका वैसे ही कचरे को जन्म देती है!

प्रश्नकर्ता : जुगुप्सा यानी क्या?

दादाश्री : जुगुप्सा यानी चिढ़। जिन पर चिढ़ होती है, वे सारी चीज़ें उसीमें हैं न! अरे, रेशमी चादर बांध ली तो क्या सब अच्छा हो गया? कृपालुदेव ने तो बहुत कुछ लिखा है, लेकिन लोग क्या समझें बेचारे?

''फिर, वह सुख क्षणिक, खेद और खुजली के दर्द जैसा ही है। उस समय का दृश्य हृदय में अंकित होकर हँसाता है कि यह कैसा भुलावा है? संक्षिप्त में यह कहना है कि उसमें कुछ भी सुख नहीं है और सुख हो तो उसका अपरिच्छेद रूप से वर्णन करके देखो।''

'यानी कि विषय का बहुत विवरण कर-करके जांच करके देखो' कृपालुदेव ऐसा कहना चाहते हैं। उसकी सुगंधी देखनी हो तो, उस जगह को सूँघकर तो देख, तुझे कैसा लगता है? अरे खुली आँखों से दिन के उजाले में देखो, तो वह जगह सुंदर दिखेगी? हर तरह से उस पर चिढ़ होगी!

''अत: मात्र मोहदशा के कारण, ऐसी मान्यता बन गई है, ऐसा ही पता चलेगा। यहाँ मैं स्त्री के अवयवादि हिस्सों का विवेक करने नहीं बैठा हूँ, लेकिन वहाँ फिर से कभी आत्मा नहीं खिंचे, उस विवेक के हेतु से उसका सहज सूचन किया है। स्त्री में दोष नहीं है, लेकिन (व्यवहार) आत्मा में दोष है और वह दोष चले जाने पर आत्मा जो देखता है वह अद्‌भुत आनंदमय ही है, अत: उस दोष से रहित होना वही परम जिज्ञासा है।''

स्त्री का दोष नहीं है, अपनी भूल का दोष है, अपनी समझ का दोष है। स्त्री का क्या दोष? यदि स्त्री में दोष होता तो फिर ये भैंसें भी स्त्री ही हैं न? लोग वहाँ क्यों आकृष्ट नहीं होते? अपनी उल्टी समझ के कारण खिंच जाते हैं। वह उल्टी समझ निकाल दें तो सब निकल जाएगा और कभी न कभी यह उल्टी समझ निकाले बगैर चारा ही नहीं है न? यह गंद है, इतनी अधिक गंद है कि मेरी तो उसके प्रति चिढ़ ही नहीं जाती!

प्रश्नकर्ता : लेकिन उसके बजाय स्त्रियों को शुद्धस्वरूप में, शक्ति के रूप में, आत्मा के रूप में देखें तो?

दादाश्री : शुद्ध रूप में देखें तो बहुत सुंदर कहलाएगा! हम स्त्रियों को शुद्ध स्वरूप में ही देखते हैं, इसलिए हमें बहुत आनंद होता है। शुद्ध स्वरूप में देखने जाएँ तो स्त्री, वह तो बॉक्स है, पैकिंग है। इसमें उस बेचारी का क्या दोष? अपनी ही झंझट है, अपनी दृष्टि उल्टी है। दृष्टि बदल लें तो हमें कुछ छूएगा ही नहीं। अपनी दृष्टि उल्टी है, वही भूल है। उसमें किसी का क्या दोष?

''शुद्ध उपयोग की यदि प्राप्ति हो गई, तो फिर वह समय-समय पर पूर्वोपार्जित मोहनीय को भस्मीभूत कर सकेगा, यह अनुभवगम्य प्रवचन है!''

हाँ, शुद्ध उपयोग की प्राप्ति हो जाए, तो फिर वह मोह को खत्म कर दे!

''लेकिन यदि अभी तक पूर्वोपार्जित मुझे बर्तता है, तब तक मेरी किस दशा से शांति होगी? यह सोचने पर मुझे निम्न प्रकार से समाधान हुआ।''

''स्त्री को सदाचारी ज्ञान देना चाहिए। उसे एक सत्संगी की तरह मानना। उसके साथ धर्मबहन का संबंध रखना। अंत:करण से किसी भी प्रकार से माँ, बहन और उसमें अंतर नहीं रखना। उसके शारीरिक भाग का किसी भी प्रकार से मोहकर्म के वश उपभोग किया जाए, वहाँ पर योग की स्मृति रखकर यह भूल जाना कि 'यह है, तो मैं कैसा सुख अनुभव कर रहा हूँ?' मित्र के साथ, मित्र की तरह साधारण चीज़ का परस्पर उपभोग करते हैं, उसी प्रकार उस चीज़ को लेने का खेद सहित उपभोग करके पूर्वबंधन से छूट जाना। उसके साथ जितना हो सके, उतना निर्विकारी बातें करना।''

प्रश्नकर्ता : योग की स्मृति रखना, यानी क्या?

दादाश्री : योग यानी आत्मयोग की। खुद 'शुद्धात्मा है' उसकी स्मृति रखना और "यह है, तो मैं कैसा सुख अनुभव कर रहा हूँ" यह भूल जाना। उसमें शुद्धात्मा देखकर इस सुख को भूल जाना। आत्मा देखोगे तो कोई हर्ज नहीं है। जैसे मित्र के साथ रहते हैं, वैसे ही स्त्री के साथ रहना।

"स्त्री के संबंध में कोई भी राग-द्वेष रखने की मेरी अंश मात्र भी इच्छा नहीं है। लेकिन पूर्वोपार्जन से, इच्छा के प्रवर्तन में अटका हुआ हूँ।"

लेकिन यह सब यों ही हो पाए, ऐसा नहीं है। बहुत-बहुत सोचे, तब जाकर यह छूटेगा। लेकिन ऐसा बहुत सोचने से भी थक जाएँ, ऐसा है। अत: यदि किसी ऐसे व्यक्ति से मिलना हो जाए कि हम उनके साथ रहें तो हम भी उनके जैसे हो जाएँ, बिना कुछ किए उनके जैसे हो जाएँ, उनका प्रभाव पड़ता रहे अपने पर और हम उसी रूप होते जाएँ। यानी वस्तुस्थिति में अन्य कोई उपाय नहीं है। हमें पहले सारी उलझनें दिखाई दी थीं! पूरा स्थूल भाग सोचकर और पूरा सूक्ष्म भाग दर्शन से देख लिया था! इसीलिए तो जगत् की सारी उलझनें सुलझा देते हैं न!

बुद्धि से भी छूट सकता है विषय

प्रश्नकर्ता : शास्त्रों में भी स्त्री के रूप का बहुत वर्णन किया गया है।

दादाश्री : जिन शास्त्रों में स्त्री के रूप का वर्णन है, वे शास्त्र अलग तरह के हैं। मोक्षमार्ग में स्त्री का वर्णन ऐसा नहीं होता। स्त्री तो देवी है। पहले तो ऐसा रिवाज़ था कि शादी के समय इतनी ही शर्त होती थी कि एक-दो बच्चे पैदा हो जाएँ, उतना ही विषय होता था, बाकी बिल्कुल भी विषय नहीं। विषय में वे लोग पड़ते ही नहीं थे। उन लोगों को लाख रुपये दो फिर भी विषय करने को तैयार नहीं होते थे। उन्हें इतनी जागृति रहती थी कि मैं विषय करूँ, तो फोटो कैसा लगेगा! जबकि आज तो पाँच हज़ार देकर विषय करते हैं न! कोई भान ही नहीं है इन लोगों को। आपको ऐसा लगा है न? हम यह सब उल्टा नहीं बोल रहे हैं न?

प्रश्नकर्ता : एक्ज़ेक्ट है दादा, हन्ड्रिड परसेन्ट करेक्ट है।

दादाश्री : तब लोगों में क्यों ऐसी पोल (जान-बूझकर दुरुपयोग करना, लापरवाही) चल रही होगी? कोई भान ही नहीं है कि कहाँ जा रहे हैं? 'ज्ञानीपुरुष' से विषय की बातें सुनी नहीं हैं, वर्ना विषय रहता ही नहीं, गायब ही हो जाता!

प्रश्नकर्ता : विषय के विरुद्ध बोलें तो बल्कि जगत् के लोग पागल कहते हैं कि 'यह ओल्ड माइन्डेड है।'

दादाश्री : ऐसा नहीं बोल सकते और ऐसा कानून भी नहीं है न! और यह विषय है तो शादीवाले हैं, ये बाजेवाले हैं, ये मंडपवाले हैं। यानी यह है, तो बाकी सबकुछ है, इसलिए कुछ कह नहीं सकते। यह तो जिन्हें मोक्ष में जाना है, उनके जानने योग्य बात है। अन्य किसी को ऐसा जानने की ज़रूरत ही नहीं है न!

ये विषय तो बुद्धि से दूर हो पाएँ, ऐसा है। मैंने विषयों को बुद्धि से ही दूर किया था। ज्ञान नहीं हो, फिर भी बुद्धि से विषय जा सकते हैं। यह तो कम बुद्धिवाले हैं, इसलिए विषय रहा हुआ हैं।

प्रश्नकर्ता : क्या ये बुद्धिशाली भी विषयों का 'वेरीफिकेशन' नहीं करते?

दादाश्री : नहीं, बुद्धिशाली ने विषय का 'वेरीफिकेशन' किया ही नहीं है। बल्कि बुद्धिशाली ही विषय में गहरे उतरे हैं। अरे! यह मरीन ड्राइव और सब जगह जाकर तू उनके विषय देखे तो ऐसा ही समझेगा कि ये मनुष्य हैं या पशु हैं? टब के अंदर नहाते हैं और वह भी इत्र लगाकर। जहाँ दुर्गंध होती है, वहाँ पर हमेशा क्या करना पड़ता है?

प्रश्नकर्ता : हाँ, इत्र लगाना पड़ता है। लेकिन पिछले कितने ही समय से किसी ने ऐसा रास्ता ही नहीं बताया कि इन विषय से बाहर भी कहीं सुख है।

दादाश्री : महावीर भगवान ने यह रास्ता बताया, लेकिन किसी ने

माना नहीं न! इन बुद्धिशाली लोगों ने ही लिखा है कि विषय सुख, विश्व के सभी सुखों से सर्वश्रेष्ठ है। फिर बुद्धिशालियों ने तो यहाँ तक लिखा कि कदली समान उसके पैर हैं, जंघाएँ ऐसी हैं, फलाँ ऐसा है, इस प्रकार स्त्री का सारा वर्णन किया है। इससे फिर लोग पगला गए। लेकिन क्या किसी ने ऐसा लिखा है कि स्त्री जब संडास जाती है, तब कैसी दिखाई देती है? जो संडास जाता हो, उसके साथ विषय किया ही कैसे जाए? उसे छूआ ही कैसे जाए? यह आम यदि संडास जा रहे होते, तो आम को खा ही नहीं सकते थे न? लेकिन आम तो साफ होते हैं, इसीलिए खा सकते हैं न!

एक ने डंक खाया, खिलाया सभी को

यह तो आपको समझाने के लिए कह रहे हैं ताकि आपको संतोष रहे कि हमने जो मार्ग अपनाया है, वह सही है। बाकी, विषय में सुख है ही नहीं, ऐसा तो कोई कहेगा ही नहीं न? सभी लोग विषय में सुख है ऐसा ही सिखाते हैं।

ऐसा है, कि एक व्यक्ति को उँगली में कुछ दर्द हुआ होगा, तब किसी ने कहा कि ततैये की बीट लगाने से ठीक हो जाएगा। इसलिए ततैये की बीट लेने के लिए एक आदमी ने पेड़ के खोखट में हाथ डाला, लेकिन वहाँ अंदर एक बिच्छू बैठा होगा, उसने हाथ डालते ही उसे डंक मार दिया इसलिए बीट नहीं ले पाया और ऊपर से क्या कहा कि, 'मुझसे टूटा नहीं।' तो दूसरे ने कहा, 'तुझसे नहीं टूटा? ला, मैं तोड़ देता हूँ।' फिर दूसरे ने हाथ डाला तो उसे भी बिच्छू ने डंक मारा। तो वह समझ गया कि पहलेवाले ने डंक के बारे में नहीं बताया, इसलिए मुझे भी नहीं बताना है और उसने भी साफ-साफ नहीं बताया। फिर तीसरा गया, उसे भी डंक मारा। इसी तरह बिच्छू सभी को डंक मार ही रहा है, लेकिन कोई कहता नहीं है।

प्रश्नकर्ता : लेकिन इस संसार के लोगों ने तो, खुद उसमें सुख माना है इसीलिए सबको पकड़-पकड़कर कहते हैं कि इसीमें मज़ा है, चलो!

दादाश्री : इन लोगों ने तो विषय के विज्ञापन छापे और सभी लोगों को उस तरफ मोड़ा और फिर भी देखो जलन, देखो जलन, तू मुंबई में जा तो सही! नंगे नाच-गाने देखते हैं, फिर भी जलन! आजकल तो सभी ओर यही तूफ़ान चल रहा है न? और उसकी वज़ह से जलन भी बेहद पैदा हुई है। ऐसी जलन पैदा हुई है कि शराब भी पीनी पड़ती है। स्त्री रखनी पड़ती है। सबकुछ मिलता है फिर भी उसे शांति नहीं होती। इसलिए फिर उसे मन में ऐसा होता है कि आत्महत्या कर लूँ। फिर पूरा दिन पीता रहता है। फिर देखो रात-दिन जलन, जलन और जलन! ऐसा होता है फिर!

प्रश्नकर्ता : रास्ता ही नहीं मिले तो क्या करे?

दादाश्री : रास्ता दिखानेवाला कोई है ही नहीं। हर कोई विषय का मार्ग ही दिखाता है। माँ-बाप भी कहेंगे कि, 'शादी कर ले, भई। हम खुद तो फँसे हुए है, तुझे भी फँसाए बगैर हम रहेंगे ही नहीं न!'

प्रश्नकर्ता : उसमें यदि कोई ब्रह्मचर्य की ओर जाए, उसके तो सभी विरोधी हो जाते हैं।

दादाश्री : हाँ, लोगों को नाम चलाना है, 'मेरे बेटे के बेटे ने नाम कमाया है' कहेंगे! फिर वह फँसे तो भले ही फँसे, लेकिन 'मेरा नाम तो हो जाए,' कहेंगे!

[३]

अणहक्क की गुनहगारी

अणहक्क से सावधान नहीं रह पाएँ तो....

यदि तू संसारी हैं तो तेरे हक़ का विषय भोगना, लेकिन *अणहक्क* (बिना हक़ का, अवैद्य) का विषय तो भोगना ही मत। क्योंकि इसका फल भयंकर है और यदि तू त्यागी है तो तेरी विषय की ओर दृष्टि जानी ही नहीं चाहिए। *अणहक्क* का ले लेना, *अणहक्क* की इच्छा करना, *अणहक्क* के विषय भोगने की भावना करना, वह सब पाशवता कहलाती है। हक़ (वैद्य) और *अणहक्क* इन दोनों के बीच में लाइन ऑफ डिमार्केशन तो होनी चाहिए न? और उस डिमार्केशन लाइन से बाहर निकलना ही नहीं चाहिए। फिर भी लोग डिमार्केशन लाइन से बाहर निकले हैं न?! वही पाशवता कहलाती है। हक़ का भोगने में हर्ज नहीं है।

भगवान महावीर भी खुद के हक़ का भोगते थे। वे थाली फेंक नहीं देते थे। जो हक़ का भोगे, उसे चिंता नहीं होती।

प्रश्नकर्ता : लेकिन हक़ का किसे कहें और *अणहक्क* का किसे कहें?

दादाश्री : अपने खुद के हक़ की चीज़ के बारे में हर एक व्यक्ति समझता है। यह मेरा और यह पराया, सभी ऐसा तुरंत ही समझ जाते हैं। मेरा बिस्तर कौन-सा, मेरा तकिया कौन-सा, यह सब तो छोटा बच्चा भी समझ जाता है। मेरी भोजन की थाली आए तो मैं अपने आप उसमें जो रखा हो वह सब खाऊँ, तो वह हक़ का कहलाएगा। उसके लिए कोई शिकायत नहीं करेगा, कोई एतराज़ नहीं करेगा, कोई दावा नहीं करेगा।

अपने यहाँ शादी करवाते हैं, तो वह शादी करवाई यानी आप दोनों के हक़ का है। उसमें भगवान को एतराज़ नहीं है, लेकिन *अणहक्क* का होगा तो एतराज़ है। क्योंकि *अणहक्क* का यानी दूसरे के हक़ का उसने लूट लिया। चोर तो अच्छे होते हैं कि लक्ष्मी ही लूटते हैं, लेकिन ये तो कुछ और ही चीज़ें लूट ले जाते हैं। फिर कहेगा कि, 'मुझे मोक्ष में जाना है।' अरे, यह मार्ग मोक्ष में जाने का है ही नहीं। यह तो उल्टा ही रास्ता अपनाया है। *अणहक्क* का भोग लेते हैं या नहीं भोगते? भोगते हैं, और वह भी चोरी-छुपे नहीं, रोब से भोगते हैं।

प्रश्नकर्ता : जानते हैं फिर भी *अणहक्क* का भोगने का प्रयत्न करते हैं।

दादाश्री : इसीलिए तो ये दु:ख हैं न? इसीलिए यह संसार खड़ा है। संसार में सुख चाहिए तो *अणहक्क* का मत भोगना। *अणहक्क* का भोगे, उसमें मन से ऐसा मानता है कि 'मैं सुखी हूँ,' बस उतना ही है। बाकी, उसमें 'सेफसाइड' नहीं है और मैं जो बात बता रहा हूँ, उसमें तो हमेशा के लिए 'सेफसाइड' है।

प्रश्नकर्ता : *अणहक्क* का भोगने के लिए कौन सी वृत्ति घसीट ले जाती है?

दादाश्री : उसकी चोर नीयत है, वही वृत्ति।

प्रश्नकर्ता : नहीं, लेकिन आप कहते हैं कि हम यदि *अणहक्क* का भोगने नहीं जाएँ, फिर भी हमें जो मिलनेवाला है वह तो मिलेगा ही, लेकिन लेने जाएँ तो उससे नये परिणाम पैदा होते हैं न?

दादाश्री : एक सेठजी का खेत हमारे खेत के पास ही था, और एक चाचा का खेत भी पास में था। उसमें जहाँ कहीं घीया दिखाई देता था उसे हम तोड़कर ले आते थे। तब क्या वह हक़ का कहलाएगा? हमें उनसे कहना चाहिए था कि मैं आपके खेत में से घीया तोड़कर ले जाऊँगा या फिर तोड़ने के बाद भी मुझे बता देना चाहिए। लेकिन *अणहक्क* का तो लेना ही नहीं चाहिए।

लोगों ने *अणहक्क* का खाया और पीया है, *अणहक्क* का तो सभीकुछ किया, कुछ भी करना बाकी नहीं रखा न! संसार यानी 'हक़ का भोगना' ऐसा कहते हैं, और हक़ का भोगने में हर्ज नहीं है। यदि शादी करो और एक से आपको संतोष नहीं हो तो दो शादियाँ करना। बाकी, अपने यहाँ तो तेरह सौ स्त्रियों के साथ शादी करनेवाले भी थे! उसमें भी स्त्री-पुरुष दोनों का हक़ का हो, मालिकी का हो तो उसमें हर्ज नहीं है। हक़ का किसे कहते हैं? जिसे पूरा समाज कबूल करे। शादी के समय सभी बारात में भी आते हैं। लेकिन यदि *अणहक्क* का हो तो गड़बड़ है।

घर में हक़ की होती है, लेकिन फिर भी बाहर अन्य जगह दृष्टि बिगाड़ता है। हक़ का भोगो न। अन्य कहीं *अणहक्क* की ओर दृष्टि ही क्यों जाए? आपसे जिसने शादी की है, उसके अलावा अन्य कहीं भी पूरी ज़िंदगी दृष्टि बिगड़नी ही नहीं चाहिए। हक़ का छोड़कर अन्य किसी जगह पर 'प्रसंग' हुआ, तो वह स्त्री जहाँ जाए, वहाँ आपको भी जन्म लेना पड़ेगा। वह अधोगति में जाए तो आपको भी वहाँ जाना पड़ेगा। आजकल बाहर तो हर जगह ऐसा ही होता है। 'कहाँ जन्म होगा?' इसका ठिकाना ही नहीं है। *अणहक्क* के विषय जिन्होंने भोगे हैं, उन्हें तो भयंकर यातनाएँ भुगतनी पड़ेंगी। एकाध जन्म बाद उसकी बेटी भी चरित्रहीन बनती है। नियम कैसा है कि जिसके साथ *अणहक्क* के विषय भोगे हों, वही फिर उसकी माँ बनती है या बेटी बनती है। जब से *अणहक्क* का लिया, तभी से मनुष्यपन चला जाता है। *अणहक्क* का विषय तो भयंकर दोष कहलाता है। 'हम किसी का भोग लेंगे तो हमारी बेटियों को कोई अन्य भोग लेगा,' उसकी चिंता ही नहीं है न! उसका अर्थ यही हुआ न? और ऐसा ही हो रहा है न?! उसकी बेटियों को लोग भोगते ही हैं न? यह बड़ी नालायकी कही जाएगी, 'टोपमोस्ट' नालायकी कही जाएगी। खुद के घर में बेटियाँ हैं फिर भी दूसरों की बेटियों की ओर देखता है? शर्म नहीं आती? 'मेरे घर में भी बेटियाँ हैं,' ऐसा भान रहना चाहिए या नहीं रहना चाहिए? हम किसी और के घर में चोरी करें तो कोई अपने घर में भी चोरी किए बगैर रहेगा ही नहीं न? जहाँ *अणहक्क* के विषय हों, वहाँ वह किसी भी प्रकार से सुखी नहीं रह सकता। पराया लिया ही कैसे जा सकता है?

लोगों ने विषयों की लूटमार मचाई है। हम सभी से नहीं कह रहे हैं। क्योंकि 'एक्सेप्शनल केस' सभी में होता ही है। लेकिन काफी कुछ माल ऐसा हो गया है कि जो विषयों की लूटमार और *अणहक्क* के विषय भोगते हैं। हक़ के विषय के लिए तो भगवान ने भी मना नहीं किया है। यदि भगवान मना करें तो भगवान गुनहगार कहलाएँगे। *अणहक्क* के लिए तो मना करेंगे ही। यदि पछतावा करे तो भी छूट जाएगा। लेकिन यह तो आनंद से *अणहक्क* का भोगता है। इसलिए पक्की गाँठ लगा लेता है, जिससे कितने ही जन्म बिगाड़ देता है। लेकिन पछतावा करे तो पक्की गाँठ ढीली पड़ जाती है और छूटने का अवसर मिलता है।

जैसे खुद की स्त्री होती है, वैसे ही हर एक के लिए उसकी स्त्री होती है। हर एक लड़की ने किसी की स्त्री बनने के लिए ही जन्म लिया होता है, वह पराया धन कहलाती है। किसी की स्त्री को किसी अन्य प्रकार से नहीं देखना चाहिए। पिछले संस्कारों की वज़ह से भूल से देख लिया हो, तो प्रतिक्रमण करना चाहिए। इतना ही सँभालने की ज़रूरत है। अन्य कुछ सँभालने की ज़रूरत नहीं है।

अणहक्क से भंग पाँचों महाव्रत

यानी अपने घर के सभी लोगों पर बिल्कुल कंट्रोल रखना चाहिए, वर्ना फिर जब नाक कटेगी तो शोर मचाएँगे। खुद शीलवान होगा तो उसकी बेटियाँ भी शीलवान होंगी, वर्ना जहाँ खुद का ही ठिकाना नहीं हो तो वहाँ बेटियाँ बिगड़ ही जाएँगी न फिर? फादर का व्यवहार ऐसा नहीं दिखना चाहिए कि बेटियों को मन में फादर का ज़रा सा भी दोष दिखाई दे। बेटियों को फादर का एक भी दोष नहीं दिखाई दे, फादर को अपना जीवन इस तरह से जीना चाहिए। यह भी कोई फादर है? ये तो आधे जानवर ही हैं। फादर तो कैसे होते हैं कि बच्चों को उनके निजी जीवन के बारे में ज़रा सा भी मालूम नहीं चले।

प्रश्नकर्ता : पहले तो सामाजिक भय भी बहुत रहते थे न?

दादाश्री : हाँ, उस सामाजिक भय की ज़रूरत थी। उसी भय से

लोग सीधे रहते थे। हमारे समय में तो विचार तक नहीं आते थे। लड़के-लड़कियाँ सभी घूमते थे, फिर भी विचार ही नहीं। उस प्रकार के संस्कार थे ही नहीं।

किसी की बेटी जा रही हो और उस पर दृष्टि बिगड़े, तो उस घड़ी तुरंत ही विचार नहीं आना चाहिए कि मेरी बेटी पर कोई दृष्टि बिगाड़े तो मुझे कितना बुरा लगेगा? ऐसा विचार नहीं आना चाहिए?

प्रश्नकर्ता : आता ही है।

दादाश्री : ऐसा विचार आए तभी वह मनुष्य है। और जो दूसरों पर दृष्टि बिगाड़े, उसे मनुष्य कहेंगे ही कैसे? ये सारी *अणहक्क* की जो चीज़ें हैं, उन पर दृष्टि नहीं बिगाड़नी चाहिए न? खुद के हक़ की स्त्री हो, तो उसके लिए किसी प्रकार का एतराज़ नहीं है। संसार के लोग भी कहते हैं कि, 'नहीं भाई, यह तो अच्छा है, उसकी स्त्री है।' कंधे पर हाथ रखकर जा रहा हो, तब भी लोग बाद में ऐसे ही टीका-टिप्पणी करते हैं। लेकिन फिर कहेंगे कि, 'भई, उसकी पत्नी है।' तो उसमें हर्ज नहीं है, लेकिन *अणहक्क* के लिए तो लोग टीका भी करते हैं और निंदा भी करते हैं। करते हैं या नहीं करते? और जब जगत् निंदा करे न, तो वहाँ अपना सब, सभी दोष घेर लेते हैं। इसीलिए *अणहक्क* का बहुत नुकसानदेह है न?

पत्र लिखा लेकिन जब तक पोस्ट नहीं किया, तब तक नीचे एक लाइन लिख सकते हैं कि इस पत्र में पहले, हमने आपको जो-जो गालियाँ दी हैं, उसके लिए हम माँफी माँगते हैं। ऐसा वाक्य नीचे लिख सकते हैं।

प्रश्नकर्ता : उससे ऊपर का सब मिट जाएगा।

दादाश्री : मिट जाएगा। उसका अर्थ सुल्टा हो जाएगा। इसलिए आज एक घंटा प्रतिक्रमण करना अच्छी तरह।

प्रश्नकर्ता : चरित्र भ्रष्टता, वह आत्मा के मार्ग में जाने से रोकती है?

दादाश्री : वह तो नर्क में जाने की निशानी है।

आपको हक़ कितना है कि जिस स्त्री के साथ आपने शादी की,

उस स्त्री के साथ आप जा रहे होंगे तो कोई उँगली नहीं उठाएगा और परस्त्री के साथ जा रहे होंगे तो संसार के लोग भी उँगली उठाएँगे। यानी जहाँ कहीं भी आप पर उँगली उठे, वहाँ नर्कगति है। यदि आपकी दृष्टि बिगड़ी तो *अणहक्क* का है, और *अणहक्क* का भोगने की इच्छा की, तो वहाँ पर जानवर गति है।

प्रश्नकर्ता : आपने ऐसा कहा है न कि *अणहक्क* के विषय नर्क में ले जाते हैं। ऐसा क्यों?

दादाश्री : *अणहक्क* के विषय में हमेशा कषाय होते हैं और जब कषाय हों तो नर्क में जाना पड़ता है। लेकिन लोगों को इसकी खबर नहीं है, इसलिए फिर डरते नहीं हैं, डर भी नहीं लगता (घबराहट भी नहीं होती) किसी तरह की। आज का यह मनुष्य जन्म तो, पिछले जन्म में कुछ अच्छा किया था, उसका फल है।

प्रश्नकर्ता : स्वर्ग और नर्क, दोनों यहीं पर हैं? उन्हें यहीं पर भुगतना है?

दादाश्री : नहीं, यहाँ पर नहीं हैं। यहाँ पर तो नर्क जैसी चीज़ है ही नहीं। नर्क का यदि मैं वर्णन करूँ और मनुष्य उसे सुने, तो सुनते ही मर जाए, इतने दुःख हैं! वहाँ पर तो, जिसने भयंकर गुनाह किए हों, उसी को प्रवेश करने देते हैं। यहाँ स्वर्ग-नर्क जैसा कुछ है ही नहीं। यहाँ तो कम पुण्यवालों को कम सुख और ज़्यादा पुण्यवालों को ज़्यादा सुख है। किसी के पाप हों, तो उसे दुःख मिलता है।

अणहक्क में तो पाँचों महाव्रतों के भंग का दोष समा जाता है। उसमें हिंसा हो जाती है, झूठ होता है, चोरी यानी यह तो सरेआम चोरी कहलाती है। *अणहक्क* यानी सरेआम चोरी कहलाती है। फिर अब्रह्मचर्य तो है ही और पाँचवाँ है परिग्रह, यह तो सबसे बड़ा परिग्रह है। हक़ के विषयवालों के लिए मोक्ष है, लेकिन *अणहक्क* के विषयवालों के लिए मोक्ष नहीं है, ऐसा भगवान ने कहा है।

खुद के हक़ के विषय हों, तो भोगना लेकिन *अणहक्क* का विचार

तक नहीं आना चाहिए। हक़ का विषय हो तो उसके लिए हम, दोनों के लिए विधि कर देते हैं। उनके लिए अबंधभाव की विधि रख देते हैं। लेकिन हक़ में भी खुद की राज़ी-खुशी से नहीं होना चाहिए। जैसे पुलिसवाला पकड़कर मांसाहार करवाए, वैसा होना चाहिए।

प्रश्नकर्ता : यानी खुद के उदयकर्म अनुसार?

दादाश्री : नहीं। उदयकर्म में तो *अणहक्क* का भी हो सकता है, लेकिन *अणहक्क* का होना ही नहीं चाहिए। हक़ का यानी जिसे जगत् के लोग एक्सेप्ट करें, लोग निंदा नहीं करें ऐसा होता है और वह भी खुद की पत्नी के साथ ही होना चाहिए, लोकमान्य होना चाहिए। जो खुद को भी नहीं खटके, भय न लगे। वर्ना *अणहक्क* में तो भय रहता है, कंकड़ खटके ऐसे खटकता रहता है।

हरहाये पशु की क्या गति?

इन लोगों को तो कुछ भान ही नहीं होता न? और हरहाये जैसे होते हैं। हरहाया यानी आप समझे न? आपने हरहाया देखा है? हरहाया यानी जिसका हाथ में आया, उसीका खा जाए। इस भैंस बंधु को आप पहचानते हो क्या? वह सभी के खेतों का सफाया ही कर देता है। उसी प्रकार यह जगत् हरहाये भैंसे जैसा है। अरे, तूने सोचा नहीं कि तेरी भी बहन-बेटी है। तू दूसरी जगह से ले रहा है, तो उसके फलस्वरूप तेरा यह जाएगा। आप जैसा धक्का लगाओगे, वैसा ही परिणाम उत्पन्न होगा। यह जगत् बिगाड़ने जैसा नहीं है। बिगड़ गया हो तो उसे सहन कर लेना। वापस नये सिरे से मत बिगाड़ना। यह तो, हरहाये पशु के सामने जो आया सो खा जाता है, तभी फिर लोग उसकी बेटियों को खा जाते हैं। इसकी लोगों को कुछ परवाह ही नहीं है। सभी यदि ऐसे ही हरहाये हो जाएँ तो क्या रहा?

बहुत ही कम लोग ऐसे हैं कि जिन्हें इसका महत्व समझ में आया है। बाकी जब तक नहीं मिला तब तक हरहाया नहीं है! मिला कि हरहाया होते देर नहीं लगती। यह शोभा नहीं देता हमें! अपने हिन्दुस्तान की कैसी डेवेलप्ड प्रजा! हमें तो मोक्ष में जाना है!

पहले के काल में मनुष्य कैसे होते थे? परायी बहन-बेटी को भी खुद की बहन-बेटी समान मानते थे और खुद की भी खुद की। कैसा सुंदर वातावरण था! यह तो सब 'फ्रैक्चर' हो गया है, फिर सुख कैसे मिलेगा? सांसारिक सुख तो इसमें है ही नहीं।

थ्री विज़न की जागृति बहुत ही कम

अणहक्क का हो तो लोग मारने दौड़ते हैं, ऐसा क्यों? *अणहक्क* का डाका डाला इसलिए! *अणहक्क* का डाका क्या जान-बूझकर डालते हैं? नहीं, वह तो दृष्टि ही ऐसी हो गई है। लोगों की दृष्टि तो तरह-तरह की होती है। आपकी दृष्टि भले ही सीधी हो, फिर भी वह स्त्री आपकी दृष्टि आकृष्ट कर लेगी। अतः वहाँ फिर नज़र मिलाओ तो झंझट हो जाएगा न! ज्ञानीपुरुष को तो किसी के भी सामने देखने में हर्ज नहीं है। क्योंकि उनके पास तो हर तरह के 'लॉक एन्ड की' होते हैं, उनके सामने किसीकी भी नहीं चलती। लेकिन सभी तरह के 'लॉक एन्ड की' कब मिलते हैं कि जब विषय बंद हो जाए, उसके बाद। यानी ज्ञानीपुरुष में विषय होता ही नहीं, इसलिए उनके पास ऐसा व्यवहार ही नहीं आता न? विषय कब जाता है? विषय तो जागृति से जाता है। विषय यों ही चला जाए, ऐसा नहीं है। अंतिम विषय, एक हक़ का विषय भी कब छूटता है? जागृति हो तभी। जागृति किसे कहते हैं कि स्त्री-पुरुष कपड़े पहने हुए हों फिर भी नंगे दिखाई दें, फिर 'सेकन्ड विज़न' में चमड़ी निकल गई हो ऐसे दिखाई दें और 'थर्ड विज़न' में अंदर का सारा माल मसला हुआ हो, ऐसा दिखाई दे। ये तीनों विज़न 'एट-ए-टाइम', एक मिनट में ही दिख जाएँ। अब इतनी जागृति होगी, तब जाकर अंतिम स्टेशन तक पहुँच पाएँगे। पूरी दुनिया में ऐसी जागृतिवाले कितने होंगे? सौ-दो सौ लोग होंगे न? किसी भी काल में एक भी व्यक्ति ऐसी जागृतिवाला नहीं होता। इस काल में, यह मैं अकेला ही हूँ। ऐसी जागृतिवाले तो होते होंगे? खुद देहधारी होने पर भी ऐसी जागृति तो रहती होगी? बड़ा साइन्टिस्ट हो या मानसशास्त्री हो, लेकिन ऐसी जागृति रह ही नहीं पाती न!

प्रश्नकर्ता : आपके ज्ञान के बाद, यह जानने के बाद कुछ महात्माओं की ऐसी जागृति हो गई होगी न?

दादाश्री : ऐसा थोड़ा बहुत हुआ है, लेकिन ज़्यादा नहीं हो पाती न? 'जब तक वह प्रयोग है, तब तक वह जागृत है', ऐसा नहीं कहा जा सकता। और यदि जागृत होते तो कीचड़ में हाथ ही नहीं डालते। और इस जूठन में हाथ डालता है, तो वह जागृत है ही नहीं, अभान हैं।

अणहक्क का विषय ले जाए नर्क में

निरंतर आज्ञा में रहा जा सके, निरंतर समाधि में रहा जा सके, अपना यह मार्ग ऐसा सरल और समभावी है। आम वगैरह सभी खाने की छूट दी है। सिर्फ एक विषय ही, खुद की स्त्री या खुद के पुरुष के सिवा अन्य विषय नहीं होना चाहिए। और विषय, जो *अणहक्क* का विषय संबंध है, उससे तो अधोगति को ही निमंत्रण दिया जाता है। और विषय में तो कौन सा सुख है? इन जानवरों को भी उसमें सुख नहीं दिखाई देता। जानवर भी केवल सीज़न में ही विषय में पड़ते हैं, वह भी सीज़नल आवेग होता है (उत्तेजना होती है)। जानवरों को भी यह पसंद नहीं है। इसीलिए तो ये सभी ब्रह्मचर्य व्रत लेकर बैठे हैं। इन्हें विषय में कहीं सुख नहीं दिखाई दिया। जिनके मुँह से दुर्गंध आती हो, जिस शरीर में से रात-दिन निरी गंदगी ही निकलती है, उसके प्रति विषय कैसे उत्पन्न होता होगा?

यह तो, यदि आज्ञा पालन का सेटिंग कर दे, तो सब ठीक हो जाएगा। खुद की पत्नी के अलावा अन्य कहीं भी *अणहक्क* के विषय भोगने जाए तो वह नर्कगति का संकेत है।

प्रश्नकर्ता : यह ज्ञान मिला और ऐसे *अणहक्क* का हो जाए तो जोखिमदारी बढ़ जाएगी न?

दादाश्री : भयंकर। बाद में ही जोखिमदारी बढ़ती है न! वर्ना पहले भी जोखिमदार तो था ही, जानेवाला ही था जानवर में। उसे कोई परवाह ही नहीं थी न! अब अध्यात्म मार्ग पर आने के बाद यदि ऐसी भूल होती रहे तो क्या होगा? हो सके उतना आज्ञा पालन करना, आज्ञा में आ जाना। ब्रह्मचर्य में आए और यह ज्ञान है, तो फिर सुख की कमी नहीं रहेगी।

अब्रह्मचर्य तो ऐसा है कि इस जन्म में पत्नी हो, या फिर कोई रखैल

हो तो अगले जन्म में उस की बेटी बनकर खड़ी रहेगी, ऐसी इस संसार की विचित्रता है। इसीलिए तो सयाने पुरुष ब्रह्मचर्य का पालन करके मोक्ष में चले गए न!

जो हक़ की मर्यादा में हैं, उनकी गारन्टी

प्रश्नकर्ता : बचपन से ही मुझे लड़कियों में बहुत ही रुचि रही है।

दादाश्री : लड़कियाँ देखने में या लड़कियों में?

प्रश्नकर्ता : सभीकुछ है। पहले देखने में थी फिर....

दादाश्री : यही रोग है। यही पोल है। मैं यही पूछता हूँ, तुम हो कहाँ पर? यहाँ तो हो नहीं, वहाँ पर तो हो न? लड़कियों के बारे में, आपका सोचा हुआ कितना सफल हुआ?

प्रश्नकर्ता : इस बारे में आज तक मुझे किसी ने कोई जानकारी दी ही नहीं।

दादाश्री : परायी स्त्री या परायी लड़की पर तनिक भी दृष्टि बिगड़े तो वह भयंकर पाप है। तेरी खुद की स्त्री हो तो हर्ज नहीं है। लेकिन परायी के पीछे पड़ा तो यहाँ पर तो हरहाया रहा, लेकिन वहाँ भी (दूसरे जन्म में) दुम के साथ हरहाया होकर उछल-कूद मचाएगा। यह मनुष्य जन्म चला जाएगा। महामुश्किल से मिला यह मनुष्यपन चला जाएगा। इसलिए सावधान हो जा ज़रा।

तुलसीदास जी को पूरा शास्त्र लिखने का अवसर तो नहीं मिला लेकिन दो ही पँक्तियाँ बोले,

'परधन पत्थर मानिए, पर-स्त्री मात समान,

इतने से हरि ना मिले, तो तुलसी जमान।'

कृपालुदेव तो ज़मानती बने और ये दूसरे ज़मानती। हक़ का खाए तो मनुष्य में आएगा, *अणहक्क* का खाए तो जानवर में जाएगा।

प्रश्नकर्ता : हमने *अणहक्क* का खाया तो है।

दादाश्री : खाया है तो अभी भी प्रतिक्रमण करो न, अभी भी भगवान बचा लेंगे। अभी भी जिनालय में जाकर पश्चाताप करो। अभी तो जीवित हो। इस देह में हो, तब तक पश्चाताप करो।

प्रश्नकर्ता : सिर्फ पश्चाताप करने से क्या होगा?

दादाश्री : वह आपको समझ में आए तो करो। ज्ञानीपुरुष की बात माननी हो तो मानो। नहीं माननी हो तो आपकी मरज़ी की बात है। यदि आप को नहीं माननी हो तो उसका कोई उपाय नहीं है। अभी भी पश्चाताप करोगे तो गाँठें ढीली हो जाएँगी और ऊपर से राज़ी-खुशी से किया है। इसलिए नर्कगति बाँध चुके हो। *अणहक्क* का खाया तो सही, लेकिन राज़ी-खुशी से करे तो नर्कगति में जाएगा और यदि पश्चाताप करे तो जानवर में जाएगा। भयंकर नर्कगति भुगतनी है। इसलिए यदि *अणहक्क* का जितना खाना हो, उतना खाना लोगों का।

प्रश्नकर्ता : इन सभी में से छूटने का श्रेष्ठ उपाय क्या है?

दादाश्री : *अणहक्क* का जो खाया है उसका पश्चाताप करो। *अणहक्क* का खाने का विचार आए तो भी पश्चाताप करो। पूरे दिन पश्चाताप में ही रहो कि इस तरह नहीं खाना चाहिए। मुझे तो जो मेरे हक़ का हो, वही मेरे काम का है। खुद के हक़ की स्त्री हो, खुद के हक़ के बच्चे हों, घर-मकान सब खुद का हो, लेकिन परायों के हक़ का कैसे लिया जाए? उसे फिर जानवर हुए बिना चारा नहीं है, नर्कगति के अधिकारी हो गए हैं। भयंकर दुःख में फँसे हैं। अभी भी सतर्क होना हो, तो हो जाओ। ये ज्ञानीपुरुष क्या कहते हैं कि, 'आपको पश्चाताप रूपी हथियार दिया है, प्रतिक्रमण करते रहना।'

'हे भगवान! नासमझी में, खराब बुद्धि से, कषायों से प्रेरित होकर मैंने ये जो दोष किए हैं, भयंकर दोष किए हैं, उनके लिए क्षमा माँगता हूँ।' कषायों की प्रेरणा से किए हैं, आपने खुद नहीं किए हैं। अभी भी करना हो तो प्रतिक्रमण करना, नहीं करना हो तो आपकी मरज़ी की बात है।

[४]

एक पत्नीव्रत का अर्थ ही ब्रह्मचर्य

जो लोकनिंद्य नहीं, वही लोकपूज्य

कलियुग में एक गृहस्थ में सिर्फ कितना विकार होना चाहिए कि उसकी स्त्री तक का ही। गृहस्थधर्म है इसलिए उसकी पत्नी तक ही विकार सीमित हो, तो भगवान ने उसे एक्सेप्ट किया है। एक पत्नीव्रत के लिए भगवान ने छूट दी है। अन्य कहीं दृष्टि भी नहीं बिगड़े, बाहर जाए या कहीं भी जाए लेकिन दृष्टि नहीं बिगड़े, विचार भी नहीं आए, यदि विचार आ जाए तो क्षमा माँग ले, ऐसा एकपत्नीव्रत हो तो भगवान को एतराज़ नहीं है! वे तो क्या कहते हैं कि, 'इस काल में एक पत्नीव्रत को हम ब्रह्मचर्य कहेंगे और जो लोकनिंद्य नहीं है उसे हम लोकपूज्य कहेंगे।' भगवान कैसे समझदार हैं! इस काल में जहाँ-तहाँ हर जगह लोगों की निंदा ही हो रही है और लोग निंद्यकर्म ही कर रहे हैं न! व्यापार में भी और धर्म में भी, सभी जगह यही धंधा किया है न! उसमें भी कोई अपवाद होगा। अपवाद तो होते ही हैं हमेशा। फिर भी हिन्दुस्तान में तो आज सात्विक विचार के लोग होने लगे हैं। आगे चलकर अच्छा होनेवाला है।

'एक पत्नीव्रत' इस काल का ब्रह्मचर्य ही

जिसने शादी की है, उसके लिए तो हमने एक ही नियम दिया है कि तुझे अन्य किसी स्त्री के प्रति दृष्टि नहीं बिगाड़नी है। और शायद कभी ऐसी दृष्टि हो जाए तो प्रतिक्रमण विधि करना और निश्चय करना कि ऐसा फिर से नहीं करूँगा। जो खुद की स्त्री के अलावा अन्य स्त्री की ओर

नहीं देखता, अन्य स्त्री पर जिसकी दृष्टि नहीं रहती, दृष्टि जाए फिर भी उसके मन में विकारी भाव नहीं होते, विकारी भाव हो जाएँ तो वह खुद बहुत पछतावा करता है, तो इस काल में उसे एक पत्नी होने के बावजूद भी, 'ब्रह्मचर्य में है', ऐसा कहा जाएगा।

आज से तीन हज़ार साल पहले हिन्दुस्तान में सौ में से नब्बे लोग एक पत्नीव्रत का पालन करते थे। एक पत्नीव्रत और एक पतिव्रत, कितने अच्छे लोग कहलाएँगे वे! जबकि आज तो शायद ही हज़ारों में एक होगा।

इस काल में जिसे परस्त्री का विचार तक नहीं आए और एक ही स्त्री के साथ रहे, फिर भी हम उसे ब्रह्मचर्य कहते हैं। यदि उसे स्वरूप का ज्ञान नहीं हुआ होगा, फिर भी वह देवगति में जाएगा। बोलो, तब इस देवगति में कितनी सुविधाएँ हैं! दूसरा, यदि आइस्क्रीम खाने की आदत होगी, उसमें भी हर्ज नहीं है। सिनेमा देखने की आदत होगी, उसमें भी हर्ज नहीं है, लेकिन यह स्त्री-पुरुष के विषय संबंध का बड़ा गुनाह है। उसमें भी जिससे शादी की हो, वहाँ तक कोई आपत्ति नहीं है। क्योंकि 'बाउन्ड्री' है। 'बाउन्ड्री' चूकने में आपत्ति है। क्योंकि आप संसारी हो, अतः 'बाउन्ड्री' होनी चाहिए। 'बाउन्ड्री' से बाहर मन भी नहीं चूकना चाहिए, वाणी भी नहीं चूकनी चाहिए, विचार भी नहीं चूकना चाहिए। एक पत्नीव्रत के सर्कल में से विचार बाहर नहीं जाना चाहिए और जाए तो विचार को वापस बुला लेना। यह काल विचित्र है, अतः 'बाउन्ड्री' से बाहर नहीं जाना चाहिए।

यदि कोई इस काल में एक पत्नीव्रतवाला होगा तो भी बहुत उत्तम। मैं उसे कहूँ कि, 'भाई, तुझे ज्ञान लेने की भी ज़रूरत नहीं है। यदि तुझे अन्य स्त्री से संबंधित विचार तक नहीं आता, दृष्टि भी नहीं बिगड़ती और तुझे सपने में भी अन्य स्त्री नहीं आती, तो जा, तुझे ज्ञान लेने की भी ज़रूरत नहीं है।' हमारे एक ही बार आशीर्वाद देने से वह तीसरे जन्म में मोक्ष में चला जाएगा! बिना ज्ञान के! एक पत्नीव्रत, वह क्या कोई ऐसी-वैसी चीज़ है? जिसे एक पत्नीव्रत रहे, उसे इस काल में ब्रह्मचारी ही कहा जाता है। इस काल में मनुष्य एक पत्नीव्रत में रह ही नहीं सकता। हिन्दुस्तान

में पच्चीस–पचास लोग ऐसे निकलेंगे, लेकिन वे भी फिर जड़ भाववाले होते हैं, बुद्धिपूर्वक नहीं, अबुद्धिपूर्वक के और वह भी उनके पुण्य के आधार पर होता है।

शादी चार से करो, लेकिन उन्हीं के प्रति सिन्सियर

यह तो, और कोई चारा नहीं हो तो शादी करना, ऐसा कहा है और शादी करो तो एक पत्नीव्रत का पालन करना, कहा है। एक पत्नीव्रत का पालन कर रहा हो और यह दूषमकाल होने के बावजूद भी यदि अन्यत्र दृष्टि नहीं बिगड़े तो उसे ब्रह्मचर्य कहा है।

प्रश्नकर्ता : मान लीजिए कि दो वाइफ हों तो उसे किस दृष्टि से खराब कहा जाएगा?

दादाश्री : लाओ न दो वाइफ, शादियाँ करने में हर्ज नहीं है। पाँच शदियाँ करो तो भी हर्ज नहीं है। लेकिन अन्य स्त्री पर दृष्टि बिगाड़े, अन्य स्त्री जा रही हो और उस पर दृष्टि बिगाड़े तो वह गलत कहा जाएगा। कुछ नीति–नियम तो होने चाहिए न?

प्रश्नकर्ता : मेरे पास कोई प्रिन्सिपल्स (सिद्धांत) नहीं है।

दादाश्री : तो क्या जानवर जैसा रखने की ज़रूरत है? जानवर की तरह रखें तो सब छूट ही होती है। आपको जैसा अनुकूल आए वैसा करना। इन मनुष्यों ने, उनके मानवधर्म की रक्षा हो, इसलिए यह व्यवस्था की है। वर्ना जानवर में ही गया न फिर तो! फिर वह जानवर में ही माना जाएगा न? क्योंकि जैसे किसी की बहन–बेटी है, वैसे ही अपनी भी बहन–बेटी होती हैं, तो हमें सेफसाइड रखनी चाहिए न? जैसी अपनी बहन–बेटी वैसी ही किसी और की बहन–बेटी।

फिर से शादी करने में आपत्ति नहीं है। मुसलमानों में एक नियम बनाया गया है कि बाहर दृष्टि नहीं बिगड़नी चाहिए। बाहर किसी को नहीं छेड़ना चाहिए। यदि आपको एक स्त्री से संतोष नहीं है तो दो रखो। उन लोगों ने नियम बनाया है कि 'चार तक की तुम्हें छूट है!' यदि आपको

पुसाता हो तो चार रखो न? कौन मना करता है? लोग भले ही शोर मचाएँ! लेकिन पहली पत्नी को दु:ख नहीं होना चाहिए।

प्रश्नकर्ता : उसे तो कुदरती रूप से दु:ख होगा ही।

दादाश्री : फिर भी किसी को दु:ख हो, ऐसा वर्तन नहीं होना चाहिए। और उसमें भी, खुद की स्त्री को दु:ख नहीं हो ऐसा पहले से ही देखना चाहिए। क्योंकि आप उसे विश्वास दिलाकर लाए थे। आप शादी से बँधे हैं। प्रोमिस दिया है। प्रोमिस देने के बाद फिर यदि उसे दग़ा देंगे तो फिर हम हिन्दुस्तान की आर्य प्रजा नहीं कहलाएँगे लेकिन अनाड़ी तो कहलाएँगे न!

प्रश्नकर्ता : तो चार पत्नियाँ क्यों लाते हैं?

दादाश्री : मुसलमानों के क़ुरान में ऐसा लिखा है, क़ुरान का नियम है कि मुसलमान शराब नहीं पीता। शराब का छींटा भी यदि बदन पर पड़ जाए तो उतनी जगह काट दे, सच्चा मुसलमान ऐसा होता है। सच्चा मुसलमान कैसा होता है कि किसी स्त्री पर दृष्टि नहीं बिगाड़े और ज़रूरत पड़े तो दूसरी शादी कर ले, तीसरी कर ले, चार भी कर ले, लेकिन दृष्टि नहीं बिगाड़ता। कितना अच्छा कानून है उनका? लेकिन अब क्या करें? लोग ही ऐसे हो गए हैं इसलिए जहाँ-तहाँ दृष्टि बिगाड़ते हैं।

प्रश्नकर्ता : चार पत्नियाँ लाने पर दृष्टि सुधर जाएगी, इसका कोई विश्वास है क्या?

दादाश्री : नहीं, वे क्या कहना चाहते हैं कि 'तू दृष्टि मत बिगाड़ना।' तू चार पत्नियाँ रख। तब फिर वह खुद तय करता है कि मुझे इतने में ही रहना है। और यहाँ तो उसने तय कर लिया कि एक ही है न मेरी! यानी बाहर अन्यत्र दृष्टि बिगाड़ने कि छूट मिल गई उसे। बाहर दृष्टि बिगाड़ने से क्या होता है कि उसमें कुछ कार्य नहीं होता लेकिन दृष्टि बिगड़ने से बीज पड़ता है और उस बीज में से वृक्ष बनता है। इसलिए हमने इन सभी से कह दिया है कि आपकी दृष्टि बिगड़े तो आप प्रतिक्रमण करना, तो फिर आपको बीज नहीं पड़ेगा। दृष्टि बिगड़ते ही प्रतिक्रमण करना।

प्रश्नकर्ता : उनका धर्म ऐसा कहता है कि भले ही चार शादी करना, लेकिन दृष्टि मत बिगाड़ना। लेकिन दृष्टि बिगाड़नी या नहीं बिगाड़नी वह उसके हाथ में है न!

दादाश्री : इस जन्म में अभी यह ज्ञान सुनेगा तो अगले जन्म में फिट करके ही आएगा। फिर बाहर दृष्टि नहीं बिगड़ेगी।

प्रश्नकर्ता : केवल सुनने से ही?

दादाश्री : हाँ, यह ज्ञान यदि इसी जन्म में सुना हो कि ऐसा ही करना है तो पिछले जन्म में सुना नहीं था, इसलिए इस जन्म में शायद कभी बिगड़ जाए। लेकिन यह ज्ञान तो अगले जन्म में फिट हो जाएगा।

प्रश्नकर्ता : लेकिन फिर भी इस जन्म में जो कर्म बंधन किए हैं, वे तो भुगतने ही पड़ेंगे न फिर?

दादाश्री : वे तो भुगतने पड़ेंगे, लेकिन बाकी.. बाकी कुछ भी नहीं भुगतना पड़ेगा। उसका अंत आ जाएगा। लेकिन यह हिसाब फिर भी आ सकता है, लेकिन उन लोगों को स्पष्ट कहा गया है कि चार तक भोगना, लेकिन तुम बाहर दृष्टि मत बिगाड़ना। वह जो छूट दी गई है, वह भी आखिर में उन लोगों के स्वास्थ्य के लिए ही है। दृष्टि बिगाड़ना स्वास्थ्य के लिए हानिकारक है। मुसलमानों का यह कानून हमें बहुत पसंद है। मुसलमानों का कानून, बहुत अच्छा कानून है!

मुसलमानों के शास्त्रों में भी ऐसे सुंदर नियम हैं कि भैया, तुझे चार शादियाँ करनी हों तो करना, लेकिन दृष्टि मत बिगाड़ना किसी पर। उनका यह नियम अच्छा है न? तुझे कैसा लगता है? ज़्यादा गुनाह तो दृष्टि बिगाड़ने में है, पत्नियाँ रखने में नहीं। दृष्टि बिगड़ने का गुनाह बहुत बड़ा है। अन्य स्त्रियों की ओर दृष्टि बिगाड़े तो क्या वह अच्छा कहा जाएगा? इसलिए जो अपना है, वही भोगना। भगवान ने क्या कहा है? तू भोग, लेकिन जो तेरे हक़ का है, उसे भोग। *अणहक्क* का मत भोगना। यों ही *अणहक्क* के उपभोग की चेष्टा करने से तो अनंत जन्म बिगड़ जाएँगे। अब तेरी दृष्टि अन्य कहीं नहीं जाएगी न? कभी भी नहीं जाएगी न? इस काल में इसकी

क़ीमत ज़्यादा आँकी गई है। कसौटी का काल है इसलिए दृष्टि भी नहीं बदलनी चाहिए। और यदि बदल जाए तो प्रतिक्रमण दिया हुआ है, उससे साफ कर देना।

सूक्ष्म में भी एक पत्नीव्रत ही चाहिए

इस काल में एक पत्नीव्रत को हम ब्रह्मचर्य कहते हैं और तीर्थंकर भगवान के समय में ब्रह्मचर्य का जो फल मिलता था, उसे वही फल प्राप्त होगा, उसकी हम गारन्टी देते हैं।

प्रश्नकर्ता : आपने जो एक पत्नीव्रत कहा है, वह सूक्ष्म में भी रहना चाहिए या सिर्फ स्थूल में? मन तो खिंच जाए, ऐसा है न?

दादाश्री : सूक्ष्म में भी रहना चाहिए और शायद कभी मन खिंच भी जाए तो मन से अलग रहना चाहिए और बार-बार उसके प्रतिक्रमण करते रहना चाहिए। मोक्ष में जाने की लिमिट कौन सी? एक पत्नीव्रत और एक पतिव्रत। एक पत्नीव्रत या एक पतिव्रत का नियम, वह लिमिट कहलाएगा।

अब यदि सारी ज़िंदगी मन अन्य कहीं नहीं बिगड़ेगा, तो तेरी गाड़ी ठीक से चलेगी। वर्ना फिर....

प्रश्नकर्ता : ठीक है, आपने जैसा बताया उसके अनुसार सिर्फ एक पत्नीव्रत ही, उसके अलावा और कुछ नहीं।

दादाश्री : अन्य कहीं तो दृष्टि भी नहीं बिगड़नी चाहिए और बिगड़ जाए तो तुरंत ही प्रतिक्रमण कर लेना। अनंत जन्मों से मुक्त होकर मोक्ष में जाना, वह कोई आसान चीज़ नहीं है और पूर्ण ब्रह्मचर्य हो तो उसकी तो बात ही अलग है न!

प्रश्नकर्ता : अभी तो शादी कर रहा हूँ, लेकिन कुछ सालों के बाद तो ब्रह्मचर्य ले सकता हूँ न?

दादाश्री : हाँ, दोनों लेने को तैयार हों तो ले सकते हैं। दोनों लेने को तैयार हों तो पाँच साल के बाद भी लिया जा सकता है।

प्रश्नकर्ता : लेकिन इन ब्रह्मचारियों जैसा परिणाम तो नहीं आएगा न?

दादाश्री : वह तो भूत को साथ में रखना ही पड़ेगा न! और वह स्त्री भी ऐसा समझती कि मुझे इस भूत को रखना पड़ रहा है। यानी यह मुसीबत तो है ही न! एक बार मुहर लग गई फिर तो क़रार नहीं टूट सकता न! जबकि ब्रह्मचारी का तो कोई नाम नहीं ले सकता न? कोई दावा ही नहीं कर सकता न? इसलिए उसके जैसा तो कुछ भी नहीं।

प्रश्नकर्ता : तो सिन्सियरली एक पत्नीव्रत का पालन करें तो कोई परेशानी नहीं होगी न?

दादाश्री : फिर अपनी इन पाँच आज्ञाओं का पालन किया तो मोक्ष हो जाएगा। सिर्फ ये पाँच आज्ञाओं का पालन करना चाहिए और एक पत्नीव्रत का पालन करे तो बहुत अच्छा कहा जाएगा। वह ब्रह्मचर्य जैसा ही फल देगा।

प्रश्नकर्ता : लेकिन इतने समय तक ब्रह्मचर्य की जो भावना की है, ब्रह्मचर्य के जो बीज डाले हैं, तो अगले जन्म में दीक्षा मिलेगी न?

दादाश्री : उसकी चिंता करके आपको क्या करना है? इस समय तो अभी का झंझट सुलझाना है। अगले जन्म का झंझट आज करें तो क्या होगा? इस समय आपकी क्या स्थिति है? अभी आपको खुद के दोष दिखाई देते हैं न? लोगों के दोष नहीं दिखने चाहिए। खुद के दोष दिखने चाहिए। यदि किसी के दोष दिखाई देते हों तो प्रतिक्रमण करना पड़ेगा। ऐसा सब देखना है। दूसरा, अगले जन्म का झंझट तो अपने आप हो जाएगा। वह तो जैसी परीक्षा दोगे, जैसा पढ़ा होगा, वैसा ही होगा। अगला जन्म ही तो मार्क्स (परिणाम) है।

हक़ का भी नोर्मेलिटी में

प्रश्नकर्ता : एक पत्नीव्रत को हक़ का विषय कहते हैं, वह भी

जब तक नोर्मेलिटी में होगा तभी तक हक़ का माना जाएगा। और अबव नॉर्मल हो जाएगा तो!

दादाश्री : तब भी हक़ का ही कहा जाएगा, लेकिन वह *अणहक्क* जितना खराब नहीं कहलाएगा न?

प्रश्नकर्ता : अब कोई दूसरी स्त्री राज़ी-खुशी हमें खींचे और दोनों की राज़ी-खुशी का सौदा हो तो उसे हक़ का विषय कहा जाएगा या नहीं?

दादाश्री : नहीं, उसीके लिए मना किया गया है न! और इस राज़ी-खुशी से ही सब बिगड़ा है न! इस राज़ी-खुशी से आगे बढ़ा, तो वह भयंकर अधोगति में जाने की निशानी है! फिर वह अधोगति में ही जाएगा। बाकी, अपने घर में नोर्मेलिटी रखे तो वह देवता कहा जाएगा, मनुष्य में भी देवता कहा जाएगा। और अपने घर में अबव नॉर्मल हुआ तो वह सब पशुता कहलाएगी। लेकिन वह अपना गँवाता है, और कुछ नहीं। खुद की दुकान पूरी खाली हो जाएगी, लेकिन वह *अणहक्क* जैसा जोखिम नहीं कहलाएगा। इन हक़वालों को तो फिर से मनुष्यपन भी मिलेगा और वह मोक्ष के नज़दीक भी जाएगा। एक पत्नीव्रत आख़िरी लिमिट है, अन्य सभी से उत्तम। ऐसी चर्चा हिन्दुस्तान में किसी भी जगह पर नहीं होती।

तेरी ताक़त के अनुसार शादियाँ कर

प्रश्नकर्ता : अपने धर्म में एक ही पत्नी का नियम है, लेकिन अपने यहाँ कुछ राजाओं की तीन रानियाँ क्यों थीं?

दादाश्री : ऐसा है न, कुछ लोग तो तीन पत्नियाँ रखते थे। ऋषभदेव भगवान के पुत्र भरत चक्रवर्ती थे, उनकी तेरह सौ रानियाँ थीं। अतः हमारा धर्मशास्त्र क्या कहता है कि शादी करना, लेकिन दृष्टि मत बिगाड़ना। यदि एक शादी से आपको संतोष नहीं हो और अन्य किसी स्त्री पर दृष्टि जाती हो तो दूसरी शादी करना। तीसरी पर दृष्टि जाए तो तीसरी से शादी करना, लेकिन दृष्टि मत बिगाड़ना। इस दृष्टि के बिगड़ने से भयंकर रोग पैदा होते हैं।

प्रश्नकर्ता : अपने में तो एक ही कहा गया है और पहले तो तीन-तीन, ऐसा क्यों?

दादाश्री : आपसे भी कहता हूँ लेकिन आपमें शक्ति होनी चाहिए। एक के साथ तो लड़ाई-झगड़े करते हो। एक आदमी था। वह दूसरी शादी कर आया था, मैंने उससे पूछा, 'भैया, अब आप क्या करते हैं, दो वाइफ और तुम क्या करते हो?' यह तो मैं चालीस साल पहले की बात कर रहा हूँ, आज की नहीं। तब उसने कहा, 'नयी बनाए रोटियाँ और पुरानी बनाए दाल, बंदा बैठा कढ़ी हिलाए, तीनों साथ-साथ!' शक्ति हो तो करो न, निभाने की शक्ति होनी चाहिए। एक को तो पहुँच नहीं पाते और ऐसे शोर मचाते हैं फिर!

एक पत्नीव्रत पालन करोगे न? तो कहता है, 'पालूँगा।' तो आपका मोक्ष है। दूसरी स्त्री का ज़रा सा भी विचार आया, तभी से मोक्ष गया। क्योंकि वह *अणहक्क* का है। जहाँ हक़ का है, वहाँ पर मोक्ष और जहाँ *अणहक्क* का है, वहाँ पर पशुता।

अपने ऋषि-मुनि तो एक ही स्त्री रखते थे और वह भी साल में एकाध बार स्त्री संग हो तो ठीक है, एकाध बार पुत्रदान हेतु शादी करते थे।

प्रश्नकर्ता : मेरा पूछना यह है कि जो मन-वचन-काया से ब्रह्मचारी हो, क्या ऐसा कोई पुरुष जगत् में जन्मा है क्या?

दादाश्री : इस काल में नहीं है।

प्रश्नकर्ता : पहले थे क्या?

दादाश्री : पहले तो थे ही न! अपने यहाँ महासतियाँ होती थीं वे एक पतिव्रता थीं। ये ऋषि-मुनि सभी एक पत्नीव्रतवाले थे।

प्रश्नकर्ता : महासती के पति तो थे ही न?

दादाश्री : हाँ, लेकिन पतिव्रतवाली। पतिव्रत के नियम का बिल्कुल भंग नहीं होने देती थीं और ऋषि-मुनि तो संपूर्ण ब्रह्मचर्यव्रतवाले थे।

प्रश्नकर्ता : लेकिन वे तो ऐसा साहजिक रूप से लेकर आए होते हैं न?

दादाश्री : वह तो, वैसा माल भरा हुआ था और आज ये लोग ऐसा माल भरकर लाए हैं, इसलिए ऐसा निकलता है। लेकिन अब नये सिरे से कैसा भरना, वह तो खुद के अधीन है न!

प्रश्नकर्ता : देवताओं में एक पत्नीव्रत होता होगा क्या?

दादाश्री : एक पत्नीव्रत यानी क्या कि पूरी ज़िंदगी एक ही देवी के साथ व्यतीत करनी है। लेकिन जब दूसरे देवताओं की देवी देखें, तब मन में ऐसे भाव होता है कि 'हमारीवाली से वह अच्छी है' ऐसा होता ज़रूर है, लेकिन जो है उसमें कोई परिवर्तन नहीं होता।

प्रश्नकर्ता : देवगति में संतानों का सवाल नहीं है फिर भी वहाँ विषय तो भोगते ही हैं न?

दादाश्री : वहाँ ऐसा विषय नहीं है। यह तो निरी गंदगी है। देवता तो यहाँ पर खड़े भी नहीं रहेंगे। वहाँ उनका विषय कैसा होता है? सिर्फ देवी आए और वे उन्हें देखें कि उनका विषय पूरा हो जाता है, बस! कुछ देवताओं को तो ऐसा होता है कि दोनों एक दूसरे को छूएँ या दोनों आपस में हाथ दबाकर रखें तो उनका विषय पूरा हो जाता है। देवगण भी जैसे-जैसे प्रगति करते जाते हैं, वैसे-वैसे विषय कम होता जाता है। कुछ देवताओं में तो बातचीत करने से ही विषय पूरा हो जाता है। जिन्हें स्त्री का सहवास पसंद है ऐसे भी देवता हैं और जिन्हें स्त्री केवल एक घंटे के लिए आकर मिले तो भी उन्हें बहुत आनंद हो जाता है, ऐसे भी देवता हैं। कुछ ऐसे भी देवता हैं कि जिन्हें स्त्री की ज़रूरत ही नहीं होती। यानी हर तरह के देवता हैं।

ऐसे भी कुछ मनुष्य हैं जिन्हें संडास में बैठना पसंद नहीं है। उन्हें यह गंध ही पसंद नहीं है, तो उनके लिए देवलोक की भूमिका है।

[५]

अणहक्क के विषयभोग, नर्क का कारण

परपुरुष-परस्त्री नर्क का कारण

इस विषय को ज़हर समझा ही नहीं है, इसका जोखिम जाना ही नहीं है और नर्क में जाएँ, ऐसा हो गया है। इसलिए ज़रा वापस मुड़ें तो नर्कगति से बच पाएँगे।

परस्त्री और परपुरुष यानी प्रत्यक्ष नर्क का कारण है। नर्क में जाना हो तो ऐसा सोचना। हमें उसमें हर्ज नहीं है। आपको अनुकूल हो तो नर्क के उन दु:खों का वर्णन करूँ, उसे सुनते ही बुख़ार चढ़ जाएगा तो वहाँ उसे भुगतते समय तेरी क्या दशा होगी? बाकी, खुद की स्त्री के साथ रहने में काई हर्ज नहीं है।

प्रश्नकर्ता : लेकिन यदि वे दोनों पति-पत्नी हों तब?

दादाश्री : पति-पत्नी को कुदरत ने एक्सेप्ट किया है। उसमें यदि कभी विशेष भाव नहीं होगा, तो हर्ज नहीं है। कुदरत ने उतना चलने दिया है। उतना परिणाम पाप रहित कहा जाएगा। जबकि इसमें (अणहक्क) अन्य बहुत सारे पाप हैं। एक ही बार विषय करने से करोड़ों जीवों की हानि होती है। वह कोई कम पाप है क्या? लेकिन फिर भी वह परस्त्री जैसा बड़ा पाप नहीं कहलाता।

प्रश्नकर्ता : फिर भी उसमें पाप तो है ही न?

दादाश्री : है ही। इसीलिए इन लोगों ने निष्पाप रहने के लिए खोज की न? निष्पाप रहने का उपाय क्या है? ब्रह्मचर्य में आना चाहिए।

यदि यहाँ स्त्री-पुरुष का ब्रह्मचर्य पालन किया जाए, तब तो देवलोक जैसा सुख होगा। फिर तो संसार देवलोक जैसा लगेगा। जो दृष्टि नहीं गड़ाए वह जीत गया। दृष्टि गड़ाई कि खत्म हो गया। दृष्टि तो गड़ानी ही नहीं चाहिए।

प्रश्नकर्ता : आपने जो परपुरुष और परस्त्रीगमन का भय सिग्नल दिखाया, उसका 'कैज्युअल कनेक्शन' (नैमित्तिक अनुसंधान) क्या है?

दादाश्री : अपने यहाँ पर ज्ञान लेने के बाद भी ऐसे दोष करनेवाला तो सीधा नर्क में जाएगा। क्योंकि ज्ञान लेने के बाद तो दग़ा कहलाएगा। ज्ञानी के साथ दग़ा कहलाएगा और सत्संग के साथ भी दग़ा कहलाएगा। भयंकर दग़ा कहलाएगा, इसलिए नर्क का अधिकारी हो जाएगा। इसीलिए हम बार-बार सावधान करते रहते हैं। आज के लोगों को जो विषय हैं, ऐसे तो जानवरों में भी नहीं होते। यह तो कलियुग की निशानी है। बेचारे दुःख और जलन में सारा दिन मेहनत करते हैं और फिर होश ही नहीं रहता न!

और यह माल कहीं फिर से मनुष्य में आए, ऐसा माल नहीं है। यह तो भटकते रहनेवाला माल है सारा। पहले का जो पुराना माल था, वह तो एक पत्नीव्रतवाला था। क्योंकि पुराना माल तो चारित्र को समझता था कि मेरी बेटी ऐसी नहीं होनी चाहिए, ऐसा सब वह समझता था कि यदि मैं किसी का नुकसान करूँगा, तो कोई मेरे यहाँ भी नुकसान पहुँचाएगा और फिर खुद की बेटी भी ऐसी ही बनेगी।

शील के लुटेरे, नर्काधिकारी

प्रश्नकर्ता : नर्क में ज़्यादातर कौन जाता है?

दादाश्री : शील के लुटेरों के लिए सातवाँ नर्क है। जितनी मिठास आई थी उससे अनेक गुना कड़वाहट का अनुभव करे, तब वह तय करता है कि अब वहाँ नर्क में नहीं जाना है। यानी इस जगत् में यदि नहीं करने जैसा कुछ है तो वह यह है कि किसी का शील मत लूटना। कभी भी दृष्टि मत बिगड़ने देना। शील लूटने के बाद नर्क में जाएगा और वहाँ मार

खाता रहेगा। इस दुनिया में शील जैसी उत्तम कोई चीज़ है ही नहीं। इस दुनिया में शीलवान जैसी उत्तम चीज़ कुछ भी नहीं।

प्रश्नकर्ता : इस काल में किसी के लिए शील का महत्व है ही नहीं, इसलिए शील लुटा है, ऐसा किसी को लगता ही नहीं न?

दादाश्री : इस काल में लोगों को पहले जैसा शील लूटना भी नहीं आता न? इसलिए बहुत हुआ तो पहले, दूसरे, तीसरे या चौथे नर्क में जाएँगे। इस समय वर्तमान में चार नर्क खुले हैं, वे वहाँ तक जाएँगे। उससे आगे का नर्क बंद हो चुका है। उससे आगे के तो इस काल के लोगों के लिए नहीं है न! ये तो कमज़ोर जीव हैं। आगे के नर्क में जानेवाले तो प्रखर पुरुष और ये तो बेचारे कमज़ोर, इसलिए 'बहन, बहन' कहकर शील लूटें, ऐसे लोग हैं। ये लोग तो 'बहन' कहकर छल-कपट करते हैं। वे लोग ऐसा छल-कपट नहीं करते थे।

प्रश्नकर्ता : छल-कपट दुनिया के साथ या व्यक्ति के साथ?

दादाश्री : दुनिया या व्यक्ति, सभी के साथ। इस काल के जो लोग हैं न, वे तो खुद अपने आपको भी दग़ा देते हैं।

अपने यहाँ इस सत्संग में ऐसे छल-कपट का विचार आए तो मैं कहूँगा कि यह 'मीनिंगलेस' (निरर्थक) बात है। यहाँ ऐसा व्यवहार किंचित् मात्र भी नहीं चलेगा। और ऐसा व्यवहार चल रहा है, ऐसा यदि कभी मेरी जानकारी में आया तो मैं जला दूँगा, भयंकर रूप से जला दूँगा। इस जगह पर किंचित् मात्र भी ऐसा नहीं चलेगा, यह संघ ऐसा नहीं होना चाहिए, यहाँ पर ऐसी भूल नहीं कर सकते।

हमने तो कई ऐसे लोग देखे हैं कि बहनोई होने के बावजूद भी सगी बहन से जुड़ा हुआ होता है। फिर वह प्रतिदिन बहनोई के वहाँ जाता है। अरे! बहनोई के वहीं पर मुकाम करता है। ऐसे तो मैंने कई केस देखे हैं। मैं उनसे कहता भी हूँ कि, 'अरे! यह क्या धंधा लगाया है? कौन से जन्म में छूटेगा तू? यदि फिर से ऐसा नहीं करे तो मेरे पास आ जाना, मैं तुझे चोखा कर दूँगा।' इस वर्ल्ड में भले ही कैसे भी गुनाह किए हों,

चाहे कैसे भी गुनाह लेकर आए, लेकिन यदि ज़िंदगी में फिर से ऐसे गुनाह नहीं करे तो हर तरह से मैं उसे चोखा बना दूँ। इन लोगों ने कैसे भयंकर गुनाह किए हैं 'बहन, बहन' करके शादियाँ की हैं। लेकिन ऐसे लोगों के लिए सातवीं नर्क नहीं है। बहुत हुआ तो पहली, दूसरी, तीसरी या चौथी नर्क में जाएँगे।

भयंकर जोखिमवाले *अणहक्क* के विषय !

इस दुनिया की कोई चीज़ बंधनकर्ता नहीं है। लक्ष्मी आदि अन्य कोई चीज़ बंधन नहीं करती। सिर्फ परस्त्री ही बंधन करती है। जहाँ परस्त्री की लूट चलती है, वहाँ बंधन है। अन्य किसी भी जगह पर दुःख हैं ही नहीं। अपना यह ज्ञान ऐसा है कि अन्य सभी से छुड़वाए, लेकिन जो परस्त्री में फँसा, वह नर्क का अधिकारी बन जाएगा। इसलिए उसमें से छूटने के लिए यहाँ 'विधि' कर लेनी पड़ेगी। अब इन्सान है, तो भूलचूक हो ही सकती है न!

अतः यहाँ सिर्फ इतना ही जोखिम है। किसी से भी इसमें भूलचूक हो जाए, तो मेरे पास आकर माफ़ी माँगकर छुड़वा जाना। उसके लिए मैं विधि कर दूँगा। यह ज्ञान मिलने के बाद तरह-तरह के कर्म लेकर आए होते हैं, उनमें से कौन, कैसे बँधा होगा, यह कैसे पता चले? तू लक्ष्मी से बँधा होगा तो उसमें हर्ज नहीं है, वह दंड तुझे माफ़ करवा दूँगा। लेकिन सिर्फ यह परस्त्री का ही बड़ा दंड है। उसे माफ़ करवाने के भी नियम हैं मेरे पास। मेरे पास सभी साधन हैं।

दादाजी छुड़वाएँ नर्कगति से

मानवता का अधिकार कितना? कि जो खुद की परिणीता हो, अधिकार का हो उतना ही अपना और अन्य कुछ पराया नहीं ले सकते। जो मेरा वह मेरा और जो तेरा वह तेरा। तेरा मुझे चाहिए नहीं, मेरा तुझे दूँगा नहीं, वह मानवता!

जिसे परस्त्री का त्याग हुआ, वह भगवान बनने लगेगा। परस्त्री, वह रोग बड़ा होगा या नहीं? बहुत बड़ा कहलाएगा! इसीसे जगत् कायम है।

ऐसा गायों-भैंसों में चलता है क्योंकि वहाँ मंडप भी नहीं है और ब्राह्मण भी नहीं है। गायों-भैंसों में मंडप होते हैं क्या? वहाँ ब्राह्मण को नहीं बिठाते न? यह तो मनुष्यों में विवेक रखा जाता है और कुदरत का बंधन है ही ऐसा। मनुष्य में आया कि बंधन होगा ही। महामुश्किल है!

यह सुनकर तुझे कुछ पछतावा हो रहा है!

प्रश्नकर्ता : बहुत ही हो रहा है।

दादाश्री : पछतावे में जलेगा, तब भी पाप खत्म हो जाएँगे। दो-चार लोग यह बात सुनकर मुझसे पूछने लगे कि, 'हमारा क्या होगा?' मैंने कहा 'अरे! भाई मैं तेरा सबकुछ ठीक कर दूँगा। तू आज से समझदार बन जा।' जागे तभी से सवेरा। उसकी नर्कगति उड़ा दूँगा, क्योंकि मेरे पास सभी रास्ते हैं, मैं कर्ता नहीं हूँ इसलिए। यदि मैं कर्ता हो जाऊँ तो मुझे बंधन है। मैं आपको ही बताता हूँ कि अब ऐसा करो आप। उससे फिर सब खत्म हो जाता है और ऐसे ही कुछ अन्य विधियाँ करते हैं।

उसके जोखिम तो ध्यान में रखो

इसलिए सही जोखिम तो जानना चाहिए या नहीं जानना चाहिए? जोखिम याद रहेगा क्या तुझे?

प्रश्नकर्ता : हाँ।

दादाश्री : अब भूलेगा नहीं न?

प्रश्नकर्ता : नहीं।

दादाश्री : पूरी ज़िंदगी?

प्रश्नकर्ता : हाँ।

दादाश्री : लड़कों को, बेचारों को तो मुश्किल है न? अभी तक शादी नहीं हुई, जोखिम से संबंधित ऐसा उपदेश कोई देता नहीं! कोई देता है? नहीं। क्योंकि लोग विषयी हैं। जो खुद विषयी हो, वह व्यक्ति विषय से संबंधित उपदेश कैसे दे सकेगा? जो खुद चोरी करता है, वह 'चोरी

नहीं करना', ऐसा उपदेश कैसे दे सकेगा? जोखिम को समझना नहीं पड़ेगा क्या? जगत् में कोई यह जोखिम बताएगा नहीं। लोग तो 'आप बहुत अच्छे हैं, बहुत अच्छे हैं', ऐसा बोलेंगे। ये लोग तो अच्छा-अच्छा ही बोलेंगे न! उनका क्या जाता है? चंदूभाई से पाँच सौ रुपये लेने होंगे तो कहेंगे 'चंदूभाई संतपुरुष हो गए हैं'। तो फिर पाँच सौ रुपयों का चेक लिख देंगे।

परायी औरत के साथ घूमेंगे तो लोग उँगली उठाएँगे न? अतः यह समाजविरोधी है और दूसरी अंदर भी बहुत तरह की मुसीबतें होती हैं। नर्क की वेदना यानी इलेक्ट्रिक गैस में लंबे समय तक जलते रहना! एक इलेक्ट्रिक गरमी की वेदनावाला नर्क है और दूसरा ठंड की वेदनावाला नर्क है। वहाँ इतनी ठंड होती है कि वहाँ पावागढ़ पर्वत डालें तो सारा का सारा पर्वत कण-कण होकर बिखर जाए, उसके टुकड़े इतने बड़े-बड़े नहीं होंगे! इतनी ठंड है। लेकिन अभी अंतिम तीन नर्क बंद हो गए हैं। यह गरमीवाला जोखिम अभी तक है। ठंडवाला जोखिम बंद हो गया है। अभी ऐसे पाप करनेवाला कोई है ही नहीं। ये जंतु क्या पाप कर सकेंगे बेचारे! राशन और मिलावटवाला माल लाकर खानेवाले कितने पाप कर पाएँगे? अतः आजकल ऐसे पाप करनेवाले पैदा ही नहीं होते कि अंतिम तीन नर्कों में जाएँ। बाकी, ये छोटे-छोटे पाप करनेवाले सभी लोग पहली चार नर्कों में जाते हैं। उसमें भी यदि वह ऐसा कोई बड़ा शूरवीर(!) होगा, तभी उसके लिए वे नर्क खुलेंगे। पाप करना नहीं आए, उसका क्या हो? ये सभी तो आपस में अंदर ही अंदर मारपीट करते रहते हैं, बाहर नहीं मारते।

प्रश्नकर्ता : लेकिन प्रकृति विषयी नहीं है, वह कैसे?

दादाश्री : प्रकृति विषयी नहीं है, वह तो सिर्फ परस्त्री के अलावा कहा है। लोग तो उल्टा अर्थ पकड़ लेते हैं। मेरे शब्दों को तुझे अपनी भाषा में उल्टा ले जाना हो तो तुझे देर लगेगी क्या? फिर यदि आप परस्त्री और दूसरे सारे जोखिम को लेकर उल्टा समझो तब तो फिर दुनिया में आपको जैसा ठीक लगे वैसे ही चलना है, ऐसा हो गया न! लेकिन परस्त्री के तो कितने सारे जोखिम हैं! वह जहाँ जाएगी, वहाँ आपको जाना पड़ेगा, उसे माँ बनाना पड़ेगा! आज कई बेटे ऐसे हैं कि जो पूर्वभव की अपनी

रखैल की कोख से जन्मे हैं। वह मुझे ज्ञान में भी दिखा है। बेटा ऊँची कौम का होता है और माँ नीची कौम की होती है, माँ नीची कौम में जाती है और बेटा ऊँची कौम में से नीची कौम में आ जाता है। देखो भयंकर जोखिम! पिछले जन्म में जो पत्नी थी, वही इस जन्म में माँ बनती है। और इस जन्म में माँ हो तो वह अगले जन्म में पत्नी बनती है। ऐसे जोखिमवाला है यह जगत्! बात को संक्षेप में समझ जाना! प्रकृति विषयी नहीं है, यह बात मैंने दूसरे अर्थ में कही थी। लेकिन यह तो हम पहले से कहते आए हैं कि सिर्फ यही एक जोखिम है।

दोनों सहमत, फिर भी जोखिम

प्रश्नकर्ता : दोनों ही सहमत हों तो भी जोखिम है क्या?

दादाश्री : सहमति हो फिर भी जोखिम है। दोनों परस्पर खुश हों, तो उससे क्या फ़ायदा हुआ? वह जहाँ जानेवाली हो, वहीं आपको भी जाना पड़ेगा। आपको मोक्ष में जाना है और उसके धंधे ऐसे हैं, तो आपकी क्या दशा होगी? कैसे मेल पड़ेगा? इसीलिए हर एक शास्त्रकार ने हर शास्त्र में विवेक के लिए कहा है कि शादी करना। वर्ना आवारा पशु रहा तो किस का घर सलामत रहेगा? फिर 'सेफसाइड' ही क्या रही? किस प्रकार की 'सेफसाइड' (सलामती) रहेगी? तू बोलता क्यों नहीं? पिछली चिंता में पड़ गया क्या?

प्रश्नकर्ता : हाँ।

दादाश्री : मैं तेरा सब धो दूँगा। हमें तो इतना चाहिए कि आज हमसे मिलने के बाद कोई गड़बड़ नहीं है न? पिछली गड़बड़ होगी तो उससे छूटने के हमारे पास अनेक प्रकार के उपाय हैं। तू मुझे अकेले में बता देना, मैं तेरा वह सब तुरंत धो दूँगा। कलियुग के मनुष्य से क्या भूल नहीं होती! कलियुग है और भूल नहीं हो, ऐसा होगा ही नहीं न!

ब्रह्मचर्य के इच्छावान को बचाए ज्ञान

तेरी इच्छा टूट गई है क्या?

प्रश्नकर्ता : हाँ, दादाजी।

दादाश्री : तो मैं तेरा कचरा निकाल दूँगा। जिसकी इच्छा नहीं टूटी, उसका कचरा कैसे निकाल पाएँगे?

प्रश्नकर्ता : मरते दम तक इच्छा खत्म नहीं हो तो क्या होगा?

दादाश्री : क्या इच्छा है?

प्रश्नकर्ता : कोई भी इच्छा हो।

दादाश्री : अन्य सभी इच्छाएँ होंगी तो एतराज़ नहीं है, लेकिन विषय से संबंधित नहीं होनी चाहिए। एक के साथ डाइवोर्स लेकर दूसरी के साथ शादी करने की इच्छा होगी तो उसमें एतराज़ नहीं है, लेकिन शादी होनी चाहिए, यानी उसकी 'बाउन्ड्री' होनी चाहिए। 'विदाउट एनी बाउन्ड्री' तो हरहाया कहा जाएगा। फिर उसमें और ऐसे मनुष्य में कोई फर्क नहीं रहा।

प्रश्नकर्ता : रखैल रखी हो तो?

दादाश्री : रखैल हो तो भी वह रजिस्टर्ड होना चाहिए। फिर दूसरी नहीं होनी चाहिए।

प्रश्नकर्ता : उसमें रजिस्ट्रर्ड नहीं कर सकते, यदि रजिस्ट्रर्ड करेंगे तो जायदाद में हिस्सा माँगेगी, कई परेशानियाँ होंगी।

दादाश्री : जायदाद तो देनी पड़ेगी, यदि आपको स्वाद चखना है तो! सीधे रहो न एक जन्म, ऐसा क्यों करते हैं? अनंत जन्मों से यही किया है! एक जन्म सीधे रहो न! सीधा हुए बगैर चारा नहीं है। साँप भी बिल में जाते समय सीधा हो जाता है या टेढ़ा चलता है?

प्रश्नकर्ता : सीधा चलता है। परस्त्री में जोखिम है, ऐसा अब आज ही समझ में आया है। अभी तक तो ऐसा ही लगता था कि, 'इसमें क्या गलत है?'

दादाश्री : आपको किसी जन्म में किसी ने 'यह गलत है', ऐसा

अनुभव नहीं करवाया है, वर्ना इस गंदगी में कौन पड़ता? ऊपर से नर्क का जोखिम रहता है!

प्रश्नकर्ता : और नर्क में जाना पड़े, वह तो खराब ही है न?

दादाश्री : यह बात ही ऐसी है, यह जो आवारागर्दी का काम है न, वह सब नर्क में ही ले जाएगा।

अपना यह विज्ञान पाने के बाद हार्टिली पश्चाताप करेगा तो भी सारे पाप जल जाएँगे। दूसरे लोगों के पाप भी जल जाएँगे, लेकिन पूरा नहीं जल पाएगा। ऐसा विज्ञान मिलने के बाद, वह विषय के लिए खूब पछतावा करता रहे तो पार उतर जाएगा!

सिर्फ यही एक रोग ऐसा है कि जो नर्क में ले जाता है और यदि नर्क में गया तो फिर ज्ञानीपुरुष नहीं मिल पाएँगे, यह सत्संग नहीं मिलेगा! मोक्षमार्ग हाथ से निकल जाएगा! यानी कि परस्त्रीगमन, परस्त्रीविचार नर्क में ले जाते हैं! यह चद्दर निकाल दें तो? कोई हाथ भी नहीं लगाएगा! तो उसमें देखने योग्य क्या है? उसका तो विचार भी नहीं आना चाहिए! इसीलिए हम सावधान करते हैं न! अभी दहीबड़े आदि सबकुछ खाने देते हैं न! लेकिन सबसे बड़ा जोखिम यही है! नर्क में जाने पर भी ठिकाना नहीं पड़ेगा!

संसारी लोग तो ठगे गए हैं, बेचारों को पता नहीं है! और यहाँ पर इसके बारे में यदि जानकारी होने के बावजूद भी मार खाए तो बहुत गलत कहलाएगा न!

अभी तक भटकते रहे हैं, उसका कारण यह विषय ही है न! वह नहीं होना चाहिए और यदि हो तो उसे एकदम से छोड़ नहीं सकते, लेकिन उसके लिए तुरंत प्रतिक्रमण करने ही चाहिए। विषय क्या यों ही छोड़ने से छूट जाए, ऐसा है? इसने तो अनंत जन्मों से जकड़ा हुआ है, वह जल्दी से छूटनेवाला नहीं है! रात-दिन सिर्फ विषय के ही प्रतिक्रमण करते रहना चाहिए और वह भी दृष्टि बिगड़ने से पहले ही प्रतिक्रमण कर लेने चाहिए।

अणहक्क के विषय की वजह से स्त्रीपना नहीं छूटता

प्रश्नकर्ता : बीच में वह जो बात हुई थी न कि कपट करने के लिए पुरुष ने प्रोत्साहन दिया है, तो उसमें मुख्य कारण पुरुष है! हमारा जीवन व्यवहार और उनका कपट, उनकी जो गाँठ, उसमें यदि किसी भी तरह से मैं ज़िम्मेदार हूँ, तो उसके लिए आप विधि कर दीजिएगा, ताकि मैं वे छोड़ सकूँ।

दादाश्री : हाँ, विधि कर देंगे। उनका कपट बढ़ा, उसके लिए हम पुरुष 'रिस्पोन्सिबल' हैं। कई पुरुषों को इस ज़िम्मेदारी का भान बहुत कम होता है। वह यदि सभी प्रकार से मेरी आज्ञा का पालन कर रहा हो, फिर भी स्त्री का उपभोग करने के लिए वह स्त्री को क्या समझाएगा? स्त्री से कहेगा, 'अब इसमें कोई हर्ज नहीं है।' फिर स्त्री बेचारी धोखे में आ जाती है। उसे दवाई नहीं पीनी हो... और पीनी ही नहीं हो, लेकिन फिर भी प्रकृति पीनेवाली है न! प्रकृति उस समय खुश हो जाती है। लेकिन वह प्रोत्साहन किसने दिया? तो आप उसके लिए ज़िम्मेदार हो। जैसे यदि कोई अज्ञानी आदमी हो, वह किसी के साथ सीधा नहीं चल रहा हो, और कोई स्त्री बेचारी ज़रा होशियार हो तो वह आदमी उसे क्या कहता है? तू तो बहुत ही अक़्लमंद है। खूब उसकी तारीफ करे न, तो फिर यदि उसकी इच्छा नहीं हो, फिर भी वह उस पुरुष के साथ जोइन्ट हो जाती है। अब यदि पुरुष स्त्री को ऐसी बात कहे जो उसे पसंद हो तो वह स्त्री उसके वश में हो जाती है। उसे अच्छी लगनेवाली बातें यदि कई पुरुष करे, हर बात में ऐसा कहे न, 'करैक्ट, बहुत अच्छा।' और उसका पति यदि थोड़ा टेढ़ा हो और दूसरा पुरुष ऐसा मीठा बोले तो क्या फिर गड़बड़ होगी?

प्रश्नकर्ता : होगी, दादाजी।

दादाश्री : ये सभी स्त्रियाँ इसी कारण स्लिप हुई हैं। कोई मीठा बोले कि उसीकी हो जाती हैं। यह बहुत सूक्ष्म बात है। समझ में आ पाए, ऐसा नहीं है।

प्रश्नकर्ता : समझ में आता है, दादाजी।

दादाश्री : अब पुरुष तो अपने स्वार्थ के लिए करता है और उस औरत में हमेशा के लिए रोग लग जाता है, और पुरुष तो स्वार्थी निकालता है, फिर चला। यह तो ताँबे का लोटा निकला, धो दिया कि साफ, लेकिन उस औरत को लग गया ज़ंग! उसका कपट का स्वभाव बन जाएगा। उसे इन्टरेस्ट आता है इसलिए फिर स्त्री के स्वभाव का बँध पड़ जाता है।

आपको एक दूसरा उदाहरण देता हूँ। अपने घर पर बच्चे कुछ उल्टा करें तब उसे डाँटें, मारें, तो फिर वह रूठकर चला जाता है। ऐसा पाँच-सात-दस बार होगा, तब फिर वह तंग आ जाएगा न?

प्रश्नकर्ता : हाँ, तंग आ जाएगा।

दादाश्री : माँ-बाप को काम लेना नहीं आता, इसलिए। आजकल के सभी माँ-बापों को बच्चों से काम लेना भी आता नहीं। इससे बच्चा तंग हो जाता है न! अब पड़ोसी क्या करेगा? 'बेटा, आ इधर आ, इसलिए फिर वहाँ जाता है। अरे! अंदर से वह नाश्ता ला अंदर से।' इसलिए फिर, उस बच्चे को वह जो कहेगा वैसा वह कर देगा न उसके लिए?

प्रश्नकर्ता : कर देगा और माँ-बाप के प्रति घृणा उत्पन्न हो जाएगी।

दादाश्री : और पड़ोसियों के प्रति?

प्रश्नकर्ता : उनके प्रति प्रेम उत्पन्न होगा। वह जो भी कहे, वह सभी करने को तैयार हो जाता है।

दादाश्री : इसी प्रकार स्त्री को अपने पति के प्रति घृणा उत्पन्न होती है। क्योंकि उसे विषय में रुचि है और वह पुरुष उससे अच्छी-अच्छी बातें करने लगा, तो वह उसे सुंदर दिखने लगता है। वह उसे एन्करेज करता है, अपना काम निकालने के लिए उसे एन्करेज करता रहे और वह समझती है कि, 'ओहोहो! मुझ में अक़्ल नहीं है फिर भी मैं बहुत अक़्लमंद लगती हूँ इन्हें' इसलिए फिर फँस ही जाती है। किसी को समझ में आए, ऐसी बात है न यह?

प्रश्नकर्ता : समझ में आती है।

सती होने पर मोक्ष पक्का

दादाश्री : भले ही कुछ भी हो जाए, पति नहीं हो, पति चला गया हो, फिर भी दूसरे के पास नहीं जाए। दूसरा चाहे कैसा भी हो, खुद भगवान पुरुष बनकर आए हों, लेकिन नहीं। 'मेरे लिए मेरा पति है, पतिवाली हूँ।' वह सती कहलाती है। आज सतीपना कहा जा सके, ऐसा है इन लोगों का? ऐसा है ही नहीं है न? ज़माना अलग तरह का है न! सत्‌युग में कभी-कभी ऐसा समय **(Pg-69)**आता है, सतियों के लिए ही। इसीलिए सतियों का नाम लेते हैं न लोग!

प्रश्नकर्ता : हाँ।

दादाश्री : वह सती होने की इच्छा से उसका नाम लिया हो तो कभी न कभी सती बनेगी जबकि विषय तो चूड़ियों के मोल बिकता है। ऐसा आप जानते हो? नहीं समझे मेरे कहने का मतलब?

प्रश्नकर्ता : हाँ, चूड़ियों के मोल बिकता है।

दादाश्री : कौन से बाज़ार में? कॉलिज में! किस भाव से बिकता है? सोने के भाव से चूड़ियाँ बिकती हैं, वे हीरों के भाव से चूड़ियाँ बिकती है! सब जगह ऐसे नहीं मिलता। सब जगह ऐसा नहीं है। कुछ को तो सोना दें तो भी न लें। भले ही कुछ भी दो, फिर भी न लें! लेकिन आज की दूसरी स्त्रीयाँ तो बिकती हैं। सोने के मोल नहीं तो और किसी मोल से बिकती हैं!

कोई कभी भी मांसाहार नहीं करता हो, लेकिन यदि दो-तीन दिन का भूखा हो, तो मरने के लिए तैयार होगा या मांसाहार करेगा? मांसाहार करेगा ही नहीं, भले ही कुछ भी हो जाएगा। और बोलता है कि 'मर जाऊँगा, लेकिन मांसाहार नहीं करूँगा, कभी भी नहीं करूँगा, भले ही भूखा मर जाऊँ।' लेकिन ऐसे ही दो-तीन दिन और गुज़र जाएँ और उसे भूख से मरने की नौबत आए, ऐसा लगे तो? कोई दिखलाए तब?

प्रश्नकर्ता : तब शायद खा ले, जीने के लिए।

दादाश्री : खा ही लेगा। और तब भी जो ऐसा न करे, वह सती कहलाती है। मुँह से जैसा बोले, वैसा ही उसके आचरण में होता है उसे। मर जाऊँ तो भी नहीं करूँगी।

इस विषय के कारण (जीव) स्त्री बना है। सिर्फ एक विषय के कारण ही और पुरुष ने भोगने के लिए उसे प्रोत्साहित किया और बेचारी को बिगाड़ा। बरकत नहीं हो, फिर भी उसमें बरकत है ऐसा मन में मान लेती है। तब कहे, 'ऐसा क्यों मान लिया? कैसे मानेगी?' पुरुष लोग उसे कहते ही रहे, इसलिए वह समझीं कि 'ये कहते हैं उसमें गलत क्या है?' अपनेआप नहीं मान लेती। आपने कहा हो, 'तू बहुत अच्छी है, तेरे जैसी तो कोई स्त्री मैंने देखी ही नहीं।' उसे कहो कि, 'तू सुंदर है।' तो वह खुद को सुंदर मान लेती है। इन पुरुषों ने स्त्रियों को स्त्री की तरह रखा है। और स्त्री मन में समझती है कि, 'मैं पुरुषों को बना रही हूँ। मूर्ख बना रही हूँ।' ऐसा करके पुरुष भोगकर अलग हो जाते हैं। उसे भोग लेता है, जैसे कि इसी रास्ते पर भटकना हो... ज़्यादा समझ में नहीं आ रहा न? थोड़ा-थोड़ा?

प्रश्नकर्ता : समझ में आ रहा है, कम्प्लीट। पहले तो इस तरह से सत्संग चलते थे कि पुरुषों का कोई दोष नहीं है। लेकिन आज बात निकली, तब लगा कि पुरुष भी इस तरह बहुत बड़ा ज़िम्मेदार बन जाता है।

दादाश्री : पुरुष ही ज़िम्मेदार है। स्त्री को स्त्री की तरह रखने में पुरुष ही ज़िम्मेदार है।

प्रश्नकर्ता : हाँ। यानी ऐसा नहीं है कि जो स्त्री है, वह कई जन्मों तक स्त्री के रूप में रहेगी, ऐसा नक्की नहीं है। लेकिन उन लोगों को मालूम नहीं पड़ता, इसलिए इसका उपाय नहीं हो पाता।

दादाश्री : यदि उपाय हो जाए तो फिर स्त्री, पुरुष ही है। उस गाँठ को जानती ही नहीं बेचारी। और वहाँ पर इन्टरेस्ट आता है, वहाँ पर मज़ा आता है इसलिए पड़ी रहती हैं। और कोई ऐसा रास्ता नहीं जानता, इसलिए

दिखाता नहीं है। वह तो सिर्फ सती स्त्रियाँ ही जानती हैं। सतियों को उनके पति, एक पति के अलावा अन्य किसी के बारे में सोच ही नहीं और वैसा कभी भी नहीं। उसका पति तुरंत मर जाए, चला जाए, फिर भी नहीं। उसी पति को पति मानती है। अब उन स्त्रियों का सारा कपट खत्म हो जाता है। किस का कपट खत्म हो जाता है?

प्रश्नकर्ता : सती स्त्रियों का।

दादाश्री : जो स्त्री पूर्णरूप से सती की तरह रहती है, उसके सारे रोग मिट जाते हैं।

प्रश्नकर्ता : अभी हम आपके ज्ञान से और हमारे दोष आपको बताकर, हम भी सती बन सकेंगे न?

दादाश्री : सती तो, पहले से नहीं हुई हो, लेकिन बिगड़ जाने के बाद भी सती बन सकती है। जब से निश्चय किया, तब से सती बन सकती है।

प्रश्नकर्ता : और जैसे-जैसे सतीपना का ध्यान रखते जाएँगे, वैसे-वैसे कपट खत्म होता जाएगा?

दादाश्री : सतीपना किया, तब कपट तो जाने ही लगेगा अपने आप ही। आपको कुछ कहना नहीं पड़ेगा। मूल सती तो जन्म से ही सती होती है, इसलिए उसमें पहले का कोई दाग़ नहीं होता। और आपको पहले के दाग़ रह जाएँगे इसलिए फिर से अगले जन्म में पुरुष बनोगे। सतीपने से सब खत्म हो जाएगा। जितनी भी सतियाँ हुई थी उनका सारा (स्त्रीपना) खत्म हो जाएगा और वे मोक्ष में जाएगी। समझ में आता है थोड़ा बहुत? मोक्ष में जाते हुए सती बनना पड़ेगा। हाँ, जितनी सतियाँ हुई वे मोक्ष में गईं, वर्ना फिर पुरुष बनना पड़ेगा।

सर्वकाल में शंका जोखिमी ही

ये बेटियाँ बाहर जाएँ, पढ़ने जाएँ, तब भी शंका। 'वाइफ' पर भी शंका। ऐसा सब दग़ा है! घर में भी दग़ा ही है न अभी! इस कलियुग

में खुद के घर में ही दग़ा होता है। कलियुग यानी दग़े का काल। कपट और दग़ा, कपट और दग़ा, कपट और दग़ा! ऐसा किस सुख के लिए करते हैं? वह भी भान बिना, अभानता में! बुद्धिशाली लोगों में दग़ा और कपट नहीं होता। निर्मल बुद्धिवालों के वहाँ कपट और दग़ा नहीं होता। यह तो, 'फूलिश' इन्सान के यहाँ आज दग़ा और कपट होते हैं। कलियुग है यानी सभी 'फूलिश' ही जमा हुए हैं न!

प्रश्नकर्ता : लेकिन यह जो दग़ा और कपट होता है, उसमें भी राग और द्वेष काम करते हैं न?

दादाश्री : राग-द्वेष हैं, तभी यह सब कार्य होता है न! वर्ना जिसे राग-द्वेष नहीं हैं, उसे तो कुछ है ही नहीं न! राग-द्वेष नहीं हों, तो जो कुछ भी करे, कपट करे तो भी हर्ज नहीं है और अच्छा करे तो भी हर्ज नहीं है। क्योंकि वह धूल में खेलता ज़रूर है, लेकिन तेल नहीं लगाया और राग-द्वेषवाला तो तेल लगाकर धूल में खेलता है।

प्रश्नकर्ता : लेकिन दग़ा और कपट करने में बुद्धि का योगदान तो है ही न?

दादाश्री : नहीं, अच्छी बुद्धि कपट और दग़ा निकाल देती है। बुद्धि 'सेफसाइड' रखती है। एक तो शंका मार डालती है, फिर कपट और दग़ा तो होता ही है और फिर हर कोई खुद के सुख में ही मग्न होता है।

प्रश्नकर्ता : लेकिन खुद के सुख में रहने के लिए बुद्धि का उपयोग करके दग़ा और कपट खेल सकते हैं न?

दादाश्री : जहाँ खुद अपना सुख ढूँढते हैं, वहाँ अच्छी बुद्धि होती ही नहीं न! अच्छी बुद्धि तो सामुदायिक सुख ढूँढती है कि मेरा सारा परिवार सुखी हो जाए। लेकिन यह तो बेटा अपना सुख ढूँढता है, पत्नी अपना सुख ढूँढती हैं, बेटी अपना सुख ढूँढती है, बाप अपना सुख ढूँढता है, सभी अपना-अपना सुख ढूँढते हैं। यदि यह बात बता दें न तो परिवार के लोग साथ में रहेंगे ही नहीं। लेकिन ये तो सभी साथ रहते हैं और खाते-पीते हैं! ढँका हुआ है, वही अच्छा है।

बाकी शंका रखने जैसी चीज़ है ही नहीं, किसी भी प्रकार से। यह शंका ही इन्सान को मार डालती है। ये सभी शंका के कारण मर ही रहे हैं न! अत: इस दुनिया में यदि सबसे बड़ा कोई भूत है तो वह शंका का भूत है। सबसे बड़ा भूत! शंका जगत् में कई लोगों को खा गई है, निगल गई है! इसलिए शंका पैदा ही मत होने देना। शंका पैदा होते ही खत्म कर देना। भले ही कैसी भी शंका पैदा हो, उसे पैदा होते ही खत्म कर देना, उसकी बेल बढ़ने मत देना। वर्ना शंका चैन से नहीं बैठने देगी। वह किसी को चैन से नहीं बैठने देती। शंका ने तो लोगों को मार डाला है। शंका ने बड़े-बड़े राजाओं को, चक्रवर्तियों को भी मार डाला है।

यदि लोग कहें कि 'यह नालायक इन्सान है।' तो भी हमें उसे लायक कहना है। क्योंकि शायद वह नालायक नहीं भी हो और यदि उसे नालायक कहोगे तो बहुत दोष लगेगा। सती हो और उसे यदि वेश्या कह दिया तो भयंकर गुनाह होगा, उसका फल कई जन्मों तक भुगतना पड़ेगा। अत: किसी के भी चरित्र के संबंध में मत बोलना। क्योंकि यदि वह गलत निकला तो? लोगों के कहने से, यदि आप भी कहने लगें तो उसमें आपकी क्या क़ीमत रही? हम तो कभी भी किसी के बारे में ऐसा नहीं बोलते और किसी के बारे में बोला भी नहीं हूँ। मैं तो हाथ ही नहीं डालूँ न! वह ज़िम्मेदारी कौन ले? किसी के चरित्र से संबंधितं शंका नहीं करनी चाहिए। बहुत बड़ा जोखिम है। शंका तो हम कभी लाते ही नहीं। हम क्यों जोखिम उठाएँ?

अंधेरे में आँखें कहाँ तक खींचें

प्रश्नकर्ता : लेकिन शंका से देखने की मन की ग्रंथि बन गई हो तो वहाँ कौन सा एडजस्टमेन्ट लेना चाहिए?

दादाश्री : यह जो आपको दिखाई देता है कि इसका चरित्र खराब है तो क्या वैसा पहले नहीं था? यह क्या अचानक उत्पन्न हो गया है? इसलिए इस जगत् को समझ लेने जैसा है कि यह तो ऐसा ही है। इस काल में चरित्र से संबंधित किसी का कुछ भी देखना ही नहीं चाहिए।

इस काल में तो सभी जगह ऐसा ही रहता है। व्यवहार में भले ही न हो लेकिन मन तो बिगड़ता ही है। उसमें भी स्त्री चरित्र तो निरा कपट और मोह का ही संग्रहस्थान है, इसीलिए तो स्त्री का जन्म मिला है। इसमें सबसे अच्छी बात तो वही है कि जो विषय से छूट चुके हों।

प्रश्नकर्ता : चरित्र में तो ऐसा ही होता है, यह जानते हैं। इसके बावजूद भी मन यदि शंका दिखाए तब तन्मयाकार हो जाते हैं। वहाँ पर कौन सा 'ऐडजस्टमेन्ट' लेना चाहिए?

दादाश्री : आत्मा प्राप्त होने के बाद अन्य में पड़ना ही नहीं चाहिए। यह सब 'फ़ॉरिन डिपार्टमेन्ट' का है। हमें 'होम' में रहना है। आत्मा में रहो न! ऐसा ज्ञान बार-बार मिले ऐसा नहीं है, इसलिए काम निकाल लेना। एक आदमी को अपनी पत्नी पर शंका होती रहती थी। उसे मैंने कहा कि 'शंका क्यों होती है? तूने देखा, इसलिए शंका होती है? जब नहीं देखा था, तब क्या ऐसा नहीं होता था?' लोग तो जो पकड़ा जाए उसे चोर कहते हैं, लेकिन जो नहीं पकड़े गए, वे सब भी अंदर से चोर ही हैं। लेकिन ये तो जो पकड़ा जाए, उसी को चोर कहते हैं। अरे! उसे चोर क्यों कह रहा है? वह तो कच्चा था, कम चोरी की इसलिए पकड़ा गया। ज़्यादा चोरी करनेवाले कभी पकड़ में आते होंगे क्या?

प्रश्नकर्ता : लेकिन पकड़े जाएँ तब चोर कहलाएँगे न?

दादाश्री : नहीं। जो कम चोरियाँ करे वह पकड़ा जाता है और पकड़े जाने पर लोग उसे चोर कहते हैं। अरे! चोर तो ये जो नहीं पकड़े जाते, वे हैं। लेकिन यह जगत् तो ऐसा ही है।

इससे वह आदमी मेरा विज्ञान पूर्ण रूप से समझ गया। फिर उसने मुझे कहा है कि, 'अब मेरी वाइफ पर किसी का हाथ फिरे तो भी मैं भड़कूँगा नहीं।' हाँ, ऐसा होना चाहिए। मोक्ष में जाना हो तो ऐसा है, वर्ना अपने आप झगड़ते रहो। इस दूषमकाल में आपकी 'वाइफ' या आपकी स्त्री आपकी हो ही नहीं सकती और ऐसी आशा रखना भी फोकट है। यह दूषमकाल है, इसलिए इस दूषमकाल में तो जितने दिन

हमें रोटियाँ खिलाए, उतने दिन हमारी और यदि किसी और को खिलाए तो उसकी।

अत: सभी महात्माओं से कह दिया था कि शंका मत रखना। नहीं तो भी मेरा कहना है कि जब तक देखा नहीं हो, तब तक उसे सत्य मानते ही क्यों हो, इस कलियुग में? यह है ही पोलम्पोल! जो मैंने देखा है उसका यदि आपसे वर्णन करूँ तो कोई भी व्यक्ति जीवित ही नहीं रहेगा, तो अब ऐसे काल में अकेले पड़े रहना चाहिए मस्ती में और ऐसा 'ज्ञान' साथ में हो तो उसके जैसा तो कुछ भी नहीं।

अत: काम निकाल लेने जैसा है अभी। इसीलिए हम कहते हैं न कि, 'काम निकाल लो, काम निकाल लो!' ऐसा कहने का भावार्थ इतना ही है कि ऐसा किसी काल में नहीं आता और आया है तो जी जान लगाकर काम निकाल लो।

तो आपकी समझ में आया न कि नहीं देखा होता तो कुछ भी नहीं था, यह तो देखा उसका ज़हर है!

प्रश्नकर्ता : हाँ, देखने में आया इसीलिए ऐसा होता है।

दादाश्री : यह सारा जगत् अंधेरे में, पोलम्पोल ही चल रहा है। हमें यह सब ज्ञान में दिखाई दिया और आपके देखने में नहीं आया है, इसलिए आप देखेते ही भड़क जाते हो! अरे! भड़कता क्यों हैं? इसमें तो यह सब ऐसा ही चल रहा है, लेकिन आपको दिखता नहीं है। इसमें चौंकने जैसा है ही क्या? आप आत्मा हो तो भड़कने जैसा रहा ही कहाँ? यह तो जो सब जो 'चार्ज' हो चुका है उसीका 'डिस्चार्ज' है! जगत् साफ-साफ 'डिस्चार्ज' रूपी है। यह जगत् 'डिस्चार्ज' से बाहर नहीं है। इसलिए हम कहते हैं न, 'डिस्चार्ज' रूपी है अत: कोई गुनहगार नहीं है।

प्रश्नकर्ता : तो उसमें भी कर्म का सिद्धांत ही काम करता है न?

दादाश्री : हाँ, कर्म का सिद्धांत ही काम कर रहा है, और कुछ

भी नहीं। मनुष्य का दोष नहीं है, यह कर्म ही भरमाता है बेचारों को। लेकिन यदि उसमें शंका रखे न तो वह मर जाएगा, बिना वजह ही।

मोक्ष में जानेवालों को

देहाध्यास छूटे तो समझना कि मोक्ष में जाने की तैयारी हुई। देहाध्यास यानी देह में आत्मबुद्धि! वह सब देहाध्यास कहलाता है। कोई गाली दे, मारे, अपनी 'वाइफ' को अपने सामने ही उठा ले जाए, फिर भी अंदर राग-द्वेष नहीं हों, तो समझना कि वीतराग का मार्ग समझ में आ गया है! लोग तो फिर खुद की कमज़ोरी की वजह से उठा ले जाने देते हैं न! सामनेवाला मज़बूत हो तो 'वाइफ' को ले जाने देते हैं न?

अत: यह कुछ भी अपना है ही नहीं। यह सब पराया है। अत: यदि व्यवहार में रहना हो तो व्यवहार में मज़बूत बन और मोक्ष में जाना हो तो मोक्ष के लायक बन! जहाँ यह देह भी खुद की नहीं है, वहाँ स्त्री खुद की कैसे हो पाएगी? बेटी खुद की कैसे हो पाएगी? यानी आपको तो हर तरह से सोच लेना चाहिए कि स्त्री को उठा ले जाए तो क्या करना चाहिए?

जो होनेवाला है, वह बदल नहीं सकता, 'व्यवस्थित' ऐसा है। अत: चौंकना मत, इसीलिए ऐसा कहा है कि 'व्यवस्थित' है। जब तक नहीं देखे, तब तक कहेंगे 'मेरी पत्नी' और देखा तो फिर फड़फड़ाहट! अरे! पहले से ऐसा ही था। इसमें नया खोजना ही मत।

प्रश्नकर्ता : लेकिन 'दादाजी' ने तो बहुत ढील दे दी है।

दादाश्री : मेरा कहना यह है कि दूषमकाल में हम झूठी आशा रखें, उसका कोई अर्थ ही नहीं है न! और सरकार ने भी डाइवोर्स का कानून निकाल दिया है। सरकार पहले से ही जानती थी कि ऐसा होनेवाला है। अत: कानून पहले बनता है। यानी हमेशा दवाई का पौधा पहले उगता है, उसके बाद रोग उत्पन्न होता है। उसी तरह कानून पहले निकलता है, उसके बाद यहाँ लोगों में ऐसी घटनाएँ घटती हैं!

चरित्र संबंध में 'सेफसाइड'

जिसे पत्नी के चरित्र से संबंधित शांति चाहिए तो उसे एकदम काले रंग की गोदनेवाली पत्नी लानी चाहिए, ताकि जिसका कोई ग्राहक ही नहीं हो, कोई और उसे रखे ही नहीं। और वह भी ऐसा ही कहेगी कि, 'मुझे कोई रखनेवाला नहीं है, एक ये पति ही मिले हैं, वे ही रख रहे हैं।' तो वह आपके प्रति सिन्सियर रहेगी, बहुत सिन्सियर रहेगी। यदि सुंदर होगी तो लोग उसे भोगेंगे ही! सुंदर होगी तो लोगों की दृष्टि बिगड़ेगी ही! कोई सुंदर पत्नी लाए तब हमें यही विचार आता है कि इसकी क्या दशा होगी! काली गोदनेवाली होगी तो ही 'सेफसाइड' रहेगी।

पत्नी बहुत सुंदर होगी, तभी उसका पति भगवान को भूलेगा न? और पति बहुत सुंदर हो तो पत्नी भी भगवान को भूल जाती है! अतः सबकुछ अनुपात में हो तो अच्छा रहता है। अपने बुज़ुर्ग तो ऐसा कहते थे कि, 'खेत रखना समतल और पत्नी रखना बदसूरत।' ऐसा क्यों कहते थे? क्योंकि पत्नी यदि बहुत सुंदर होगी तो कोई नज़र बिगाड़ेगा। उसके बजाय पत्नी ज़रा बदसूरत हो तो अच्छा, ताकि कोई नज़र नहीं बिगाड़े न! ये बुज़ुर्ग अलग दृष्टि से कहते थे, वे धर्म की दृष्टि से नहीं कहते थे। मैं धार्मिक रूप से कहना चाहता हूँ। पत्नी बदसूरत होगी तो हमें कोई भय ही नहीं न! घर से बाहर निकले, फिर भी कोई नज़र बिगाड़ेगा ही नहीं न! अपने बुज़ुर्ग तो बड़े पक्के थे। लेकिन मैं जो कहना चाहता हूँ, वह वैसा नहीं है। वह अलग है। वह बदसूरत होगी न, तो अपने मन को बहुत परेशान नहीं करेगी, भूत बनकर चिपटेगी नहीं।

कैसी दग़ाबाज़ी यह

ये लोग तो कैसे हैं? जहाँ 'होटल' देखा, वहाँ खाना 'खाते हैं'। अतः यह जगत् शंका रखने जैसा नहीं है। शंका ही दुःखदायी है। अब जहाँ होटल देखे वहाँ खाते हैं। उसमें पुरुष भी ऐसा करता है और स्त्री भी ऐसा ही करती है। फिर पुरुष को ऐसा नहीं होता कि मेरी पत्नी क्या कर रही होगी? वह तो ऐसा ही समझता है कि मेरी पत्नी तो अच्छी ही है, लेकिन उसकी

पत्नी तो उसे पाठ पढ़ाती है! पुरुष भी स्त्री को पाठ पढ़ाते हैं और स्त्रियाँ भी पुरुषों को पाठ पढ़ाती हैं! फिर भी जीत स्त्रियों की होती है क्योंकि इन पुरुषों में कपट नहीं होता न! इसीलिए पुरुष स्त्रियों से ठगे जाते हैं!

जब तक 'सिन्सयारिटि-मॉरेलिटी' थी, तब तक संसार भोगने योग्य था। अभी तो भयंकर दग़ाबाज़ी है। इनमें से हर एक को यदि उसकी 'वाइफ' की बात बता दूँ तो कोई अपनी 'वाइफ' के पास नहीं जाएगा। मैं सभी के बारे में जानता हूँ लेकिन किसी से कहता-करता नहीं, हालांकि पुरुष भी दग़ाबाज़ी में पीछे नहीं हैं। लेकिन स्त्री तो निरा कपट का ही कारखाना है! कपट का संग्रहस्थान, अन्यत्र कहीं भी नहीं होता, सिर्फ स्त्री में ही होता है।

यह जो संडास होता है उसमें हर कोई जाता है न? या एक ही व्यक्ति जाता है?

प्रश्नकर्ता : सभी जाते हैं।

दादाश्री : तो सभी जिसमें जाते हैं, वह संडास कहलाता है। अत: जहाँ पर अनेक लोग जाते हों न, उसका नाम संडास! जब तक एक पत्नीव्रत और एक पतिव्रत रहे, तब तक वह सबसे अच्छी चीज़ कहलाती है। तब तक चारित्र कहलाता है, वर्ना फिर संडास कहलाता है। आपके यहाँ संडास में कितने लोग जाते होंगे?

प्रश्नकर्ता : घर के सभी लोग जाते हैं।

दादाश्री : एक ही व्यक्ति नहीं जाता न? अत: फिर दो जाएँ या फिर सभी जाएँ, लेकिन वह संडास कहलाता है।

यह तो जहाँ होटल आया वहाँ खाना खाता है। अरे! खाता-पीता भी है! अत: शंका निकाल देना। शंका से तो हाथ में आया हुआ मोक्ष भी चला जाएगा। आपको ऐसा ही समझ लेना है कि उससे मैंने शादी की है और वह मेरी किरायेदार है! बस, इतना मन में समझ लेना है। फिर चाहे अन्य किसी के भी साथ घूमे तो भी शंका नहीं करनी चाहिए। आपको

काम से काम है न? आपको संडास जाने की ज़रूरत पड़े तो संडास जाकर आना! जहाँ जाए बगैर चले नहीं, उसका नाम संडास। इसलिए तो ज्ञानियों ने स्पष्ट कहा है न, कि संसार दग़ा है।

प्रश्नकर्ता : दग़ा नहीं लगता, वह किस वजह से?

दादाश्री : मोह की वजह से! और कोई कहनेवाला भी नहीं मिला न! लेकिन लाल झंडी दिखाए तो गाड़ी खड़ी रहेगी, वर्ना गाड़ी जाकर नीचे गिरेगी।

शंका की पराकाष्ठा पर समाधान

शंका से ही जगत् खड़ा है। जिस पेड़ को सुखाना है, शंका करके उसी पर पानी छिड़कता हैं, और उससे और ज़्यादा शंका होती है। अतः यह जगत् किसी प्रकार की शंका करने जैसा नहीं है।

अब आपको संसार से संबंधित अन्य कोई शंका रहती है? आपकी 'वाइफ' किसी और के साथ बैंच पर बैठी हो और दूर से वह आपके देखने में आए तो आपको क्या होगा?

प्रश्नकर्ता : अब कुछ नहीं होगा। ऐसे थोड़ा इफेक्ट होगा फिर कुछ नहीं होगा। फिर तो 'व्यवस्थित' है और वह ऋणानुबंध है, ऐसा ध्यान आ जाएगा।

दादाश्री : कितने पक्के हैं! कितना हिसाब लगाया है! और शंका तो नहीं होगी न?

प्रश्नकर्ता : नहीं होगी।

दादाश्री : और ये लोग तो 'वाइफ' ज़रा सा देर से आए, तो भी शंका करते रहते हैं। शंका करने जैसा नहीं है। ऋणानुबंध से बाहर कुछ भी होनेवाला नहीं है। वह घर लौटे, तब उसे समझाना, लेकिन शंका मत करना। शंका तो बल्कि और ज़्यादा पानी छिड़केगी। हाँ, चेतावनी ज़रूर देना, लेकिन कोई शंका मत रखना। शंका रखनेवाला मोक्ष खो बैठता है।

आपको यदि छूटना हो, मोक्ष में जाना हो तो आपको शंका नहीं करनी चाहिए। कोई अन्य पुरुष आपकी 'वाइफ' के गले में हाथ डालकर घूम रहा हो और वह आपने देख लिया तो क्या आपको ज़हर खा लेना चाहिए!

प्रश्नकर्ता : नहीं, ऐसा क्यों करूँ?

दादाश्री : तो फिर क्या करोगे?

प्रश्नकर्ता : थोड़ा नाटक करना पड़ेगा, फिर ज़रा समझाना। बाद में फिर जो कुछ भी करे वह 'व्यवस्थित'।

दादाश्री : हाँ, ठीक है। आपकी 'वाइफ' पर, और घर में अन्य किसी पर भी अब आपको शंका नहीं होगी न? क्योंकि ये सारी 'फाइलें' हैं। उसमें शंका करने जैसा क्या है? जो हिसाब होगा, जो ऋणानुबंध होगा, उसके अनुसार फाइलें टकराएँगी और हमें तो मोक्ष में जाना है!

[६]

विषय बंद, वहाँ लड़ाई-झगड़े बंद

बातें ज्ञान की और वर्तन में क्लेश

प्रश्नकर्ता : मैंने कई अच्छे महात्मा देखे हैं, जो बड़ी-बड़ी ज्ञान की बातें करते हैं, लेकिन उनका स्थूल क्लेश नहीं जाता। सूक्ष्म क्लेश तो शायद हो भी सही, वह नहीं जाता लेकिन स्थूल क्लेश अपने से क्यों नहीं जा सकता?

दादाश्री : ऐसा! इन सबका मूल है विषय। यदि दुनिया में सबसे बड़ा फँसाव कोई हो, तो वह विषय है और उसमें कुछ भी सुख नहीं है। सुख में कुछ भी नहीं और उसकी वजह से झगड़े बेहिसाब होते हैं! घर में लड़ाई-झगड़े क्यों होते हैं? दोनों विषयी होते हैं, जानवर जैसे विषयी होते हैं, फिर सारा दिन टकराव होता रहता है।

प्रश्नकर्ता : लेकिन मुझे यह समझ में नहीं आता कि क्लेश और विषय साथ में कैसे हो सकते हैं? झगड़ा और विषय, दोनों का मेल कैसे बैठेगा? वह मेरे दिमाग़ में नहीं बैठता। मारपीट तक का क्लेश और विषय, उन दोनों का मेल बैठेगा? क्या मनुष्य तब अंधा हो जाता होगा?

दादाश्री : अरे! आमने-सामने मारते हैं।

प्रश्नकर्ता : हाँ, लेकिन जब विषय के परमाणु खड़े हों, तब क्या अंधा हो जाता होगा? उन्हें अंदर से याद नहीं आता होगा कि हम मारपीट कर रहे थे?

दादाश्री : मारपीट करें, तभी तो उन्हें विषय का मज़ा आता है न!

और फिर स्वमान जैसा कुछ भी नहीं। पत्नी पति को धौल लगाए तो पति पत्नी को धौल लगाता है। फिर पति हमसे आकर कह जाता है कि 'मेरी पत्नी मुझे मारती है!' तब मैं कहता भी हूँ कि, 'हें! तुझे तो ऐसी मिली? फिर तो तेरा कल्याण हो जाएगा!'

प्रश्नकर्ता : यह सब फज़ीता सुनते ही यों हैरान हो जाते हैं कि ये लोग कैसे जीते होंगे?

दादाश्री : फिर भी जी रहे हैं न! तूने दुनिया देखी न! और जीएँ नहीं तो क्या करें? मर थोड़े ही सकते हैं?

प्रश्नकर्ता : लेकिन हमें यह सब देखकर कँपकँपी छूट जाती है। फिर ऐसा होता है कि हर रोज़ ऐसे झगड़े चलते रहते हैं फिर भी पति-पत्नी को इसका हल लाने का मन नहीं होता, यह भी आश्चर्य है न?

दादाश्री : ये तो, कई बरसों से, जब से शादी की, तभी से ऐसा ही चल रहा है। शादी की तभी से एक ओर झगड़े भी जारी हैं और एक ओर विषय भी ज़ारी है! इसीलिए तो हमने कहा कि आप दोनों ब्रह्मचर्यव्रत ले लो, तो लाइफ उत्तम हो जाएगी। अतः ये सब लड़ाई-झगड़े वे अपनी गरज़ के मारे करते हैं। पत्नी जानती है कि ये आख़िर कहाँ जाएँगे? पति भी जानता है कि यह कहाँ जाएगी? ऐसे आमने-सामने गरज़ की वजह से चल रहा है।

राग-द्वेष की बुनियाद पर है विषय

प्रश्नकर्ता : आपने कहा न कि राग-द्वेष का मूल स्थान ही यह है?

दादाश्री : हाँ, जगत् में हर चीज़ का मूल यहीं से शुरू हुआ है! और शादी करने के बाद पति मारता है और उसके मारने से पहले पत्नी भी मारती है! इससे दोनों ज़ोरदार और मज़बूत बन जाते हैं!

प्रश्नकर्ता : सबके सामने ऐसी फ़ज़ीहत हो, तो घर से बाहर हम क्या मुँह लेकर निकल सकेंगे?

दादाश्री : तब क्या करे? घर में बैठा रहे? फिर उसकी बुद्धि तुरंत क्या दिखाती है कि सभी जगह घर-घर में ऐसा ही है!

कलह किस कारण से होती है? अब्रह्मचर्य की वजह से। विषय पर कंट्रोल नहीं होने के कारण है यह सब कलह। वर्ना स्त्री-पुरुषों के बीच कलह क्यों होती? दुनिया में, विषय पर काबू रखनेवालों में कलह नहीं होती, सोचने पर क्या आपको ऐसा लगता है?

विषय में सुख की तुलना में विषय की परवशता के दुःख अधिक हैं! ऐसा जब समझ में आएगा, तब फिर विषय का मोह छूटेगा और तभी स्त्री जाति पर प्रभाव डाल सकेगा और उसके बाद वह प्रभाव निरंतर प्रताप में परिणमित होता रहेगा। वर्ना इस जगत् में बड़े-बड़े महान पुरुषों ने भी स्त्री जाति से मार खाई है। वीतराग ही बात को समझ सके थे! इसलिए उनके प्रताप से ही स्त्रियाँ दूर रहती थीं! वर्ना स्त्री जाति तो ऐसी है कि किसी भी पुरुष को देखते ही देखते लट्टू बना दे, उनमें ऐसी शक्ति है। उसे ही स्त्री चरित्र कहा है न! स्त्री से तो दूर ही रहना चाहिए। उसे किसी प्रकार से लपेट में मत लेना, वर्ना आप ही उसकी लपेट में आ जाओगे। और यही का यही झंझट कितने जन्मों से हुआ है न!

सबसे ज़्यादा विषयी स्त्री होती है। उससे ज़्यादा विषयी नपुसंक होते हैं और पुरुष तो स्त्री से भी कम विषयी होता है। विषय उत्पन्न होने के बाद जो जल्दी से कंट्रोल कर सके, वह कम विषयी कहलाता है। पुरुष जल्दी कंट्रोल कर सकता है। स्त्री कंट्रोल नहीं कर सकती! जितना ज़्यादा विषयी उतनी स्थिरता ज़्यादा, जितना कम विषयी उतनी स्थिरता कम। ये सारे कुदरती नियम हैं। शास्त्रकारों ने तो कहा है कि जिसे नपुसंक लिंग हो, वह दस घंटों तक एक ही जगह पर सोता रहे तो भी खुद के विषय के भाव व्यक्त नहीं करता। स्त्री भी विषय के भाव व्यक्त नहीं करती और पुरुष तो घंटेभर में ही भाव व्यक्त कर देता है!

फिर भी नहीं आता वैराग्य

यह तो, वैराग्य ही नहीं आता! अरे, यह विषय प्रिय है या तुझे ये

गालियाँ प्रिय है? मुझे तो कभी किसी ने एक गाली दी हो, तो फिर मैं तो उसके साथ संबंध ही कट कर दूँ, फिर बाहरी संबंध रखूँ लेकिन आंतरिक संबंध कट! क्या यह जन्म गालियाँ सुनने के लिए है?

आपको यदि घर में रोज़-रोज़ के लड़ाई-झगड़े पसंद नहीं हों, तो फिर उसके साथ विकारी संबंध ही बंद कर देना। पाशवता बंद कर देना। विषय तो निरी पाशवता है। इसलिए पाशवता बंद कर देना। जो बुद्धिमान और समझदार होगा, उसे विचार नहीं आएगा? फोटो खींचे तो कैसा दिखेगा? फिर भी शर्म नहीं आती? मैंने ऐसा कहा, तब ऐसा सोचोगे, वर्ना ऐसा विचार कहाँ से आएगा? जब तक आपमें विकारी संबंध है, तब तक यह लड़ाई-झगड़े रहेंगे ही। इसलिए हम आपके लड़ाई-झगड़ो के बीच पड़ते ही नहीं। हम जानते हैं कि जब विकार बंद हो जाएँगे तब उसके साथ झगड़े बंद हो ही जाएँगे। एक बार उसके साथ विकार बंद कर दिया न, फिर तो यह (पति) उसे मारे तो भी वह कुछ नहीं बोलेगी, क्योंकि वह जानती है कि अब मेरी हालत खराब हो जाएगी! यानी अपनी भूल से ही यह सब हो रहा है। अपनी भूल के कारण ही ये सारे दुःख हैं। वीतराग कितने समझदार! भगवान महावीर तो तीस साल की उम्र में ही अलग होकर वा... ह...! मस्ती में घूमते थे। एक बेटी को छोड़कर चल पड़े थे!

उसके साथ विषय बंद करने के अलावा अन्य कोई उपाय ही नहीं है। इस दुनिया में किसी को इसके अलावा दूसरा कोई उपाय मिला ही नहीं है। क्योंकि इस जगत् में राग-द्वेष का मूल कारण ही यह है, मौलिक कारण ही यह है। यहीं से सारा राग-द्वेष पैदा हुआ है। सारा संसार यहीं से शुरू हुआ है। अतः यदि संसार बंद करना हो तो यहीं से बंद करना पड़ेगा। फिर भले ही आम खाओ, जो अच्छा लगे वह खाओ न! बारह रुपये दर्जनवाले आम खाओ न! कोई पूछनेवाला नहीं है। क्योंकि आम आपके विरुद्ध दावा नहीं करेंगे। आप उन्हें नहीं खाओगे तो, वे कोई कलह नहीं करेंगे जबकि स्त्री-पुरुष के संबंध में तो यदि आप कहो कि 'मुझे नहीं चाहिए।' तब वह कहेगी कि, 'नहीं, मुझे तो चाहिए ही।' वह कहे

कि 'मुझे सिनेमा देखने जाना है।' तब अगर आप नहीं जाओगे तो कलह! जान पर बन आई समझो! क्योंकि सामने मिश्रचेतन है और वह क़रारवाला है इसलिए दावा करेगी!

प्रश्नकर्ता : उस क़रार को फाड़ देना चाहिए?

दादाश्री : उस क़रार को फाड़ दोगे, तो फिर कोई दुःख रहेगा ही नहीं!

पत्नी तो कब वश होगी?

पत्नी यदि पति की भक्ति करे तो पत्नी को मनुष्यपन मिलता है और पति यदि पत्नी की भक्ति करे तो पाशवता मिलती है। चार पैर और दुम बोनस में। उछल-कूद करना अपने आप, कोई पूछनेवाला ही नहीं फिर तो!

यह तो सब मटियामेट हो गया है। इसीलिए इस काल के करीब पचास प्रतिशत मनुष्य तो जानवर में ही जानेवाले हैं बेचारे! मैं खुल्लम-खुल्ला बता रहा हूँ। इसीलिए इस विषय की जड़ काट दी है ताकि फिर पूरा पेड़ अपने आप सूख जाए, बाकी ऐसी फ़ज़ीहत कौन करेगा? अतः हमारे पास आकर दोनों ही ब्रह्मचर्यव्रत ले लेना, तो झंझट ही मिट जाएगी न! आपको व्रत लेने की गरज़ है या नहीं? उन्हें भी गरज़ है? तो आपको? तो दोनों ही ब्रह्मचर्यव्रत ले लेना, ताकि हमेशा के लिए झंझट ही मिट जाए। फिर वह क्या दख़ल करेगी? एक अक्षर बराबर भी दख़ल नहीं करेगी न?

स्त्रियाँ पति को धमकाकर रखती हैं, उसका क्या कारण है? पुरुष ज़्यादा विषयी होते हैं, इसीलिए धमाकाकर रखती है। ये स्त्रियाँ खाना खिलाती हैं, इसलिए धमाकाकर नहीं रखतीं, विषय के कारण धमाकाकर रखती हैं। यदि पुरुष विषयी नहीं होगा, तो कोई स्त्री धमाकाकर नहीं रखेगी! कमज़ोरी का ही फ़ायदा उठाती हैं। लेकिन यदि कमज़ोरी नहीं होगी, तो स्त्री कुछ भी नहीं करेगी। स्त्री जाति बहुत कपटवाली है और

पुरुष भोले! अतः आपको दो-दो, चार-चार महीनों के लिए कंट्रोल रखना पड़ेगा, तो फिर वे अपने आप थक जाती हैं। तब फिर उन्हें कंट्रोल नहीं रहता।

स्त्री जाति कब वश में आती है? पुरुष यदि विषय में बहुत सेन्सिटिव (चंचल) हों, तो वह पुरुष को वश में कर लेती है! लेकिन यदि आप विषयी हों, लेकिन उसमें सेन्सिटिव नहीं हो जाओ तो वह वश में आ जाएगी! यदि वह 'खाने के लिए' बुलाए और आप कहो कि अभी नहीं, दो-तीन दिन के बाद, तो वह आपके वश में रहेगी! वर्ना आप वश में हो जाते हो! यह बात मैं पंद्रह साल की उम्र में ही समझ गया था। कुछ लोग तो विषय की भीख माँगते हैं कि, 'बस आज के दिन!' अरे, विषय की भीख कभी माँगनी चाहिए? फिर तेरी क्या दशा होगी? स्त्री क्या करती है? सवार हो जाती है। सिनेमा देखने गए तो कहेगी, 'बच्चे को उठा लो।' अपने महात्माओं में विषय है, लेकिन विषय की भीख नहीं होती। विषय और विषय की भीख, ये दोनों चीज़ें अलग हैं। जहाँ मान, कीर्ति, और विषयों की भीख नहीं होती, वहाँ भगवान रहते हैं।

यदि विषय में बहुत सेन्टिमेन्टल नहीं हो तो छूट जाएगा। विषय की भीख नहीं माँगनी चाहिए। कुछ लोग तो विषय की भीख माँगते हैं। अरे! पाँव भी पड़ते हैं! कुछ तो मुझे आकर ऐसा भी कह गए हैं कि, 'मेरी स्त्री विषय के लिए मना करती है, तो अब मैं क्या करूँ?' मैंने कहा कि, 'माँ कहना, तो फिर हाँ कर देगी।' अरे घनचक्कर, तुझे शर्म नहीं आती? मना करे तो क्या उसे 'माँ' कहेगा? 'जाने दे, नहीं चाहिए मुझे', कहना। यह तो खुद माँग करता रहता है फिर स्त्री धमकाती ही रहेगी न? और वह मना करे, वह तो बल्कि अच्छा है। 'भला हुआ छूटी जंजाल।' एकबार उसने मना किया, तो आप जीत गए। फिर वह माँगे तो उसका 'दावा' सुनना ही मत। फिर कहना, 'तूने मना किया इसलिए मैंने बंद कर दिया है, ताला ही लगा दिया और ताले को चाबी लगा दी।' लेकिन मुआ, ढीला होता है, तो फिर क्या हो?

अभी तो मुझे कितने ही महात्मा आकर बता जाते हैं कि, 'मुझसे

आजिज़ी करवाती है।' तब मैंने कहा, 'मुए, तेरा रूआब चला गया तो क्या करवाए फिर? समझ जा न अभी भी, योगी बन जा न!' अब इनका कैसे पार पाएँ? इस दुनिया का पार कैसे पाएँ?

एक स्त्री अपने पति से चार बार साष्टांग करवाती है, तब एक बार छूने देती है। तब मुए, इसके बजाय समाधि ले ले तो क्या बुरा है? समुद्र में समाधि ले तो सीधे समुद्र तो है। झंझट तो नहीं! इसके लिए चार बार साष्टांग!

मुंबई में एक आदमी तो मुझसे फरियाद करने आया और कहने लगा कि पाँच बार फाइल नंबर दो के पाँव छूए, तब जाकर मुझे संतुष्ट किया। मुए! इसके बजाय तो... कैसा आदमी है तू, जानवर है क्या! क्या देखकर मुझे बताने आया तू! विषय की भीख माँगी जाती होगी कभी? क्या लगता है तुझे? अरे मुए! पाँच बार? अब मुझे सीधा बताने आया, इसलिए मुझे डाँटना पड़ा। फिर मुझसे कहने लगा कि अब रास्ता बताइए। तब मैंने कहा, 'अब जब यह छूट जाएगा, उसके बाद रास्ता बताया जा सकता है! फिर धीरे-धीरे वह सीधा हो गया। उल्टा चलेगा तो फिर क्या होगा?

विषय के भिखारीयों, देखो संयमी 'वीर' को

वह मुझे ऐसा कहकर गया कि 'मुझे विषय की भीख माँगनी पड़ती है।' अरे! विषय की भीख माँगते हो! कैसे आदमी हो! जानवर से भी बदतर! विषय की भीख माँगी जाती होगी? खाने की भीख नहीं माँगते, भूख लगी हो तो क्या भीख माँगते हैं कभी! कुछ शूरवीरता तो होनी चाहिए या नहीं? अब इतना अधिक असंयम कैसे पुसाए? आप नहीं समझे, मैंने जो बात कही वह?

प्रश्नकर्ता : हाँ समझ गया।

दादाश्री : माँगते समय इस तरह नमस्कार भी करता है। भाड़ में जाए तेरी माँग! और फिर पति कहता है 'मैं पति हूँ!' अरे मुए, पति ऐसा होता होगा? आपको अनुचित नहीं लगता? यह उचित बात है? इन्सान

को शोभा देता है क्या? यानी थोड़ा बहुत संयम होना चाहिए, सभी कुछ होना चाहिए।

मनुष्य को संयमी रहना ही चाहिए। संयम से तो मनुष्य की शोभा है। संयम के बारे में शास्त्रकारों ने छोटे से छोटा संयम यह बताया है कि महीने में दस दिन हो तब तक उसे चला लेंगे। और बड़ा संयम इसे कहा कि महीने में चार ही बार हो। उसका कोई नियम तो होना चाहिए या नहीं होना चाहिए? महीने में कितने दिनों की छुट्टी मिलती है?

प्रश्नकर्ता : आठ दिन।

दादाश्री : हाँ, तो ऐसा कुछ नियम होना चाहिए या नहीं?

प्रश्नकर्ता : लेकिन संयम कैसे रखें?

दादाश्री : आप किसी के घर गए हों और बहुत भूख लगी हो, तो आप कहो कि, 'भाई साहब, खाना दीजिए न!' लेकिन यदि वह कहे कि, 'यहाँ आपको खाना नहीं मिलेगा।' तो आप क्या करोगे? जो होना हो सो होगा, लेकिन तब तो वहाँ से चले जाओगे न? रौबदार हो न! क्या बिल्कुल ही बिना रौबवाले कुत्ते जैसे हो? फिर खाने के लिए खड़ा रहेगा वहाँ?

प्रश्नकर्ता : नहीं।

दादाश्री : हें, ऐसे कुछ इज़्ज़त तो होनी चाहिए या नहीं? स्वमान फ्रैक्चर होने देना चाहिए या विषय फ्रैक्चर होने देना चाहिए? क्या फ्रैक्चर होने देना चाहिए? भले ही कैसा भी विषय हो, लेकिन यदि वह स्वमान फ्रैक्चर करे, तो वह किस काम का? सभी जगह ऐसा ही हो गया है, आपके साथ नहीं, सभी जगह यही हो गया है। नींद ठीक से आए, अपना खुद का स्वतंत्र जीवन हो, जीवन खुद के कंट्रोल में हो। जो संयमी पुरुष होते हैं न, उनका स्लीपिंग रूम अलग होता है। हं... अलग, पहले से ही अलग रखते थे, वर्ना फिर मनोबल ढीला पड़ जाता है। फिर उसके बाद उसे अपमान-स्वमान का ठिकाना नहीं रहता।

शास्त्रकारों ने तो यहाँ तक कहा है कि यदि आपको संयम रखना हो, तो जहाँ पर पुरुष बैठा हो, उस जगह पर स्त्री को नहीं बैठना चाहिए और जहाँ स्त्री बैठी हो, वहाँ पर पुरुष को नहीं बैठना चाहिए। कुछ नियम तो खोज निकालना पड़ेगा न! जीवन जीने की कला तो होनी चाहिए या नहीं होनी चाहिए?

प्रश्नकर्ता : होनी चाहिए।

दादाश्री : कितनी अच्छी नौकरी करते हो, कितनी अच्छी पढ़ाई की है, क्या कमी है? न तो चोरी करते हो, न लुच्चाई करते हो, न ही कालाबाज़ारी करते हो, फिर भी अंदर शांति नहीं है न, जीवन जीवन नहीं है न!

प्रश्नकर्ता : शांति नहीं है, राइट!

दादाश्री : ऐसा जीवन जीने लायक नहीं है। वह सब आपको यहाँ बता देंगे। इस बार आपको कम्प्लीट, शत प्रतिशत पूर्ण करना है न!

तो स्वमान रखना चाहिए या नहीं रखना चाहिए? ससुर के वहाँ कपड़े की मिल हो और अपनी नौकरी छूट गई हो, तब क्या ससुर के वहाँ जाकर क्या ऐसे ही बैठे रहना चाहिए? वह कुछ कहे नहीं तो क्या आप माँग करोगे कि मुझे जोब दीजिए?

प्रश्नकर्ता : नहीं।

दादाश्री : ससुर जानता है फिर भी मुँह से कहता नहीं। 'छोड़ो फिर, मैं तो चला अपने घर!' कुछ तो स्वमान होना चाहिए या नहीं? कब तक ऐसे जानवर जैसा जीवन जीना है!

एक ही बार यदि आपकी कीमत नहीं रही तो खत्म हो गया। खुद की कीमत ही नहीं रहे, वहाँ तक नहीं जाना है। वह कीमत क्यों नहीं करती? विषयों के लालच के कारण। अतः इसमें तो बहुत ही योगी की तरह रहना चाहिए न?

विषय यानी क्या? भोजन की थाली भी एक विषय है। अब भोजन

आया और आपने कल पूरे दिन उपवास किया था और आज ग्यारह बजे भोजन लाकर रखे, उसमें आम आदि सबकुछ हो और फिर तुरंत उठाकर ले जाए। अब खाया नहीं, उससे पहले तो उठाकर ले जाएँ तो उस घड़ी अंदर परिणाम नहीं बदलें, तब समझना कि 'मुझे इस विषय में हर्ज नहीं है।' विषय के लिए याचकता नहीं होनी चाहिए। लाचारी नहीं होनी चाहिए। ये शब्द समझ में आए ऐसा है?

आपको यह बाउन्ड्री बता देता हूँ। किसी भी चीज़ के लिए याचकता नहीं होनी चाहिए। नहीं मिले तो कहता है, 'जलेबी लाओ न थोड़ी, जलेबी लाओ।' छोड़ न मुए, अनंत जन्मों से जलेबियाँ खाई हैं, फिर भी अभी तक याचकता रखते हो? जिसे लालसा होती है, उसे याचकता होती है। याचकता, वह लाचारी है एक प्रकार की!

ये तो विषय की भीख माँगते हैं, तो वे सभी जानवर से भी गएबीते कहलाएँगे न! खाने की भीख माँग सकते हैं। लेकिन खाने की भीख नहीं माँगते, तीन दिन निकल जाएँ, फिर भी। ऐसे खानदानी लोग विषय की भीख माँगते हैं? मैंने कहा, 'शायद अमरीका में नहीं माँगते होंगे?' तब कहते हैं, 'यह बात ही जाने दीजिए, यहाँ तो बहुत अधिक है, और अधिक मात्रा में है।'

प्रश्नकर्ता : पुरुषों को विषय की भीख होती है, वैसे ही स्त्रियों को भी विषय की भीख होती है न?

दादाश्री : हाँ, इतना यदि पुरुषों को आ जाए न, तो पुरुष जगत् जीत जाएगा! अगर नहीं जीतेगा तो पुरुष यूज़लेस हो जाएगा। पुरुष, पुरुष कब तक कहलाएगा? स्त्री उससे विषय की भीख माँगे, तब तक! अधिक विषयी स्त्री है, फिर भी पुरुष मूरख बन जाता है यह भी आश्चर्य है न!

ऐसा सुना ही नहीं है। इसमें कुछ गलत है, इतना भी नहीं जानते। यह जो भीख माँग रहे हैं, वह भूल हो रही है, इतना भी मालूम नहीं है।

प्रश्नकर्ता : ऐसी भूल तो इन्सान को कभी पता ही नहीं चलती। वर्ना भूल का अगर पता चल जाए तो फिर से वह ऐसा करेगा ही नहीं।

दादाश्री : पता ही नहीं चलता। बीस्ट (पशु) वाइल्ड बीस्ट (जंगली पशु) कहता हूँ मैं तो! हाँ, क्षत्रियपुत्र कौन? कि ऐसे भीख माँगने का अवसर आने से पहले तो बिल्कुल बंद ही कर दे। करे ही नहीं कभी भी, परमेनन्ट बंद। स्टॉप फॉर एवर (सदा के लिए बंद)। क्योंकि ऐसी नीयत है इसलिए वह स्त्री, स्त्री ही नहीं कहलाएगी। उसे स्त्री कहेंगे ही कैसे? वह तो मार्केट मटिरियल (बाज़ारू चीज़) कहलाएगी। हिन्दुस्तान की स्त्रियाँ, स्त्री जैसी होनी चाहिए! कैसी पशुता आई है? देखो न, मुझे उलाहना देना पड़ रहा है!

विषय से ही टकराव

प्रश्नकर्ता : विषय के लालच में जब सफल नहीं होता, तब फिर शंका आदि सब करता है न?

दादाश्री : सफल नहीं होता, तो सभी कुछ करता है। शंका करता है, कुशंका करता है, सब तरह के (नाटक) करता है फिर। या अल्लाह, परवरदिग़ार होता है फिर! यानी लाचार भी हो जाता है लेकिन फिर वही उसकी फज़ीहत भी करता है, सो अलग। उसके कब्ज़े में आए तो फिर फज़ीहत किए बगैर रहेगा ही नहीं न!

प्रश्नकर्ता : लेकिन विषय है, इसलिए पति पतिपना (पति के तौर पर हक़ जमाना) करता है न!

दादाश्री : पतिपना यानी क्या कि दबाव डालकर भोग लेना। लेकिन फिर जन्म का हिसाब बँध जाता है न?

प्रश्नकर्ता : उसमें क्या होता है?

दादाश्री : बैर बँधता है! घड़ी भर भी कोई आत्मा दबा हुआ रहता होगा?

बहुत टकराव हो जाए न, फिर कहता है, 'मुँह फुलाकर क्यों घूम रही हो?' तो मुँह फिर और ज़्यादा फूल जाता है। फिर वह ज़्यादा रोष रखती है। पत्नी कहेगी, 'मेरी लपेट में आएगा तब मैं इसका तेल निकाल

लूँगी।' वह रोष रखे बगैर रहेगी नहीं न! जीवमात्र रोष रखता है, आपके छेड़ने की देर है! कोई किसी से दबकर नहीं रहता। किसी का किसी से लेना-देना नहीं है। यह सब तो भ्रांति से मेरा दिखाई देता है, मेरा-तेरा!

यह तो, लाचारी में सामाजिक आबरू के कारण पति से दबकर रहती हैं, लेकिन फिर अगले जन्म में तेल निकाल देगी। अरे! साँप होकर डसेगी भी!

फिर लालच में से लाचारी में

एक स्त्री अपने पति को चार बार साष्टांग करवाए, तब जाकर एकबार छूने देती है! ऐसा करने के बजाय सागर में समाधि ले ले तो उसमें क्या गलत है? किसलिए ऐसे चार बार साष्टांग?

प्रश्नकर्ता : इसमें स्त्री क्यों ऐसा करती है?

दादाश्री : वह एक प्रकार का अहंकार है।

प्रश्नकर्ता : लेकिन उसका उसे क्या फल मिलेगा?

दादाश्री : कोई फ़ायदा नहीं, लेकिन अहंकार ऐसा कि 'देखा न, इसे कैसा सीधा कर दिया!' और वह बेचारा लालच से ऐसा करता भी है! लेकिन स्त्री को तो फिर उसका फल भुगतना पड़ेगा न!

प्रश्नकर्ता : उसमें वह खुद क्या स्त्रीपन का बचाव करती है?

दादाश्री : नहीं। स्त्रीपन का बचाव नहीं। वह अहंकार ही है, रौब के लिए है और पति को बंदर की तरह नचाती है। फिर उसके 'रीएक्शन्स' तो आएँगे ही न? पति भी बैर रखता है फिर कि, 'मैं तेरी पकड़ में आया, तब तूने मेरी ऐसी हालत की और मेरी इज़्ज़त उतारी। अब तू मेरी पकड़ में आए उतनी ही देर है!' यानी बाद में आबरू बिगाड़ देता है, घड़ीभर में धूल में मिला देता है।

लालची को तो, यदि कोई औरत विषय के लिए इन्कार करे न,

तो वह उसे 'माँ' कह दे, ऐसे अभान (बेसुध) लोग है! मेरा क्या कहना है कि आत्मसुख चखने के बाद विषयसुख की ज़रूरत ही कहाँ रही!

हमारा 'ज्ञान' क्या कहता है? जगत् में भोगने जैसा है ही क्या? तू बेकार ही इसके लिए प्रयत्न कर रहा है। भोगने योग्य तो आत्मा है!

प्रश्नकर्ता : उसे इन लालचों में से छूटना हो तो कैसे छूट सकता है?

दादाश्री : वह यदि इसका निश्चय करे तो यह सब छूट सकता है। लालच से छूटना तो चाहिए ही न! खुद के हित के लिए है न! निश्चय करने के बाद, मुक्त होने के बाद उस ओर सुख ही महसूस होगा। उसमें तो ज़्यादा सुख महसूस होगा, चैन मिलेगा बल्कि। यह तो उसे भय है कि मेरा यह सुख चला जाएगा, लेकिन इसके छूटने के बाद तो ज़्यादा सुख महसूस होगा।

लालच से भयंकर आवरण

जितनी भी चीज़ें ललचानेवाली हों, उन सभी को एक तरफ रख दे, उन्हें याद न करे, याद आए तो प्रतिक्रमण करे, तब वे छूट जाएँगी। बाकी शास्त्रकारों ने इसका और कोई उपाय नहीं बताया। बाकी सबका उपाय है, लालच का उपाय नहीं है। लोभ का उपाय है। लोभी व्यक्ति को तो यदि बड़ा नुकसान हो जाए न, तब लोभ चला जाता है, एकदम से!

प्रश्नकर्ता : फिर से 'ज्ञान' लेने बैठें, तो लालच निकल जाएगा?

दादाश्री : नहीं निकलेगा। 'ज्ञानविधि' में बैठने से थोड़े ही निकल जाएगा? वह तो, यदि खुद आज्ञा में रहने का प्रयत्न करे और निरंतर आज्ञा में ही रहना है, ऐसा तय करे और आज्ञाभंग होने पर प्रतिक्रमण करे, तब जाकर कुछ बदलेगा।

इस जगत् में लड़ाई-झगड़े कहाँ होते हैं? जहाँ आसक्ति होती है, वहीं पर। झगड़े सिर्फ कब तक होते हैं? जब तक विषय है, सिर्फ तभी

तक! फिर 'मेरी-तेरी' करने लगता है। 'यह तेरा बैग उठा ले यहाँ से, मेरे बैग में साड़ियाँ क्यों रखीं?' ऐसे झगड़े, जब तक विषय में एक हैं, तभी तक रहते हैं और विषय छूटने के बाद उसके बैग में रखे तो भी हर्ज नहीं। ऐसे झगड़े नहीं होते न फिर? बाद में कोई झगड़ा नहीं न? कितने साल से ब्रह्मचर्यव्रत लिया है?

प्रश्नकर्ता : यों तो नौ साल हो गए।

दादाश्री : यानी उसके बाद कोई झगड़ा-वगड़ा नहीं, कोई झंझट ही नहीं, और गृहस्थी चलती रहती है!

प्रश्नकर्ता : चल ही रही है न, दादाजी।

दादाश्री : बेटियों की शादी की, बेटों की शादी हुई, सभी कुछ....

प्रश्नकर्ता : घर में भी नहीं होता अब कुछ भी....

दादाश्री : ऐसा? गृहस्थी अच्छी चले, ऐसा है यह विज्ञान! हाँ, बेटे-बेटियों की शादियाँ करवाता है। अंदर छूता नहीं, निर्लेप रहता है और दुःख तो देखा ही नहीं है। चिंता-विंता देखी नहीं? बिल्कुल नहीं। नौ सालों से चिंता नहीं देखी न?

प्रश्नकर्ता : ऐसे तो बहुत मुसीबतें आती हैं, लेकिन छूती नहीं।

दादाश्री : आएँगी ज़रूर, वह तो ठीक है, गृहस्थी में है तो आएँगी तो सही। जितना स्पर्श नहीं करता, उतना ही फिर कुछ भी बाधक नहीं होता। सेफसाइड, सदा के लिए सेफसाइड। यहाँ बैठे ही मोक्ष हो गया, फिर अब बचा क्या?

प्रश्नकर्ता : मैं तो कहता हूँ कि यहीं पर मोक्ष का सुख बरतना चाहिए, तभी इसका मज़ा है!

दादाश्री : तभी। सच्चा मोक्ष यहीं बरतना चाहिए।

प्रश्नकर्ता : और यहाँ बरतता है इसीलिए कहते हैं न! अब देवलोक

नहीं चाहिए, यह संसार नहीं चाहिए। सुख बरते उसके बाद और किसी झंझट में कहाँ पड़े!

दादाश्री : हाँ, और गाड़ी वहीं पर जा रही है। सूरत के स्टेशन पर भले ही थोड़ी देर खड़ी रहे, लेकिन बोम्बे सेन्ट्रल की तरफ ही जा रही है!

चलो बहुत अच्छा! मैं ऐसा पूछूँ और कोई मुझे अपने अनुभव कहे तो मुझे ज़रा लगे कि नहीं, मेरी मेहनत सफल हुई! मेहनत फले, ऐसी तो आशा रखें न?

विषय छूटने के बाद का संबोधन, 'हीराबा'

जब से हीराबा के साथ मेरा विषय बंद हुआ होगा, तब से मैं उन्हें 'हीराबा' कहता हूँ। उसके बाद हमें कोई खास अड़चन नहीं आई। पहले जो थी वह विषय के साथ में, सोहबत में तो टकराव होता था थोड़ा-बहुत। लेकिन जब तक विषय का डंक है, तब तक टकराव नहीं जाता। जब वह डंक नहीं रहता, तब जाता है। हमारा खुद का अनुभव बता रहे हैं। यह तो अपना ज्ञान है, इसलिए ठीक है। वर्ना यदि ज्ञान नहीं होता तो डंक ही मारता रहे। तब तो अहंकार होता है न! उसमें अहंकार का एक भाग, भोग होता है कि, 'उसने मुझे भोग लिया' और पुरुष कहता है, 'उसने मुझे भोग लिया।' और अब (ज्ञान के पश्चात्) *निकाल* करते हैं वे, फिर भी वह 'डिस्चार्ज' किच-किच तो है ही। लेकिन फिर भी हमारे घर तो वह भी नहीं थी, किसी तरह का ऐसा कोई मतभेद नहीं था।

विज्ञान तो देखो! जगत् के साथ झगड़े ही बंद हो जाते हैं। पत्नी के साथ तो झगड़े नहीं, लेकिन सारे जगत् के साथ झगड़े बंद हो जाते हैं। यह विज्ञान ही ऐसा है और झगड़े बंद हुए यानी मुक्त हुआ।

किसी भी प्रकार का साहजिक हो उसमें हर्ज नहीं है। साहजिक यानी सहमतिपूर्वक। आपको दाढ़ी बनाने का भाव हुआ और नाई आकर खड़ा रहे तो कहना, 'आओ! चलो बैठो भाई!' इस प्रकार से संयोग मिल जाने

चाहिए। भीख माँगने की हद होनी चाहिए या नहीं? कितनी हद होनी चाहिए? एक बार कहो कि, 'ज़रा तैयारी करना।' तब यदि वह कहे, 'ए जी नहीं।' तब कहना, 'ये चले, नहीं चाहिए, अब बंद!'

ये सब तो इतने लाचार हो गए हैं सब। आदमी कैसा पावरवाला होना चाहिए! पूरी ज़िंदगी के लिए ब्रह्मचर्य का नियम लेनेवाला। अब्रह्मचर्य से संबंधित विचार तक नहीं आए ऐसी प्रतिज्ञाएँ करे।

यानी गंदगी ही है यह सारा जगत्। कोई ऐसे (भौतिक रूप से) गंदगी कहता है, कोई वैसे (आध्यात्मिक रूप से) गंदगी कहता है। शादी करने में वैराग्य नहीं आता, इसका क्या कारण है? अपमान खाने की आदत है इसलिए। अपमान निगल जाने की आदत है! सच्चा पुरुष तो नहीं निगलता न!

वह कहलाए तोतामस्ती

प्रश्नकर्ता : बाकी सभी फाइलों को तो मानो दाल में तड़का देकर खा सकें ऐसे हैं, लेकिन दो नंबर की फाइल का किस दाल में तड़का लगाएँ?

दादाश्री : दो नंबर की फाइल के साथ नहीं हो सकता। दो नंबर की फाइल ने तो यदि 'ज्ञान' लिया हुआ हो और जब टकराव हो जाए, तब उसे 'व्यवस्थित' समझती है। कौन टकराव कर रहा है यह जाने, तब मुक्त होगा।

प्रश्नकर्ता : ऐसा तो समझते हैं कि ये कर्म टकरा रहे हैं। लेकिन उसका रास्ता तो निकालना पड़ेगा न? सोल्युशन (हल) तो ढूँढना पड़ेगा न?

दादाश्री : उसका सोल्युशन तो होता है, लेकिन लोगों के मनोबल कच्चे होते हैं न! मनोबल कच्चे हों तो क्या करे, बेचारा? सोल्युशन में तो क्या कि आप कुछ हिस्सा है, उसे बंद कर दो तो तुरंत वह शांत हो जाएगा सभी। लेकिन मनोबल कच्चे हो तो क्या करे?

प्रश्नकर्ता : यह बताइए न कि कौन सा हिस्सा बंद कर देना चाहिए?

दादाश्री : विकारी विषय बंद कर देना। तो अपने आप ही सब बंद हो जाएगा। उसे लेकर हमेशा यह क्लेश चलता रहता हैं।

प्रश्नकर्ता : पहले तो हम ऐसा समझते थे कि घर के कामकाज को लेकर टकराव होता होगा। इसलिए घर के कामों में मदद करने बैठें, फिर भी टकराव।

दादाश्री : वे सारे टकराव तो होंगे ही। जब तक यह विकारी चीज़ है, संबंध है तब तक टकराव होंगे। टकराव का मूल यही है। जिसने विषय को जीत लिया, उसे कोई नहीं हरा सकता, कोई उसका नाम भी नहीं दे सकता। ऐसा प्रभाव पड़ता है।

प्रश्नकर्ता : विषय को नहीं जीत पाते, इसीलिए तो हम आपकी शरण में आए हैं।

दादाश्री : कितने सालों से विषय.... बूढ़े होने आए, फिर भी विषय? जब देखो तब विषय, विषय और विषय!

प्रश्नकर्ता : विषय बंद करने के बावजूद भी टकराव नहीं टलता, इसलिए तो हम आपके चरणों में आए हैं।

दादाश्री : हो ही नहीं सकता। जहाँ विषय बंद है वहाँ मैंने देखा कि जितने-जितने पुरुष मज़बूत मन के हैं, पत्नी तो यों उनके कहे में रहती है।

प्रश्नकर्ता : व्यवहार में जो अहम् रहता है कभी, तो उसके कारण चिनगारियाँ बहुत निकलती हैं।

दादाश्री : वे चिनगारियाँ अहम् की नहीं होतीं। देखने में वे चिनगारियाँ अहम् की लगती हैं, लेकिन विषय के अधीन होती हैं वे। जब विषय नहीं रहता, तब वे नहीं होतीं। विषय बंद हो जाए, तब वह इतिहास ही बंद हो जाता है। यानी ब्रह्मचर्यव्रत लेकर कोई यदि सालभर रहे तो

उससे जब मैं पूछता हूँ, तब वह बताता है कि, 'एक भी चिंगारी नहीं, किच-किच नहीं, झंझट नहीं, कुछ भी नहीं, 'स्टेन्ड स्टिल!' (पूर्ण शांति)। मैं फिर पूछता भी हूँ, मैं जानता हूँ कि ऐसा हो जाता है अब। यानी यह विषय के कारण होता है।

प्रश्नकर्ता : लड़ाई तो, शादी करे तभी से शुरू हो जाती है।

दादाश्री : हाँ, लेकिन तब से शुरू होनेवाली उस लड़ाई को हमारे अनुभवी लोगों ने नाम दिया है, तोतामस्ती। वह सचमुच की लड़ाई नहीं है। सचमुच की लड़ाई में तो दूसरे दिन ही अलग हो जाता। लेकिन यह तोतामस्ती है। हमें लगे कि तोता अभी इसे मार डालेगा, मार डालेगा, लेकिन नहीं मारता। काटता है, चोंच मारता है, सबकुछ करता है। यानी इसे तोतामस्ती कही। दूसरे दिन कुछ नहीं होता। दूध फट नहीं गया होता, चाय बन सकती है।

प्रश्नकर्ता : चाय दे, लेकिन पटककर दे, उसका क्या?

दादाश्री : हाँ, कप पटककर देती है, लेकिन फट नहीं जाती। वह कप पटककर दे, लेकिन यदि आप नहीं पटकेंगे तो उसका बंद हो जाएगा।

प्रश्नकर्ता : लेकिन लड़ाई बंद नहीं होती।

दादाश्री : लड़ाई तो यह विषय बंद होने पर ही बंद होती है। ज़रा सा भी लेन-देन किया कि लड़ाई। ज्ञान के अलावा अन्य किसी चीज़ का लेन-देन किया, तो वही लड़ाई और जो सारे सुख लिए हैं, वे जो लिए हैं उनका क्या करना होगा? 'री पे' करना (चुकाना) पड़ेगा। दाँतों से लिए गए सुख दाँतों से री पे करने पड़ेंगे। प्रत्येक से लिए गए सुख री पे करने पड़ेंगे। स्त्री से लिए गए सुख री पे करने पड़ेंगे। जो अभी हर रोज़ री पे कर रहा है। सुख है नहीं न, *पुद्गल* में सुख है ही नहीं। ऐसा सुख आत्मा में ही होता है कि जिसे रिपे नहीं करना पड़ता।

विषय बंद तो क्लेश बंद

जिसे क्लेश नहीं करना, जो क्लेश का पक्ष नहीं लेता, उसे क्लेश

होता तो है लेकिन धीरे-धीरे कम होता जाता है। यह तो, जब तक क्लेश करना ही चाहिए ऐसा मानते हैं, तब तक क्लेश ज़्यादा होता है। हमें क्लेश के पक्षकार नहीं बनना चाहिए। 'क्लेश करना ही नहीं है', ऐसा जिसका निश्चय है, उसके पास कम से कम क्लेश आता है और जहाँ क्लेश है वहाँ भगवान तो खड़े ही नहीं रहते न!

संसार में यदि विषय नहीं होता तो क्लेश होता ही नहीं। विषय है इसलिए क्लेश है, वर्ना क्लेश होता ही नहीं! विषय को यदि एक्ज़ेक्ट न्यायबुद्धि से देखे तो फिर से विषय करने का मनुष्य को मन ही नहीं होगा।

प्रश्नकर्ता : लेकिन विषय चीज़ ही ऐसी है जो न्यायबुद्धि से देखने ही नहीं देता न!

दादाश्री : यह विषय ऐसी चीज़ है कि एकबार अंध हुआ फिर देखने ही नहीं देता। सबसे अधिक अंध यानी लोभांध और उससे दूसरे नंबर पर हो तो विषयांध।

प्रश्नकर्ता : लोभांध को ज़्यादा खराब कहा जाता है?

दादाश्री : अरे! दुनिया में लोभांध की तो बात ही अलग है न! लोभांध तो दुनिया का एक नयी ही तरह का राजा। विषयवाले तो मोक्ष में जाने के लिए प्रयत्न करते हैं, क्योंकि विषयवालों को तो क्लेश होता है न! इसलिए फिर ऊब जाते हैं। जबकि लोभांध को तो क्लेश भी नहीं होता। वह तो खुद की लक्ष्मी के ही पीछे पड़ा रहता है, लक्ष्मी कहीं पर व्यर्थ व्यय नहीं हो रही है न, वही देखता रहता है और उसीमें वह खुश। बेटे-बेटी के घर बच्चे हों फिर भी उसे लक्ष्मी की ही पड़ी होती है। और फिर लक्ष्मी की रक्षा करने के लिए अगला जन्म, वहीं पर साँप बनकर बिगाड़ता है।

करो छः महीने के लिए आज़माइश

बहुत टेढ़े स्वभाववाली पत्नी मिली हो तो क्या होगा? अधोगति में

ले जाएगी! अतः उससे छूटने के लिए क्या करना पड़ेगा? उसके साथ विषय बिल्कुल बंद कर देना पड़ेगा, वर्ना कम कर देना पड़ेगा तो गाड़ी पटरी पर आएगी और तब मेल बठैगा। इस दुनिया में क्षय के जंतु की दवाई है, लेकिन मनुष्यरूपी जंतु तो क्षय के कीटाणुओं से भी भयंकर हैं। उनकी तो दवाई ही नहीं मिलती न!

प्रश्नकर्ता : दादाजी, मेरी ब्रह्मचर्य पालन करने की बहुत इच्छा है, लेकिन मेरी पत्नी मना करती है। इसी कारण से मैं यहाँ सत्संग में नहीं आऊँ उसके लिए बहुत धमाल करती है। तब मुझे क्या करना चाहिए?

दादाश्री : पुरुष ज़रा ढीले होते हैं, इसलिए स्त्रियाँ उनका लाभ उठाती हैं। जब तक पुरुषों को स्त्री से विषय की याचना रहेगी, तब तक स्त्रियाँ कभी भी काबू में नहीं आएँगी। चार-छः महीनों के लिए तू विषय बंद करके देख। वह गिड़गिड़ाने लगेगी। फिर स्त्री काबू में आ जाएगी। अपने को तो, उसका भी कल्याण हो, ऐसा सोचना चाहिए। उस बेचारी का उल्टा चलेगा, तो कहाँ जाएगी? वह अपना बुरा करना चाहे तो भी हमें उसका भला करना चाहिए। वह तो नासमझ है लेकिन हम तो समझदार हैं न या नहीं? छः महीने तुझ से कंट्रोल हो पाएगा या नहीं? छः महीनों में तो वह मोम की तरह नरम हो जाएगी। छः महीनों में ही तुझे चमत्कार जैसा लगेगा। एक आदमी को तो, तीन महीनों में ही उसकी पत्नी वश में आ गई थी और पति से कहने लगी कि आप जैसा कहेंगे वैसा करूँगी।

उसका स्वभाव विकारी है या मंद है?

प्रश्नकर्ता : थोड़ा है ज़रूर।

दादाश्री : तो वह तुरंत काबू में आ जाएगी। उसे आप ऐसे राह पर ला देना कि उसका भी भला हो और अपना भी भला हो। पत्नी यदि परेशान करे तो आप कहना कि मेरा ब्रह्मचर्य लेने का विचार है। यदि बहुत गिड़गिड़ाए तो कहना अभी दो महीनों बाद, तेरे बदलने के बाद। ऐसा करके कुछ भी करके उसे वश में लाना। वह जब विकार में आए, तब वह तुझे खुश करने का प्रयत्न करती है या नहीं करती?

उस समय उसके प्रति ध्यान मत देना। अब ऐसे ठगा मत जाना। अपने पास शुद्धात्मा का ज्ञान है, इसलिए संयम रख सकते हैं। यदि संयम नहीं रहा तो पुरुष दब ही जाएगा। अपना मन मत बिगड़ने देना। आपको उसके साथ काम से काम रखना है। सब बिगड़ न जाए, वह देखना है। वह अज्ञानी है इसलिए उल्टा करेगी। ज्ञानी उल्टा नहीं करते और आख़िर में विजय तो सत्य के पक्ष में ही होती है न? यह वश में करने का उपाय है। दूसरा उपाय नहीं है।

जो छूट चुके हैं, वे छुड़वा सकते हैं। जो बंधे हुए हैं वे क्या छुड़वाएँगे? घर-घर यही झगड़ा-फसाद है, यह क्या एक ही घर में है? तेरे जैसा तो कई लोगों के घर में हुआ है। कुछ लोगों का तो विषय छूट गया, कुछ लोग इसमें से निकल जाएँगे। कुछ लोग जीत नहीं सकते, तब मैंने उन्हें विषय छोड़ देने को कहा और अन्य मार्ग दिखाए! कभी न कभी तो विषय को जीतना ही पड़ेगा न?

ब्रह्मचर्य का बल नहीं है, इसलिए पुरुषों का स्त्रियों के साथ झंझट होता है। ब्रह्मचर्य का बल हो तो स्त्रियाँ नाम भी नहीं देंगी! बारह महीने नहीं तो छः महीने, लेकिन छः महीने तो तेरा सीधा चलेगा न? फिर से छः महीने के लिए ले लेना। फिर तो वह खुद भी कबूल करेगी कि, 'नहीं आप एक-दो साल ठहर जाइए, दो साल बाद हम दोनों साथ में ब्रह्मचर्यव्रत ले लेंगे।' सचमुच में ऐसा हो जाए तो बहुत अच्छा रहेगा। दोनों का इस तरह सही चलने लगे, फिर बाद में हम विधि कर दें तो वह बहुत अच्छा रहता है। पुरुष मायावी नहीं कहलाते, स्त्री जाति मायावी कहलाती है। जब प्रताप नामक गुण प्रकट होता है, तभी स्त्री जाति उस गुण पर आफ़रीन होती है और तभी स्त्री की कपट की खिड़की बंद हो जाती है। इसके अलावा स्त्रियों की कपट की खिड़की बंद होने का अन्य कोई उपाय ही नहीं है।

यह जो आपकी जगत् कल्याण की भावना है, वही आपको विषय पर जीत दिलाएगी। संयम ऐसी चीज़ है कि सारा जगत् सिर झुकाए, सच्चा संयमधारी होगा तो।

कपट से शेर को बनाए चुहिया

हम ऐसा कहें, तब वह वैसा कहती है। वाद पर विवाद करती है *चीकणी* फाइल (गाढ़ ऋणानुबंधवाले व्यक्ति)।

प्रश्नकर्ता : यानी फाइल नंबर टू।

दादाश्री : हाँ, पति का मानती नहीं। यों तो रात को चूहा प्याला खड़खड़ाए तो डर जाती है, लेकिन पति से नहीं डरती, बड़ा शेर जैसा हो फिर भी!

प्रश्नकर्ता : उसके पीछे कारण क्या है? विषय का लालच?

दादाश्री : घोलकर पी गई होती है। वह पीने देता है न! ऐसी स्त्रियाँ होती हैं या नहीं होतीं? पी जाएँ ऐसी? कैसे पी जाती हैं? कमज़ोरी पहचान कर फिर पी जाती हैं। उसकी कोई हैसियत नहीं है और बेकार ही उछल-कूद करता है, फिर उसे हो जाती है।

प्रश्नकर्ता : घर्षण का आपने जो कारण बताया न, यानी कि विषय नहीं होता तो टकराव ही नहीं होता!

दादाश्री : विषय नहीं हो और मार्ग मिल जाए तो मोक्ष हो जाएगा। वर्ना यदि मार्ग नहीं मिला तो वह भी भटक जाएगा। विषय नहीं होगा तो फिर मोक्ष सरल है, बिना किसी अड़चन का!

प्रश्नकर्ता : यानी संसार जहाँ से शुरू हुआ है, वहीं से बंद करना पड़ेगा। तो बंद हो जाएगा। विषय में से उत्पन्न हुआ है न?

दादाश्री : सूक्ष्म कारण तो अन्य हैं, स्थूल कारण यह है।

प्रश्नकर्ता : यह स्थूल कारण में जाता है?

दादाश्री : यदि यह बंद कर दे तो दीये जैसा हो जाएगा, फर्स्ट क्लास।

ऐसा किसी ने हिन्दुस्तान में कहा नहीं है अभी तक। शील पर तो

सबने परदा डाल दिया है। लोगों को इसी में स्वाद आता है। टेस्ट इसीका है। जहाँ अनेक तरह के झगड़े, विग्रह और संघर्ष पैदा होते हैं, वहीं ये जीव फँसते हैं। फँसाव छूटता नहीं और अनंत जन्म लेने पड़ते हैं। क्योंकि बाद में बैर वसूल करते ही रहते हैं फिर, स्त्री बैर वसूल करती ही रहती है। पुरुष तो भोला बेचारा, भगवान का आदमी! इसमें बरकत ही कहाँ(क्या) ? पंजे में से छोड़ती ही नहीं है न, एक बार काबू में आ गया तो खत्म, उसमें स्त्रियों को भी नुकसान तो होता ही है न या नहीं होता?

वसूली, मिन्नतें करवाकर

एक बहन ने तो मुझे बताया था, 'जब शादी हुई तब ये बहुत कठोर थे।' मैंने पूछा, 'अब?' तब कहे, 'दादाजी, आप तो पूरा स्त्री चरित्र समझते हैं, मुझसे क्यों कहलवाते हैं?' मुझसे यदि उन्हें कोई भी सुख चाहिए, तब मैं उनसे बहुत मिन्नतें करवाती थी। तब जाकर....। उसमें मेरा क्या कसूर? पहले वे मुझसे ऐसी मिन्नतें करवाते थे, अब मैं करवाती हूँ।

इसलिए मैं लोगों से पूछता हूँ, घर में ऐसा झंझट नहीं है न?

प्रश्नकर्ता : नहीं दादाजी, ऐसा नहीं है।

दादाश्री : यदि हो तो मुझे बताना, हं। उसे सीधी कर देंगे। एक महीने में तो सीधी कर दूँ।

प्रश्नकर्ता : तो ऐसे लालच का कारण क्या है? ऐसा लालच कैसे आता है?

दादाश्री : जिस-तिस में से सुख प्राप्त करना और किसी का भी हड़प लेना। इसलिए फिर 'लॉ'-कानून वगैरह कुछ भी नहीं और लोकनिंद्य हो फिर भी उसकी परवाह नहीं होती। और वह सब लोकनिंद्य ही होता है, इसलिए फिर लालच ऐसे काम करवाता है, मनुष्य को मनुष्य जाति में नहीं रहने देता।

लालच तो चुकाए ध्येय

कुत्ते को एक पूड़ी दिखाए तो इतने से तो वह अपनी पूरी 'फैमिलि'

को भी भूल जाता है। बच्चे, पिल्ले वगैरह सभी को भूल जाता है और अपना स्थान, जिस मोहल्ले में रहता हो वह भी भूल जाता है और कहीं का कहीं जाकर खड़ा रहता है। लालच के मारे दुम हिलाता रहता है, एक पूड़ी के लिए! लालच, जिसका मैं कड़ा विरोधी हूँ। लोगों में जब मैं लालच देखता हूँ तब मुझे लगता है, 'ऐसा लालच?' 'ओपन पॉइज़न' (खुला ज़हर) है! जो मिले वह खाना, लेकिन लालच नहीं होना चाहिए।

प्रश्नकर्ता : बिना लालच के रहने से मिल भी जाता है।

दादाश्री : यानी इन लालची लोगों को ही यह झंझट है। वर्ना सबकुछ घर बैठे मिल जाता है। हम इच्छा नहीं करते, फिर भी सभी चीज़ें मिलती हैं न! लालच तो नहीं, लेकिन इच्छा भी नहीं करते!

प्रश्नकर्ता : लालच और इच्छा में क्या अंतर है?

दादाश्री : इच्छा रखने की छूट है सभी को। किसी भी तरह की इच्छाओं का एतराज़ नहीं है। लालची तो, कुत्ते को एक पूड़ी दिखा दी, तो वह कहीं का कहीं चला जाता है, उसमें लालच आ गया न!

प्रश्नकर्ता : यानी, लालच में अच्छे-बुरे का विवेक नहीं रहता होगा न!

दादाश्री : लालची तो, जानवर ही कहो न उसे! मनुष्य के रूप में जानवर ही घूमते रहते हैं। थोड़ा-बहुत लालच तो हर किसी को होता है, लेकिन उस लालच को निबाह सकते हैं। लेकिन जिसे लालची ही कहा जाता है, उसे तो जानवर ही समझ लो न, मनुष्य के रूप में!

एक व्यक्ति है, हम खाने की कोई अच्छी चीज़ लेकर आएँ, जो उस व्यक्ति को बहुत भाती हो, तो वह लालच के मारे बैठा रहेगा, दो-तीन घंटे बैठा रहेगा। उसे थोड़ा दे दें उसके बाद ही वह जाएगा। लेकिन वह लालच की वजह से बैठा रहता है और जो अहंकारी हो, वह तो कहेगा, 'छोड़ तेरी झंझट, इसके बजाय अपने घर चलो!' वह लालची नहीं होता।

यानी लालचों से यह जगत् बंधा हुआ है। अरे! कुत्तों और गधों

को लालच होता है, लेकिन हमें क्यों लालच होना चाहिए? क्या कभी लालच होना चाहिए?

चूहा पिंजरे में कब आता है? पिंजरे में कब पकड़ा जाता है?

प्रश्नकर्ता : लालच होता है, तब।

दादाश्री : हाँ, पराठे की सुगंध आई और पराठा खाने गया कि तुरंत अंदर फँस जाता है। पिंजरे में पराठा देखा कि बाहर रहे-रहे वह अधीर होता रहता है कि, 'कब घुसूं, कब घुसूं?' फिर अंदर घुसे तो चूहेदानी 'ऑटोमेटिक' बंद हो जाती है। इन्सानों को ऐसा सब 'ऑटोमेटिक' आता है सब। ऐसे अपनेआप ही बंद हो जाता है। अत: सर्व दु:खों की जड़ लालच है।

विषय का लालच, कैसी हीन दशा

प्रश्नकर्ता : अब विषय में सुख लिया, तो उसके परिणाम स्वरूप ये क्लेश, झगड़े आदि सब होते हैं न?

दादाश्री : सब विषय में से ही खड़ा हुआ है और फिर सुख कुछ भी नहीं। सुबह-सुबह मानो अरंडी का तेल पीया हो, ऐसा चेहरा होता है!

प्रश्नकर्ता : इससे तो कँप-कँपी छूट जाती है कि इतने सारे दु:ख ये लोग सहन करते हैं, इतने से सुख के लिए!

दादाश्री : वही लालच है न, विषय भोगने का! वह तो फिर जब वहाँ नर्कगति के दु:ख भुगतता है न, तब पता चलता है कि क्या स्वाद है इसमें! और विषय का लालच, वह तो जानवर ही कह दो न! विषय के प्रति घृणा उत्पन्न हो तभी विषय बंद होता है। वर्ना विषय कैसे बंद होगा?

[७]

विषय वह पाशवता ही

दस साल तक तो दिगंबर

हमारे समय की वह प्रजा एक बात में बहुत अच्छी थी। विषय विचार नहीं था। किसी स्त्री के प्रति कुदृष्टि नहीं थी। होते थें, सौ में से पाँच-सात प्रतिशत ऐसे होते भी थे। वे सिर्फ विधवाओं को ही खोज निकालते थे और कुछ नहीं। जिस घर में कोई (पुरुष) रहता नहीं हो, वहाँ। विधवा यानी बिना पति का घर कहलाता था। हम चौदह-पंद्रह साल के हुए, तब तक लड़कियों को देखते तो 'बहन' कहते थे। बहुत दूर की रिश्तेदार हो, फिर भी। तब वातावरण ही ऐसा हुआ करता था क्योंकि दस-ग्यारह साल के होने तक दिगंबरी की तरह घूमते थे। दस साल का हो तो भी दिगंबर घूमता था। दिगंबर का मतलब समझे?

प्रश्नकर्ता : हाँ जी, हाँ जी, समझ गया।

दादाश्री : और उस समय माँ कहती भी थीं, 'अरे दिगंबर, कपड़े पहन, पैग़ंबर जैसा।' दिगंबर यानी दिशारूपी वस्त्र। इसलिए विषय का विचार ही नहीं आता था। तो झंझट ही नहीं। विषय की जागृति ही नहीं।

प्रश्नकर्ता : समाज का एक तरह का प्रेशर था, इसलिए?

दादाश्री : नहीं, समाज का प्रेशर नहीं। माँ-बाप का दृष्टिकोण, संस्कार! तीन साल का बच्चा यह नहीं जानता था कि माँ-बाप के कुछ ऐसे संबंध हैं। इतनी अच्छी सीक्रेसी होती थी! और जब ऐसा होता था, तब बच्चे दूसरे कमरे में सो रहे होते थे। ऐसे थे माँ-बाप के संस्कार।

आज तो यहाँ बेडरूम और वहाँ बेडरूम, ऊपर से डबलबेड होते हैं न!

उन दिनों कोई भी पुरुष एक बिस्तर में स्त्री के साथ नहीं सोता था, कोई नहीं सोता था। उन दिनों कहावत थी कि जो स्त्री के साथ पूरी रात सो जाए, वह स्त्री जैसा हो जाएगा। उसके पर्याय स्पर्श करते हैं। कोई भी ऐसा नहीं करता था। यह तो किसी अक़्लमंद ने खोज की है। तो ये डबलबेड बिकते ही रहते हैं। इससे प्रजा हो गई डाउन। डाउन होने से फ़ायदा क्या हुआ? वे जो तिरस्कार थे, वे सभी चले गए। अब जो डाउन हो चुके हैं, उन्हें चढ़ाने में देर नहीं लगेगी।

माँ-बाप ही कुसंस्कार देते हैं विषय के

अरे! हिन्दुस्तान में तो कहीं डबलबेड होते होंगे? किस तरह के जानवर हैं? हिन्दुस्तान के स्त्री-पुरुष कभी भी एक साथ एक रूम में रहते ही नहीं थे। हमेशा अलग रूम में ही रहा करते थे। इसके बजाय यह देखो तो सही! आजकल तो बाप ही बेडरूम बनवा देता है, डबलबेड! तब फिर युवा लोग समझ गए कि यह दुनिया ऐसे ही चलती है। यह सब मैंने देखा हुआ है।

एक तरह से अच्छा है, ये लड़के सभी यूज़लेस निकले हैं न! एकदम झूठा माल, बिल्कुल झूठा माल। लेकिन यदि उनसे कहो कि इस हॉल में पच्चीस लोग सो जाओ तो तुरंत सभी सो जाएँगे। और बाप उन्हें सिखलाता है कि 'जा, डबलबेड ले आ' तो वैसा भी सीख जाते हैं बेचारे। उन्हें ऐसा कुछ नहीं है। आज डबलबेड है तो वैसा और दूसरे दिन नहीं हो तो वैसा। उन्हें ऐसा कुछ नहीं है। यह तो बाप टेढ़े हैं, बरकत नहीं है। ऐसे उल्टे रास्ता पर ले जाते हैं। अभी तो माँ-बाप ही ऐसी व्यवस्था कर देते हैं। अट्ठारह साल का हो जाए तो कहेंगे, 'उसके लिए कमरा बनवाने के बाद उसकी शादी करेंगे।' अरे! रूम बनवाकर सहूलियत कर देता है और ऊपर से डबलबेड ले आता हैं। बेटा ऐसा ही समझता है कि मुझे विरासत में इतना ही करने जैसा है। माँ-बापों को ही भान नहीं है बेचारों को कि कैसे चलना। अतः बेटा भी इस बारे में नियम जानता ही नहीं न! वह तो यही समझता है, बेटा

छोटा हो तब से ऐसा ही समझता है कि, 'तेरे पापा कहाँ सोते हैं?' तब कहता है 'डबलबेडवाले रूम में और मैं वहाँ उस रूम में सोता हूँ।' वह समझता है कि डबलबेड पहले से ही चल रहा है!

प्रश्नकर्ता : यह जो सोने की प्रथा है, ये कुछ प्रथाएँ ही गलत हैं?

दादाश्री : ये सभी प्रथाएँ गलत हैं। यह तो समझदार प्रजा नहीं है न, इसलिए सब उल्टा घुसा दिया है। फिर लड़के-लड़कियाँ ऐसा ही मान लेते हैं कि ऐसा ही होता है, यही मुख्य चीज़ है। उसमें भी यदि स्त्री का चित्त हमेशा उसके पति में ही रहता हो तो हर्ज नहीं है।

प्रश्नकर्ता : लेकिन वह हमेशा रहता नहीं है न?

दादाश्री : अरे! जब दूसरा कुछ देखे तो फिर दूसरा झमेला खड़ा करते हैं। यानी झंझट है। यह जड़ से उखाड़ लेने जैसी चीज़ है। इसी वजह से सारा संसार कायम है।

स्त्री-संग छूटे, तो हो जाए भगवान

पुरुष यदि स्त्रियों का संग पंद्रह दिनों के लिए छोड़ दे न, पंद्रह दिन दूर रहे, तो भगवान जैसा हो जाएगा।

प्रश्नकर्ता : पंद्रह दिन यदि पत्नी से दूर चले जाएँ तो वे फिर शक करेंगी हम पर।

दादाश्री : वह कुछ भी कहो, वह सब वकालत है। कितनी भी बहस करो तो चलता है वकालत में। जीतेंगे सही, लेकिन वे एक्ज़ेक्ट प्रमाण नहीं हैं।

हम कहते हैं, अकेले अलग कमरे में सोने के लिए, क्या साइन्स होगा उसमें? साइन्टिफिक कारण है इसके पीछे। सालभर अलग रहने के बाद आप यदि एक ही पलंग पर सोने जाओगे तो जिस दिन वह पूरे दिन बाहर गर्मी में तपकर, जब घर पर आए तो पसीने की दुर्गंध आएगी आपको। और स्त्री को भी पसीने की दुर्गंध आएगी। दुर्गंध उत्पन्न होगी। साथ-साथ में सोने से दुर्गंध का पता नहीं चलता। नाक की इन्द्रिय बेकार

हो जाती है। रोज़ प्याज़ खानेवाले को, सारे घर में प्याज़ भरी हो, फिर भी उसे गंध नहीं आती और जो प्याज़ नहीं खाता, उसे यहाँ से दो सौ फीट दूर भी प्याज़ रखी हो तो भी गंध आती है। यानी साथ में सोने से नाक की इन्द्रिय खत्म हो जाती है। वर्ना क्या एक साथ सो पाते! यह प्याज़ की बात समझ में आई आपको?

प्रश्नकर्ता : आ गई, अच्छी तरह।

दादाश्री : ऐसा ज्ञान भी मुझे देना पड़ेगा? आप सभी को जानना चाहिए ऐसा ज्ञान तो! यह भी क्या मुझे बताना पड़ेगा?

प्रश्नकर्ता : जब तक आप नहीं बताते, तब तक वह आवरण नहीं हटता, भले ही कितना भी जानता हो, फिर भी। वचनबल से ही हटते हैं सभी के।

डबलबेड से दुगना विषय

दादाश्री : एक ही पलंग तो हमने कभी देखा ही नहीं। और आज तो, आज के जमाने के सभी पढ़े-लिखे लोग कहते हैं, 'डबलबेड ला दीजिए बेटे के लिए।' घनचक्कर, अभी से ऐसा सिखा रहा है? डबलबेड होता होगा कहीं? वह तो 'वाइल्डनेस' (जंगलीपन) घुस गई है। यह ब्रह्मचारियों का देश, वानप्रस्थाश्रम की पूजा करनेवाला देश! डबलबेड का मतलब समझ गए न आप?

प्रश्नकर्ता : हाँ।

दादाश्री : शादी करवाने से पहले डबलबेड खरीदकर लाते हैं। बाप मँगवाता है, इसलिए बेटा ऐसा समझता है कि हमारे बाप-दादा भी इन्हें दिलवाते होंगे। इसलिए ये हमें दिलवा रहे हैं। परंपरागत रिवाज है क्या यह? यह कितनी अधिक हिंसा? यह तो अपने महात्माओं से कह सकते हैं, बाहर तो नहीं बोला जा सकता। बाहर तो जो प्रवाह चल रहा है उस प्रवाह से उल्टा चलें, तो वह गुनाह है। कुदरती प्रवाह है। यह बात तो सिर्फ महात्माओं के लिए है। यह सापेक्ष बात है। यह निरपेक्ष बात नहीं है। जो समझ सकें, उन्हीं के लिए है। बाहर तो यह बात कह ही नहीं सकते न!

यह दुनिया क्या बदलनेवाली है? दुनिया तो अपने रंग-ढंग से ही चलती रहेगी। डबलबेड ही खरीदकर लाएँगे। मैं बाहर आपत्ति उठाऊँ तो लोग पागल कहेंगे, मैं आपत्ति उठाऊँ ही नहीं न और मुझे पागल कहें ऐसा कहूँ भी नहीं। बल्कि वे यदि पूछने आएँ कि 'हम डबलबेड ला रहे हैं, उसमें कोई हर्ज नहीं न?' तो कहूँ, 'नहीं भाई, मुझे कोई हर्ज नहीं है। थ्री बेड रखो न साथ में, क्या हर्ज है उसमें?' वह तो, जिसे यह (ज्ञान की) प्राप्ति हुई है, उनके लिए यह बात है।

इस बारे में सोचा ही नहीं है न? ऐसा किसी ने बताया ही नहीं, इसके लिए तो उलाहना ही नहीं दिया किसी ने, समझाया ही नहीं। बल्कि इसे प्रोत्साहन देते रहे कि डबलबेड होना चाहिए। ऐसा चाहिए, वैसा चाहिए....

डबलबेड का सिस्टम बंद करो और सिंगल बेड का सिस्टम रखो। पहले हिन्दुस्तान में कोई व्यक्ति इस तरह नहीं सोता था। कोई भी क्षत्रिय नहीं। क्षत्रिय तो बहुत पक्के होते हैं लेकिन वैश्य भी नहीं। ब्राह्मण भी ऐसे नहीं सोते थे, एक भी व्यक्ति नहीं! देखो, काल कैसा विचित्र आया है! अपने यहाँ तो घर में अलग रूम नहीं देते थे पहले।

पहले तो कभी किसी दिन ही पत्नी से भेंट हुई तो हुई वर्ना राम तेरी माया! बड़े कुटुंब होते थे यानी संयुक्त कुटुंब होते थे। और आज तो रूम तो अलग हैं ही, लेकिन बेड भी स्वतंत्र, डबलबेड।

यह तो बहुत सूक्ष्म बात निकल रही है।

सोए आँगन में पति और पत्नी कमरे में

प्रश्नकर्ता : आपका वाक्य निकला था न कि पुरुषों के स्त्रियों के साथ सोने से, इतने बड़े मर्द आदमी स्त्रियों जैसे हो जाते हैं।

दादाश्री : हो ही जाएँगे न! अरे, कहीं एक बिस्तर में सोया जाता होगा! अरे! कैसे आदमी हैं ये? उस स्त्री की शक्ति भी नष्ट हो जाती है और दूसरा, उसकी शक्ति, दोनों की शक्ति डिफॉर्म हो जाती है।

अमरीकावालों के लिए ठीक है, लेकिन उनका देखकर हम भी ले आए डबलबेड, किंग बेड!

खरे पुरुष कैसे होते हैं! हमारे गाँव का एक किस्सा सुनाता हूँ, ब्रह्मचर्य की बात निकली है तो। मुझे कई अच्छे-अच्छे लोग मिले थे। बचपन से ही मैं ऐसे संयोग लेकर आया था। सत्तर साल के एक प्रभावशाली पुरुष थे। उनकी याददाश्त तेज़, चेहरे पर नूर भी कितना था! मैंने सोचा, ये इतने प्रभावशाली कैसे होंगे? इसमें कुछ तो ज्ञान-वान होगा? या तो 'ज्ञानी' प्रभावशाली होते हैं या फिर 'ब्रह्मचारी' कुछ प्रभावशाली होता है। फिर मुझे लगा कि इस पाटीदार में ज्ञान तो नहीं हो सकता, इसलिए चलो पता लगाते हैं कि क्या कारण है इसके पीछे? वे हमारे रिश्तेदार लगते थे और मेरी उम्र थी सत्रह साल की। ये पटेल ऐसे दिखते हैं जबकि दूसरे सब पटेल ऐसे दिखते हैं। इन पटेल में कुछ ग़ज़ब का है। उनके बेटे भी बड़े सुंदर थे!

एक दिन मैं उनके घर गया। तब मैंने कहा, 'चाचा, मैं घर जाकर आऊँ?' वे आँगन में बैठे रहते थे। घर भी था और आँगन भी था बैठने के लिए। बैठकवाला कमरा भी था नया, अलग। घर से दो-सौ, तीन-सौ फुट दूर तब वे बोले, 'बैठ न! अब यहीं चाय मँगवा देता हूँ। तू बैठ यहाँ मेरी चाय आएगी। तू भी थोड़ी चाय पीना।' मुझे यह अच्छा लगा। मुझे तो किसी न किसी बहाने उनसे बात करनी थी। तब फिर मैंने पूछा, 'चाचाजी, आप कहाँ सोते हैं?' तब कहा, 'मैं यहीं सो जाता हूँ।' मैंने पूछा, 'कितने सालों से?' तब कहा, 'जब से शादी की, तभी से यहाँ सोता हूँ।' 'क्या?' मैं तो चकित हो गया। मैंने सोचा, 'यह क्या?' फिर मैं ज़रा गहराई में गया, 'चाचाजी, मुझे इसमें इन्टरेस्ट है। ज़रा बताइए न? चाचीजी कभी यहाँ आती हैं?' वे बोले, 'महीने में दो दिन बुलाता हूँ, बस।' मैंने सोचा, 'यह चमक किसकी? यह तेज किस वजह से है? कहाँ से लाए? आप पाटीदार को देखो!' तब मैंने पूछा, 'आप क्या करते हैं?' तब बताया, 'कभी भी एक ही बिस्तर में नहीं सोया हूँ और पैंतीस साल से वानप्रस्थाश्रम में ही हूँ। एक बिस्तर में यदि दोनों सोएँ तो दोनों स्त्रियाँ हो गईं समझो, उसका

संग लग जाता है। और ऐसा संग मुझे नहीं लगा है।' 'धन्य हैं चाचाजी इस उम्र में भी!' मैं तो दंग रह गया, तब से मुझे भी यह रोग लग गया। इसके बाद अलग बिस्तर के बारे में समझने लगा और आजकल तो बाप बेटे से कहता है, 'जा डबलबेड ले आ, भले ही तीन सौ डॉलर का मिले।' तब वह ऐसा समझता है कि 'मेरे पिता भी डबलबेड में सोते थे और मेरे दादाजी भी डबलबेड में ही सोते होंगे।' अरे! दादाजी का था ही नहीं ऐसा डबलबेड! ऐसा नहीं बोलना चाहिए, फिर भी देखो बोलता हूँ न? ऐसा नहीं बोलना चाहिए न?

प्रश्नकर्ता : क्यों नहीं?

दादाश्री : किसी को दुःख हो सकता है न! ऐसे बोलते हैं, लेकिन हम तो ज्ञानीपुरुष हैं इसलिए किसी को दुःख नहीं होता। मैं कैसा भी बोलूँ, फिर भी ज्ञानीपुरुष को अंदर वीतरागता रहती है और राग-द्वेष नहीं होते। हमें किसी के प्रति चिढ़ नहीं है, इसलिए हम बोल सकते हैं। लेकिन आप यह समझ गए न? ब्रह्मचर्य के बारे में पूछा इसलिए मुझे खुल्लम्खुला कहना पड़ा वर्ना मैं कहता नहीं हूँ ऐसा।

प्रश्नकर्ता : छूटने का ज्ञान है न? फिर उस शक्ति का उपयोग हो पाएगा न कहीं और?

दादाश्री : हाँ, इसलिए इन सभी से क्या कहता हूँ कि कुछ नियम रखना।

नहीं याद आता आत्मा, बेडरूम में

प्रश्नकर्ता : मैं तो अपनी बात कर रहा हूँ कि ज्ञान लेने के बाद, निरंतर केवल यही भाव करता हूँ, फिर भी यह छूटता नहीं है।

दादाश्री : नहीं, लेकिन वह तो पहले का हिसाब है न! इसलिए छुटकारा नहीं हो सकता न?

प्रश्नकर्ता : विषय नहीं है लेकिन हूँफ के लिए। ऐसा होता है कि 'नहीं, साथ में ही सोना है।'

दादाश्री : नहीं, ऐसा नहीं है लेकिन वह तो, यह जो हिसाब है न, वह हिसाब सारा चुकता हो रहा है। हाँ, हिसाब चुक गया, ऐसा कब कहा जाएगा? साथ में सोएँ, लेकिन वह सब अच्छा नहीं लगे, अंदर अच्छा नहीं लगे और सोना पड़े, तब हिसाब चुक जाता है!

प्रश्नकर्ता : खुद को पसंद है, लेकिन अंदर से प्रज्ञाशक्ति अथवा समझ चेतावनी देती है।

दादाश्री : मन को भले ही पसंद हो, लेकिन आपको पसंद है?

आपको समझ में आया न, कि यह भूल कहाँ है, कैसी हुई है? और भूल मिटानी तो होगी न? जो प्रारब्ध में हो वह भुगतना, लेकिन भूल तो मिटानी पड़ेगी न? भूल नहीं मिटानी पड़ेगी?

अरे भाई, 'बेडरूम' तो नहीं बनाने हैं। वह तो, एक ही रूम में सब साथ में सो जाना और बेडरूम तो संसारी जंजाल! यह तो बेडरूम बनाकर पूरी रात संसार के जंजाल में पड़ा रहता है। आत्मा की बात तो कहाँ से याद आएगी? बेडरूम में आत्मा की बात याद आती होगी?

मनुष्यपन खो देते हैं। सारे ब्रह्मांड को हिला दें ऐसे लोग, देखो न, यह दशा तो देखो! यह हीन दशा देखो। आप समझे मेरी बात?

विषयभोग के अरे, कैसे परिणाम!

आत्मा में कितनी शक्ति होगी? अनंत शक्तियाँ हैं आत्मा में। लेकिन सारी शक्तियाँ आवृत हुई पड़ी हैं। जब आप 'ज्ञानीपुरुष' के पास जाते हो, तब वे आवरण हटा देते हैं और आपकी शक्तियाँ खिल उठती हैं। भीतर सुख भी अपार है, फिर भी विषयों में सुख खोजते हैं। अरे! विषय में सुख होता होगा कहीं? इन कुत्तों को भी यदि खाना-पीना दिया हो न, तो वे भी बाहर नहीं जाते। ये बेचारे तो भूख के कारण बाहर घूमते रहते हैं। ये मनुष्य सारा दिन खाकर घूमते रहते हैं। मनुष्यों का भूख का दुःख मिटा है तो उन्हें विषयों की भूख लगी है। मनुष्य में से पशु बनने को हो, तभी तक विषय है। लेकिन जो मनुष्य में से परमात्मा बननेवाला है उसमें विषय नहीं होता।

विषय तो जानवरों की 'कोड लैंग्वेज' (सांकेतिक भाषा) है, पाशवता है, 'फुल्ली' (पूर्ण) पाशवता है। अत: वह तो होनी ही नहीं चाहिए।

प्रश्नकर्ता : विषयदोष से जो कर्मबंधन होता है, उसका स्वरूप कैसा होता है?

दादाश्री : जानवर के स्वरूप का। विषयपद ही जानवर पद है। पहले तो हिन्दुस्तान में निर्विषयी विषय था। यानी एक पुत्रदान तक का ही विषय था।

अत: यह मोह है, अभानता है। यह तो हम बात कर रहे हैं, वर्ना ऐसी बात कोई करेगा नहीं न? ऐसा कहें तभी तो वैराग्य उत्पन्न होगा न लोगों में!

प्रश्नकर्ता : वैराग्य टिके ऐसा कोई नियम है?

दादाश्री : वैराग्य टिके तब तो काम ही निकल ले। बिना विचार के वैराग्य नहीं टिक सकता। निरंतर विचारशील हो उसी का वैराग्य टिकता है। कहता है, 'मैं भोग रहा हूँ', 'अरे! इसमें क्या भोगने जैसा है?' जानवरों को भी शर्म आती है इसमें तो! भोगने से ही यह सब भूल जाता है फिर। कर्ता-भोक्ता हुआ कि सारा उपदेश ही भूल जाता है। कर्ता-भोक्ता नहीं हुआ तो सारा उपदेश उसे ध्यान में रहता है। तभी वैराग्य टिकेगा न? वर्ना वैराग्य टिकेगा ही नहीं न!

पूरी दुनिया ब्रह्मचर्य को एक्सेप्ट करती है। फिर जिनसे ब्रह्मचर्य पालन नहीं किया जा सकता, वह अलग बात है। अब्रह्मचर्य तो मनुष्य में रही हुई पाशवता है। हर एक जगह पर अब्रह्मचर्य को पाशवता माना गया है। इसलिए तो दिन में अब्रह्मचर्य के लिए मना किया गया है, क्योंकि वह पाशवी उपचार है। इसीलिए रात को, अंधेरे में, कोई देखे नहीं, जाने नहीं, खुद की आँखें भी नहीं देखें, उस तरह किया जाता है। मनुष्य को तो क्या यह सब शोभा देता है? इसलिए तो लोगो ने ऐसा रखा है कि विषय का सेवन रात के अँधेरे में ही किया जाना चाहिए। सूर्यनारायण की उपस्थिति में यदि विषय सेवन करोगे तो हार्टफेल के आसार पैदा होंगे।

हाई ब्लडप्रेशर या लो ब्लडप्रेशर हो जाएगा और हार्टफेल हो जाएगा। विषय अँधेरे में सेवन करने की चीज़ है। लिखा है न कि, 'छिपे रखने पड़ते हैं जो काम।' यानी यह विषय कैसी चीज़ है? गुप्त रखनी पड़ती है। किसी से कहा भी नहीं जा सकता। फिर भी शास्त्रकारों ने अलाउ किया है कि सभी की उपस्थिति में शादी करते हो, इसलिए हक़दार हो।

कितना शर्मनाक?

प्रश्नकर्ता : दादाजी ब्रह्मचर्य पर ज़्यादा ज़ोर देते हैं और अब्रह्मचर्य के प्रति तिरस्कार दिखाते हैं। लेकिन ऐसा करने से तो सृष्टि में मनुष्यों की संख्या भी कम हो जाएगी, इस बारे में आपका क्या अभिप्राय है?

दादाश्री : इतने सारे ऑपरेशन करने से भी संसार कम नहीं हो रहा है तो ब्रह्मचर्य पालन करने से क्या कम होगा? संसार घटाने के लिए तो ऑपरेशन करवाते हैं, लेकिन फिर भी नहीं घटता है न! ब्रह्मचर्य तो बहुत बड़ा साधन है।

प्रश्नकर्ता : लेकिन उसे 'तिरस्कार हुआ' नहीं कहा जाएगा?

दादाश्री : तिरस्कार नहीं कहलाएगा।

प्रश्नकर्ता : यह जो 'नैचुरल प्रोसेस' (प्राकृतिक प्रक्रिया) है। उसका हम तिरस्कार कर रहे हैं, ऐसा नहीं कहा जाएगा?

दादाश्री : नैचुरल प्रोसेस नहीं है, यह तो पाशवता है। नैचुरल प्रोसेस नहीं है, मनुष्य में यदि नैचुरल प्रोसेस होता, तो ब्रह्मचर्य पालन रहता ही नहीं न! ये जानवर बेचारे ब्रह्मचर्य का पालन करते हैं। सिर्फ सीज़न में ही पंद्रह-बीस दिनों के लिए विषय, फिर कुछ भी नहीं।

यह तो हमेशा विषय, तो पशु ही हैं न, मनुष्य पशु ही बन गए हैं न! इसलिए यह कहना पड़ रहा है न मुझे! तभी तो यह ओपरेशन करने की नौबत आई न! किसी गाय-भैंस का ओपरेशन करने की नौबत आई है कभी?

इनकी तो आबादी नहीं बढ़े इसलिए नसबंदी करने लगे हैं, मनुष्यों

की। पहले बैलों की नसबंदी करते थे, आज मनुष्यों की नसबंदी कर रहे हैं। कितनी शर्मनाक बात है?

ये नसबंदी करवाते हैं न, वह गलत है। नसबंदी करवाते हैं क्या लोग? सरकार क्या कहती है, नसबंदी करवाइए?

प्रश्नकर्ता : हाँ जी। कहते हैं करवाइए और लोग खुद जाकर करवाते हैं।

दादाश्री : सरकार कहती है एक, दो और तीन। हम दो हमारे दो और बाकी सब नसबंदी! हम क्या कहते हैं कि चार बच्चे हो जाएँ, लेकिन उसके बाद भी ब्रह्मचर्य पालन कर न, और संसार में स्त्री के साथ रहते हुए भी ब्रह्मचर्य, यानी क्या? कि महीने में चार दिन या पाँच दिन ठीक है, यानी बारह महीने में पचास या साठ दिन हुए। लेकिन यह तो सुबह हुई, शाम हुई, और यही धंधा। फिर पत्नी सवार हो जाती है। कुछ लोगों की पत्नी तो उनसे 'आजिज़ी' करवाती है। पुरुष माँग करते हैं, विषय की भीख माँगते हैं ये हिन्दुस्तान के लोग, ऋषि-मुनियों के पुत्र। शर्म आए ऐसी चीज़ है। विषय की भीख माँगते हैं, आपको नहीं लगता? यह शर्मनाक नहीं लगता?

प्रश्नकर्ता : शर्मनाक ही है।

बुद्धिशाली भी पत्नी के सामने बुद्धू

दादाश्री : और ये तो मुए रोज़ झगड़ते हैं। रोज़ विषय में, जैसे कुत्ता हो और कुछ तो पत्नी से विषय की माँग करते हैं, 'बीवी, आप यह दो न!' अरे मुए! पत्नी से माँग की? तूने यह कैसी खोज की? देखो न, ये पाशवता हो गई है। बड़े-बड़े अफसर, यानी सब पाशवता हो गई है। हमें क्या ऐसा शोभा देता है? विषय करते समय, अभी यदि कोई बड़ा साहब विषय कर रहा हो, उस समय फोटो लें तो फोटो कैसा दिखेगा? बड़े साहब को दिखाएँ तो?

प्रश्नकर्ता : घृणा हो ऐसा।

दादाश्री : तो फिर ऐसे शर्म नहीं आती। खुद का फोटो नहीं दिखाई

देता कि मैं कुत्ते जैसा हूँ या गधे जैसा हूँ? ऐसी शर्म नहीं आती खुद को?

यों तो पर्सनालिटीवाला अफसर होता है, जिसके आगे बाहर सभी ता-ता-थई-थई करते हैं, लेकिन विषय भोगते समय तो वह जानवर जैसा ही बन जाता है न! अन्य किसी चीज़ में जानवर नहीं बनता, शराब में भी वह जानवर नहीं बनता।

फिर भी स्त्रियों का तिरस्कार नहीं करना है, स्त्री का दोष नहीं है। यह तो आपकी वासनाओं का दोष है। स्त्री का तिरस्कार नहीं करना चाहिए। स्त्रियाँ तो देवियाँ हैं। विषय के प्रति तिरस्कार नहीं है, वासना पर तिरस्कार है और यह वासना फिर देखा-देखी से है!

प्रश्नकर्ता : पशु तो भोगप्रधान हैं, इसलिए करते हैं, लेकिन मनुष्य तो विचारवान हैं, फिर भी ऐसी स्थिति है!

दादाश्री : लेकिन पशु जैसे भी गुण नहीं रहे। पशु तो नियम में होते हैं। जब कुदरती संयोग आ मिलते हैं, तब पशु में पाशवता उत्पन्न होती है। लेकिन इन मनुष्यों में तो नित्य पाशवता है। मनुष्य में मनुष्यत्व रहा ही कहाँ है? और पशुओं में छल-कपट कुछ भी नहीं होता न, यह तो निरंतर छल-कपट का ही शिकार होना, निरंतर छल-कपट।

वे स्त्री-पुरुष के जो भोग थे, वह सत्‌युग-द्वापर में कुछ, थोड़ा काल त्रेता का भी, उसके बाद खत्म हो गया, 'सिन्सियरिटी गॉन'।

प्रश्नकर्ता : तो यह काल का प्रभाव है?

दादाश्री : काल का प्रभाव।

प्रश्नकर्ता : तो फिर मनुष्य उसमें क्या कर सकता है?

दादाश्री : मनुष्य क्या कर सकता है, मतलब? मनुष्य को समझना चाहिए।

प्रश्नकर्ता : ऐसी समझदारी की दृष्टि खोलनेवाला कोई चाहिए न?

दादाश्री : हाँ, चाहिए।

विषय के संबंध में किसी ने सोचा ही नहीं, लोकसंज्ञा से। उसके बाद उसमें क्या-क्या दोष हैं, यह देखा ही नहीं किसी जगह पर। जितना दोष दुनिया में किसी और चीज़ में नहीं होगा, उतना दोष अब्रह्मचर्य में है। लेकिन जानते ही नहीं हों तो क्या हो सकता है? यही लोकसंज्ञा चली आई है, पाशवता की ही। जैसा पशु में भी नहीं होता, मनुष्यों की वह लीला देखकर अचरज ही होगा न!

दक्षिण में आम के बारहमासी पेड़ होते हैं, केरल में। उसमें बारह महीनों, एक डाल इस महीने में, दूसरी डाल दूसरे महीने में, तीसरी डाल तीसरे महीने में आम देती रहती है। इसी तरह ये लोग बारहमासी हैं न, अब्रह्मचर्य में! क्या पशुओं की तरह महीनेभर के लिए हैं या पंद्रह दिन के लिए ही हैं?

प्रश्नकर्ता : इस पर किसी ने सोचा ही नहीं।

दादाश्री : भान ही नहीं है इस चीज़ का। फिर भी प्रकृति बंधी हुई हो तो शादी करना और शादी के बाद भी महीने में दो-तीन बार होना चाहिए।

सिर्फ इतने समय तक ही, ऋषिमुनिओं जैसा होना चाहिए। फिर पूरी ज़िंदगी मित्रतापूर्वक रहें। पहले शुरूआत में शादी होते ही दो-तीन साल ज़रा परिचय रहे, वह भी कितना परिचय? मन्थली कोर्स के बाद पूरे महीने में पाँच ही दिन, उसके बाद नहीं। प्रत्येक मन्थली कोर्स के बाद, एक-दो पुत्र या पुत्री हो गए, उसके बाद सदा के लिए बंद। फिर वह दृष्टि ही नहीं।

कैसे थे वे ऋषि-मुनि

एक पुत्रदान की तो अवश्य ज़रूरत है, जिसे मोह है उसके लिए। गलत नहीं है, चिढ़ रखने जैसी चीज़ नहीं है। लेकिन जो लोग इसमें सुख मान बैठे हैं, वह एक पाशवता है। पशु कभी भी इसमें सुख नहीं मानते। वर्ना उनके यहाँ कहाँ कोई पुलिसवाला है या कोई बाधक है? कोई मना करता है? लेकिन है उन्हें कोई झंझट? साथ में ही घूमते-फिरते हैं, लेकिन झंझट नहीं है न? ये तो मनुष्य में आए और जंगली रहे। हिन्दुस्तान में

तो कहीं ऐसे पाशवी कर्म होते होंगे? कैसे ऋषि-मुनियों का देश! पूरी ज़िंदगी में एक संतान देते थे, वह भी भिक्षा के रूप में, पत्नी भिक्षा माँगती और वे देते थे। बस। उतनी ही, एक ही संतान! देखो, उनकी दशा तो देखो! रात-दिन विषय के ही विचार आते रहते हैं! कैसे होंगे ऋषि-मुनि? सयाने नहीं होंगे? उन्हें क्या विषय पसंद नहीं होगा? विषय तो जानवरों को भी पसंद नहीं है, इसलिए वे बेचारे, जब उनका समय आता है, उतने समय के लिए ही वे उत्तेजना अनुभव करते हैं और वह भी फिर कुदरत की प्रेरणा से, उनकी खुद की प्रेरणा होती ही नहीं!

विषय-विकार तो जानवरों में भी हैं। वह फिर भ्रांति नहीं है, वह नियम से है। उसका समय आए, तभी। बाकी, ये मनुष्य तो जानवर से भी गए बीते हैं। उनका तो रोज़ यही तूफान होता है। नीयत ही यही। अब विषय-विकार का मतलब क्या है? जिस विषय से संतान पैदा नहीं होती, वह विषय संडास कहलाता है।

ब्रह्मचारी यानी मनुष्य के रूप में देवता ही

प्रश्नकर्ता : विषय-विकार में से मुक्ति कैसे पाएँ?

दादाश्री : आप मुक्ति पाना चाहो तो मैं कर दूँगा। लेकिन अन्य लोगों के लिए तो कुदरत तैयारी कर ही रही है। जो सुधारने से नहीं सुधरते, वे कैसे सुधरेंगे? वे हारकर सुधरेंगे। वह जर्जर बना देगा। कुदरत थोड़े समय में उन्हें ऐसा जर्जर बना देगी कि यहाँ मेरे समझाने से यदि सुधर गए तो ठीक है, वर्ना जर्जर बनानेवाले तो तैयार हैं ही पीछे।

इस ब्रह्मचर्य की कोई क़ीमत होगी न? अब्रह्मचर्य में क्या गुनाह है, यह लोगों के ध्यान में है ही नहीं और मैं कहीं साधु बनने को नहीं कह रहा हूँ। संसारी रहकर ब्रह्मचर्य का पालन करो। और संसारी रहकर जो ब्रह्मचर्य पालन नहीं करते, वह पाशवता ही है। सरेआम, खुली पाशवता है। ओपन पाशवता!

यह तो केवल रोंग मान्यता के कारण ही यह सब घर कर गया है। बाकी, एक-दो बच्चों की आशा रखने जितना ही हो तो पर्याप्त है यह।

वर्ना मनुष्य में विषय नहीं होता, वह भी उच्च जातियों में! निम्न जाति में होता है, जहाँ मेहनत-मज़दूरी करनी होती है, जहाँ त्रास है, वहाँ होता है। उच्च जातियों में तो संयम होना चाहिए।

विषय का विचार ही नहीं आना चाहिए। जब तक पाशवता है, तब तक विषय के विचार आए बगैर नहीं रहते। मनुष्य में पशुता है, तब तक विचार आते हैं। पशुता गई कि विचार चला जाएगा। ब्रह्मचर्यवालों को तो जहाँ देखो, वहाँ उन्हें ब्रह्मचर्य ही रहता है, विषय से संबंधित विचार ही नहीं आता।

ब्रह्मचर्य में आया यानी देवस्थिति में आया। मनुष्यों में देवता! क्योंकि पाशवता गई। पाशवता जाने पर देवता जैसी स्थिति उत्पन्न हो जाती है। जब तक ब्रह्मचर्य नहीं आया, तब तक पाशवता है, छोटे प्रकार की। मनुष्यों में ही पाशवता है। विषय गया तो शीलवान कहलाएगा।

इसलिए यह व्यवस्था की गई, लेकिन उसका तो सारा अर्थ ही बिगड़ गया। यदि एक ही पुत्रदान किया हो (उतना ही विषय हो) तो उसका जो प्रेम है वह पूरी ज़िंदगी टिकता है, अप-डाउन हुए बिना!

इन लोगों के भी एक पुत्र और एक पुत्री दो ही होते हैं। लेकिन इन लोगों ने तो ऑपरेशन नाम का एक थियेटर ही खोल दिया है। उस थियेटर में ही खेलते रहते हैं। इसलिए ऋषि-मुनियों में फिर लड़ाई-झगड़े कुछ नहीं होते थे, मित्रता। मित्र की तरह रहते थे और पुत्र-पुत्री का लालन-पालन करते थे। और इनके लिए तो हमेशा विषय ही। अब हमेशा रहनेवाले विषय में क्या झंझट होता है? कि एक को भूख लगी है और दूसरे को नहीं। जिसे नहीं लगी है, वह कहती है कि मुझे नहीं जमेगा। अब दूसरा कहेगा, मुझे भूख लगी है, चला लड़ाई-झगड़ा। ये ही लड़ाई-झगड़े हैं सारे। वर्ना ज़िंदगीभर मित्रतापूर्वक इतना सुंदर रहे! एक-दूसरे के प्रति सिन्सियर रहेंगे। पूरे दिन कोई क्लेश नहीं, किच-किच नहीं। सारी किच-किच विषय के कारण है।

[८]

ब्रह्मचर्य का मूल्य, स्पष्टवेदन - आत्मसुख

अक्रम मार्ग में ब्रह्मचर्य का स्थान कितना?

प्रश्नकर्ता : यह ज्ञान मिलने के बाद, दादा का ज्ञान मिलने के बाद ब्रह्मचर्य की आवश्यकता रहती है या नहीं?

दादाश्री : ब्रह्मचर्य की आवश्यकता तो जो पालन कर सके, उसके लिए है, और जो पालन नहीं कर सके उसके लिए नहीं है। यदि आवश्यक ही होता तब तो ब्रह्मचर्य-पालन नहीं करनेवालों को सारी रात नींद ही नहीं आती कि अब तो हमारा मोक्ष चला जाएगा। अब्रह्मचर्य गलत है, ऐसा जान ले तो भी बहुत हो गया।

ऐसा है न, इस बात का खुलासा आज कर दिया। ब्रह्मचर्य और अब्रह्मचर्य में से आवश्यक क्या है? उसका रूट कॉज़ क्या है? वह किसी को पता नहीं चल सके, ऐसी चीज़ है। यानी यह रूट कॉज़ मैंने आपको बता दिया। यह जो रूट कॉज़ है, वह मौलिक है।

प्रश्नकर्ता : बौद्धिक विषयों की रमणता तो रहेगी ही न?

दादाश्री : हम स्त्री से संबंधित रमणता का विरोध करते हैं। एक तरफ अब्रह्मचर्य चल रहा हो और दूसरी तरफ ज्ञानीपुरुष को भले ही कितना भी देह समर्पित किया हो, लेकिन यदि स्त्री की देह के प्रति राग है तो इसका मतलब खुद की देह पर भी उतना ही राग है। अत: अर्पणता उतनी कच्ची ही रहेगी। मदर, फादर, भाई, बहन पर के प्रति जो राग है उसे हम राग नहीं कहते क्योंकि उस राग में उतना तन्मयाकार नहीं होता।

जबकि स्त्री विषय में तो इतना अधिक तन्मयाकार हो जाता है, यानी अंदर इतना अधिक खो जाता है कि उसे हिलाने पर भी पता नहीं चलता।

बाकी वास्तविक ब्रह्मचर्य अर्थात् आत्मचर्या में ही अपना उपयोग और *पुद्गल* अर्थात् विषयचर्या में उपयोग नहीं। यानी सिर्फ आत्मरमणता, *पुद्गल* रमणता नहीं। अन्य *पुद्गल* रमणता उतनी बाधक नहीं है लेकिन विषय से संबंधित *पुद्गल* रमणता तो ठेठ आत्मा का अनुभव भी नहीं करने देती।

प्रश्नकर्ता : फिलॉसफर ऐसा कहते हैं कि सेक्स को दबाने से विकृत हो जाते हैं। स्वास्थ्य के लिए सेक्स ज़रूरी है।

दादाश्री : उनकी बात सही है, लेकिन अज्ञानी को सेक्स की ज़रूरत है वर्ना शरीर को आघात लगेगा। जो ब्रह्मचर्य की बात को समझते हैं उन्हें सेक्स की ज़रूरत नहीं है, और अज्ञानी व्यक्ति को यदि ब्रह्मचर्य के लिए बाध्य किया जाए तो उसका शरीर टूट जाएगा, खत्म हो जाएगा।

प्रश्नकर्ता : लेकिन जिसे समकित प्राप्त नहीं हुआ है, यदि वह ब्रह्मचर्य का महत्व समझे तो उसे भी परेशानी नहीं आएगी न?

दादाश्री : ब्रह्मचर्य का महत्व वह ज्ञानी के सिवा या शास्त्र के आधार के सिवा समझ ही नहीं सकता।

प्रश्नकर्ता : तो ये सभी साधु जो ब्रह्मचर्य पालन करते हैं, वह?

दादाश्री : वहाँ उन्हें शास्त्र का आधार है। कोई भी आधार होना चाहिए। इसलिए ये बाहरवाले लोग यदि ऐसा करने जाएँ..., दबाने से तो विकृत हो जाएगा। ब्रह्मचर्य हितकारी है-वह कैसे, किस दृष्टि से, वह पूर्णरूप से समझ लेना पड़ेगा, उसका अर्थ यह नहीं है कि उसे दबाना है। वर्ना स्वास्थ्य बिगड़ जाएगा। और कुछ नहीं लेकिन स्वास्थ्य पूरी तरह से खत्म हो जाएगा।

प्रश्नकर्ता : सेक्स नहीं दबाना चाहिए वर्ना रोग हो जाता है।

दादाश्री : रोग हो जाता है, यह बात सही है। उसे ऐसे नहीं दबाना

है। राज़ी-खुशी से उपवास करने में हर्ज नहीं है, भूख को दबाने में हर्ज है। हठाग्रह करने में हर्ज है।

प्रश्नकर्ता : तो अब्रह्मचर्य भी नेचर (कुदरत) के कानून के विरुद्ध है न?

दादाश्री : अब्रह्मचर्य नेचर के विरुद्ध नहीं है। अब्रह्मचर्य में नोर्मेलिटी होनी चाहिए फिर। अब्रह्मचर्य में नोर्मेलिटी चूकने के बाद नेचर के विरुद्ध कहा जाएगा। अब्रह्मचर्य की नोर्मेलिटी किसे कहेंगे? एक पत्नीव्रत होना चाहिए। फिर उसका अनुपात क्या होना चाहिए कि महीने में आठ दिन या फिर चार दिन, वह उसका अनुपात। फिर आपको तुरंत ही फल मिलेगा। नेचर आपका विरोध नहीं करेगा।

प्रश्नकर्ता : नेचर के विरुद्ध जाने का उदाहरण दीजिए न?

दादाश्री : ये हम जो रसभरे आम खाते हैं वह नैचुरल है, लेकिन यदि ज़्यादा मात्रा में खा लें तो वह अन्नैचुरल है। नहीं खाओ तो वह भी अन्नैचुरल है! अनुपात से ज़्यादा खाओ तो वह सब पॉइज़न है। वह अनुपात सही मात्रा में होना चाहिए। नेचर अनुपात को सही मात्रा में रखना चाहता है।

प्रश्नकर्ता : पशुओं को तो कुदरती हेल्प है न?

दादाश्री : नहीं, उनका *चलण* (नियंत्रण, सत्ताधीश, खुद के अधीन रखना) कुदरती ही है। उनका खुद का *चलण* है ही नहीं। यह तो लोगों को ऐसा कुछ भान नहीं है। इन कलियुग के मनुष्यों से तो ये जानवर अच्छे हैं कि नियम में रहते हैं। कलियुग के मनुष्यों के तो नियम ही नहीं हैं न!

प्रश्नकर्ता : ऐसा कैसे हुआ कि जानवर नियम में हैं और मनुष्य नियम में नहीं हैं?

दादाश्री : जानवरों में तो कुदरती है न! इसलिए नियम में ही रहते हैं। सिर्फ ये मनुष्य ही बुद्धिशाली हैं। इसलिए इन्होंने ही यह सारी खोजबीन

की है। फिर इत्र लगाते हैं, सुगंधी लेकर दुर्गंध को टालते हैं। लेकिन ऐसे तो कहीं दुर्गंध जाती होगी? ये जानवर भी दुष्चारित्रवाले नहीं होते। जानवर भी चारित्रवाले होते हैं।

प्रश्नकर्ता : वह कैसे?

दादाश्री : जानवरों में तो किसी खास सीज़न में ही विषय होता है और इन मनुष्यों में तो सीज़न-वीज़न का कोई ठिकाना ही नहीं है। मनुष्य तो जानवरों से भी गए-गुज़रे हैं। जानवरों में तो कोई अवगुण है ही नहीं। सभी अवगुणों का भंडार हो तो वह है, ये मनुष्य! चारित्र मुख्य चीज़ है। चारित्र के आधार पर तो मनुष्य भी देवता कहलाता है। लोग कहते हैं न कि ये देवता जैसे आदमी हैं।

ज्ञानियों का ब्रह्मचर्य

प्रश्नकर्ता : तो ब्रह्मचर्य नेचर के विरुद्ध हुआ न?

दादाश्री : हाँ, ब्रह्मचर्य तो नेचर के विरुद्ध ही है न!

प्रश्नकर्ता : तो फिर जगत् में ब्रह्मचर्यव्रत लिया जाता है, दिया जाता है, वह किसलिए?

दादाश्री : वह तो, पूर्वभव में जो भाव किए थे, उसका फल है।

प्रश्नकर्ता : वह कैसे पता चलेगा कि हमने पूर्व में भाव किए हैं?

दादाश्री : ऐसा तो शायद ही कोई व्यक्ति होगा, करोड़ों में एकाध कोई होगा। ज़्यादा होते नहीं हैं न! इन साधु-महाराजों को किसलिए वैराग्य आता होगा?

प्रश्नकर्ता : पूर्वभव में भाव किया होगा इसलिए।

दादाश्री : इसलिए हम क्या कहना चाहते हैं कि ज़बरदस्ती ब्रह्मचर्य पालन मत करना, ब्रह्मचर्य की भावना करना। ब्रह्मचर्य तो भावना का फल है। बाकी, ये साधु जो ब्रह्मचर्य का पालन करते हैं वह भावना के फल स्वरूप है। उसमें उनकी जागृति है, ऐसा नहीं माना जाएगा। जागृति तो,

ज्ञानीपुरुषों ने पूर्व में भावना नहीं की हो, फिर भी अब्रह्मचर्य के सागर में वे खुद ब्रह्मचर्य रख सकते हैं। वह जागृति कहलाती है। अग्नि में हाथ डालना है और जलना नहीं है, ज्ञानीपुरुष का ब्रह्मचर्य उस जैसा कहलाता है। इन त्यागियों का ब्रह्मचर्य, वह तो भावना का फल है। वास्तव में तो भगवान ने यही कहा है कि सबकुछ भावनाओं का ही फल है। लेकिन आख़िर में जागृति की ज़रूरत तो पड़ेगी! जागृत हुए बगैर नहीं चलेगा।

खुद ने भोगा या भोग लिया गया

जहाँ कोई भी *ऊपरी* (बॉस, वरीष्ठ) नहीं है, जहाँ कोई भी अन्डरहैन्ड नहीं है, वही मोक्ष कहलाता है। जहाँ किसी भी प्रकार का बुरा इफेक्ट नहीं है, परमानंद, निरंतर परमानंद, सनातन सुख में रहना, वही मोक्ष कहलाता है। इसे तो सुख कह ही नहीं सकते। यदि कोई शराबी आदमी ऐसा कहे कि मैं पूरे हिन्दुस्तान का राजा हूँ, तो हम नहीं समझ जाएँगे कि यह तो शराब के नशे में बोल रहा है? उसी प्रकार इस भ्रांति की वजह से उसे इसमें सुख महसूस होता है। विषय में कहीं सुख होता होगा? सुख तो भीतर है, लेकिन यह तो बाहर दूसरों में आरोप करते हैं इसलिए वहाँ पर सुख महसूस होता है। भ्रांतिरस से यह सब खड़ा हो गया है। भ्रांतिरस यानी क्या कि कुत्ता जिस तरह हड्डी चूसता है, वह आपने देखा है? हड्डी पर जो थोड़ा-बहुत माँस लगा हुआ हो वह तो मानो मिल गया, लेकिन अब उसके बाद भी क्यों चूस रहा है? हड्डी तो लोहे की तरह मज़बूत होती है फिर खूब दबाए न तब क्या होता है, कि उसके मसूड़े दबते हैं और फिर उनमें से खून निकलता है। कुत्ता समझता है वह खून हड्डी में से निकल रहा है, इसलिए वापस खूब चबा-चबाकर हड्डी चूसता है। अरे! तू तेरा ही खून चूस रहा है। यह संसार भी इसी तरह चल रहा है। इसी तरह ये लोग भी हड्डियाँ ही चूस रहे हैं और खुद का ही खून चख रहे हैं।

बताओ, अब कितनी मुसीबत है! उसी तरह पूरा जगत् विषय में से सुख खोज रहा है। कुत्ते की तरह विषय में से सुख खोज रहा है, फिर कैसे सुख प्राप्त हो? सच्ची चीज़ होगी तो उसमें से सुख मिलेगा। यह

सारा तो कल्पित सुख हैं, आरोपित सुख हैं। कड़ी धूप में अत्यंत थका हुआ आदमी, जब बबूल की छाँव में बैठे न, तो कहेगा मुझे बहुत ही आनंद आया था। विषय सुख भी वैसा ही आनंद है। आनंद तो निरुपाधि (बाह्य दु:खरहित) पद का होना चाहिए। ये सारे आनंद तुलनात्मक हैं। मनुष्य थका हुआ हो, कड़ी धूप से त्रस्त हो, उसके बाद यदि उसे कहें कि, 'बबूल की छाँव में ठीक लगेगा?' तब कहेगा, 'बहुत अच्छा लगेगा।' अब इस आनंद को आनंद कहेंगे ही कैसे?

लोगों ने विषय में सुख माना है। उसी प्रकार खुद ने भी इसमें सुख मान लिया है। इसमें बिल्कुल भी सुख मानने जैसा नहीं है। ज्ञानी की संज्ञा से देखे तो इसमें निरा दु:ख है। इसलिए उसकी तो बात ही करने जैसी नहीं है, उसकी बात की जाए तो भी मनुष्य वैराग्य ले ले। 'ज्ञानीपुरुष' से यदि कभी ब्रह्मचर्य से संबंधित बातें सुने तो वैराग्य ही ले ले। यदि विषय का पूरी तरह से वर्णन किया जाए तो मनुष्य सुनते ही पागल हो जाए। इतना जोखिमवाला है वह। जिसे आंतरिक सुख है, वह अब्रह्मचर्य करेगा ही नहीं। ये तो आंतरिक दु:ख के कारण अब्रह्मचर्य करते हैं।

जगत् के लोगों ने कहा, 'परस्पर देवो भव:'। अरे, लेकिन कब तक परस्पर? अत: जो निरालंब सुख है उसकी तो बात ही अलग है न! अरे! शुद्धात्मा का जो सुख है उसकी भी बात अलग ही है न! 'मैं शुद्धात्मा हूँ' कहा कि बाहर के सारे विचार चले जाते हैं। जिसे 'शुद्धात्मा में ही सुख है', ऐसा यथार्थ रूप से समझ में आ जाए, उसे विषय में सुख नहीं लगेगा।

पुण्य से सभी इन्द्रियसुख मिलते हैं। उसमें फिर कपट खड़ा हो जाता है, भोगने की लालसा की वजह से कपट खड़ा हो जाता है और कपट से संसार खड़ा है। जब तक विषय है, तब तक वह, यह आत्मसुख है और यह पौद्गलिक सुख है, इसका भेद समझने नहीं देगा।

विषय-रस *गारवता*

'जगत् आखू गारवता मां रे प्रभु रह्युं छे फसी?'

अब लोग *गारवता* किसे कहते हैं?

प्रश्नकर्ता : अहंकार रूपी *गारवता* (संसारी सुख की ठंडक में पड़े रहने की इच्छा) ?

दादाश्री : वह *गारवता* नहीं कहलाती। अहंकारवाला तो हिटलर जैसे कर्म भी करता है और धर्मादा जैसे उच्च कार्य भी करता है। लेकिन यह *गारवता* यानी क्या ? कि जिसमें संपूर्ण मनुष्यपन का सारा समय निरर्थक ही गवाँ देना। ऐसी *गारवता* आपने नहीं देखी है ?

गारवता यानी क्या कि किसी मिल के सामने रास्ते के पास तालाब जैसा गड्ढा भरा पड़ा हो, और उसमें हरदम पानी भरा रहता हो। वह गंदा पानी फिर बहुत बदबू मारता है। यह पानी वहाँ हमेशा भरा रहता है, इसलिए पानी में दो-दो, तीन-तीन फीट कीचड़ होता है। तो गर्मी के दिनों में भैंस क्या करती है ? भैंस का स्वभाव बहुत गरम, इसलिए उससे दोपहर की गर्मी सहन नहीं होती, इसलिए फिर जब वह ऐसा गड्ढा देखती है, तब उसमें जाकर धप्प से बैठ जाती है। बैठते ही सारा कीचड़ उसके पूरे बदन पर लग जाता है। फिर भैंस क्या करती है कि सिर्फ अपना मुँह ही पानी से बाहर रखती है और सारा शरीर कीचड़ में डूबा रहे, ऐसे रखती है। कीचड़ में उसे फ्रीज़ जैसा लगता रहता है। अब इसमें बदबू की तो उसे समझ ही नहीं है। ऐसे अच्छे-बुरे की उसे समझ तो है ही, लेकिन बदबू की उसे परवाह नहीं होती। वह तो बस कीचड़ की ठंडक में से निकलती ही नहीं। अब उसके मालिक को तीन बजे उसकी ज़रूरत हो, तब मालिक आकर कहता है कि, 'चल, चल बाहर निकल।' लेकिन वह नहीं आती। फिर घास का गट्ठर लाकर दिखाता है फिर भी भैंस कान हिलाकर देखती ज़रूर है, लेकिन फिर कुछ भी नहीं। ऐसा फ्रीज़ छोड़कर वह क्या बाहर आएगी ? फिर वह मालिक समझ जाता है कि इसे कोई लालच दूँ तभी आएगी, वर्ना नहीं आएगी। उसे ठंडक हो गई है, इसलिए अब यह नहीं उठेगी। फिर वह बिनौले की टोकरी लेकर आता है। उसमें दूसरी सभी चीज़ें भी डाली होती हैं और भैंस को दिखाकर कहता है कि, 'ले, ले, ले'। भैंस उधर देखती है लेकिन फिर भी उसे टोकरी की कुछ पड़ी ही नहीं होती।

ऐसी फ्रीज़ जैसी ठंडक उसे और कहाँ मिले?

उसी प्रकार, इस जगत् के लोग विषयों की फ्रीज़ जैसी ठंडक में पड़े हुए हैं। विषयरूपी *गारवता* है, उसमें पड़े हुए हैं। वह कीचड़ निरी बदबू मारता है, मालिक टोकरी में अच्छा खाना देता है, फिर भी वहाँ पर उसे यह खाना अच्छा नहीं लगता। इस *गारवता* में सारा जगत् फँसा हुआ है। भले ही फँसे हुए हों। फँसे हैं, उसमें परेशानी नहीं है। कितनी मुद्दत के लिए फँसे हैं उसमें भी परेशानी नहीं है, लेकिन आज से नक्की तो करना चाहिए न कि अब यह नहीं चाहिए। कभी भी नहीं। सदा उसके विरोधी तो रहना चाहिए न? वर्ना यदि दोनों एकमत हो गए, अंदर-बाहर एकमत हो गया कि खत्म हो गया। आपमें कितना एकमत होता है? या अलग रहता है?

प्रश्नकर्ता : अलग रहता है।

दादाश्री : हमेशा? मुझे नहीं लगता कि ये शूरवीर अलग रह पाएँ, ऐसे हैं! इन शूरवीरों की क्या बिसात कि जिनकी जागृति मंद हो चुकी है! वर्ना विषय तो खड़ा ही नहीं होगा न! और शायद यदि खड़ा हो जाए तो भी पूर्व प्रयोग होने के कारण। लेकिन तब खुद की दृष्टि मिठासवाली नहीं होती, निरी ऊबवाली दृष्टि होती है! जैसे नापसंद भोजन खाना पड़े, तब उसका चेहरा कैसा होता है? खुश होता है? चेहरा भी उतर जाता है न! लेकिन खाए बगैर चारा नहीं है, भूख के मारे खाना पड़ता है। यानी उसे नापसंद है!

जगत् ऐसी *गारवता* में पड़ा हुआ है। फिर भी जहाँ पूर्व प्रयोगी होने के कारण बँधे हुए हैं, वहाँ कोई चारा ही नहीं है। लेकिन फिर भी उसके प्रति निरंतर चिढ़, चिढ़ और चिढ़ ही रहनी चाहिए। और मन में ऐसा होते रहना चाहिए कि यह मुझे कहाँ मिला फिर से? ऐसी जागृति है ही कहाँ? पूरी डलनेस (मंदता) है!

जो *गारवता* में फँसा हुआ है, वह कैसे निकले? जब ज़बरदस्ती खाना पड़े, तब क्या चेहरा खुश होता है? लेकिन ये चेहरे तो उतरे हुए

होते ही नहीं, जैसे सभी बगीचे में टहलने निकले हों, ऐसे चेहरे दिखते हैं! वर्ना हमारे शब्द नोट करके यदि उसके अनुसार चले न तो पिछले सभी दोष निकल जाएँ। बाकी पूर्व प्रयोग तो है ही, उसके लिए हमसे मना नहीं किया जा सकता न! यह जो खाना पड़ता है, वह पूर्व प्रयोग के आधार पर है। लेकिन अपना चेहरा उतरा हुआ होना चाहिए। सामनेवाला कहे कि 'खाने के लिए बैठिए,' तब खुद ज़बरन बेमन से खाने बैठे। इस तरह बेमन से कभी भी खाया है क्या? उसमें बहुत मज़ा आता है? यानी इसका कानून यदि समझ जाए कि इसके प्रति चिढ़, चिढ़ और चिढ़ ही रहनी चाहिए। लेकिन यह तो तालाब देखा कि भैंस खुश! फ्रीज़ आया! अब क्या हो सकता है इसका?

यह सब *गारवता* में फँस चुका है, इसलिए प्रभु से विनती करता है, *'हे प्रभु, रह्यु छे फसी!'*, अब इस *गारवता* में से छूटे तो निबेड़ा आए। वह गंध, वह फोटो भी कैसा आएगा? ऐसा सब दिन-रात मन में खटकता रहता है। लेकिन यह तो चाय की तरह पीता है। जब चाय पीनी हो, तब कहेगा, 'चाय बनाओ ज़रा।' फिर चाय बनाकर आराम से पीता है! ऐसा कैसे चलेगा? फिर भी कुछ सोचे तो भी उत्तम है। बाकी हम तो सावधान करते हैं कि जैसे-तैसे बच जाए तो अच्छा। फिर और क्या करें? हम उसे थोड़े ही मारेंगे? बाकी ज्ञानी मिलें फिर भी नहीं बच पाए, तो फिर उसी की भूल है न!

विषय वेदरूपी भूख मिटाने के लिए हैं, न कि शौक़रूपी

आयुष्य श्वासोच्छ्वास पर आधारित है। युवा व्यक्ति, नॉर्मल वेट, ऐसे निरोगी व्यक्ति के चौबीस घंटों के श्वासोच्छ्वास की गिनती करके उस पर से सौ साल का आयुष्य निकाला। जैसे-जैसे श्वासोच्छ्वास अधिक खर्च होते हैं, वैसे-वैसे आयुष्य कम होता जाता है। श्वासोच्छ्वास किस में ज़्यादा खर्च होते हैं? भय में, क्रोध में, लोभ में, कपट में और उससे भी ज़्यादा स्त्री संग में। घटित स्त्री संग में तो बहुत ही ज़्यादा खर्च होते हैं, लेकिन उससे भी ज़्यादा अघटित स्त्री संग में खर्च होते हैं। जैसे कि गरारी एकदम से खुल जाए!

इसलिए इस कुदरत के खेल में यदि सिर्फ ये तीन वेद नहीं होते तो संसार जीत जाते। ये तीन वेद नहीं होते तो क्या बिगड़ जाता? लेकिन बहुत कुछ है इनकी वजह से। अहोहो! इतनी अधिक रमणता है न इनकी वजह से! इस विषय को वेद के रूप में नहीं रखा होता, एक कार्य की तरह, जैसे आहार लेते हैं, इस प्रकार कार्य की तरह रखा होता तो हर्ज नहीं था। लेकिन इसे तो वेद की तरह रखा, वेदनीय के रूप में रखा। ये सारा झंझट ही तीन वेदों का है। भूख का शमन करने के लिए खाना है। भूख लगे उसका शमन करो। जहाँ पूरण करना पड़े, वह सब भूख कहलाती है। भूख, वह वेदना-शमन करने का उपाय है। इस तरह सभी विषय वेदना का शमन करने के उपाय हैं। जबकि इन लोगों को विषय का शौक़ हो गया है। अरे! शौक़ीन मत हो जाना। वहाँ लिमिट खोज निकालना और नोर्मेलिटी में रहना।

प्रश्नकर्ता : वेद के तौर पर नहीं लेना है, उस पर से आप क्या कहना चाहते हैं?

दादाश्री : लोग वेदते हैं यानी टेस्ट चखते हैं। टेस्ट के लिए चखना, टेस्ट के लिए खाना, वह भूख नहीं कहलाती। भूख मिटाने के लिए रोटी और सब्ज़ी खानी है, टेस्ट के लिए नहीं। टेस्ट के लिए खाने जाओगे तो रोटी और सब्ज़ी आपको भाएगा ही नहीं। टेस्ट लेने गया इसलिए वेद हो गया है। 'भूख' के लिए ही 'खाए', इतना तू समझदार हो जा। तो फिर मुझे तुझसे कुछ कहना ही नहीं पड़ेगा न! तीन वेदों से यह सारा जगत् सड़ रहा है, गिर रहा है।

प्रश्नकर्ता : इन तीन वेदों का सोल्युशन तो सारा जगत् खोज रहा है और जैसे-जैसे सोल्युशन करने जाता है, वैसे-वैसे और अधिक उलझता है।

दादाश्री : हाँ, यानी सोल्युशन के सभी रास्ते उलझन बढ़ाते हैं। आस-पासवालों से पूछें कि, 'ये भाई कैसे हैं?' तब सभी कहते हैं कि, 'बहुत सुखी हैं।' और उनसे पूछें तो कहेगा, 'बहुत दु:खी हूँ।' यह सब

वेद के कारण है। सारा दिन जलन, जलन... यह सारी जलन वेद के कारण है। वर्ना मनुष्य में जलन नहीं होती। जिसने वेद जीता उसका काम हो गया। इस जगत् में जीतने जैसा क्या है? तब यह, कि वेद। क्या वेद को तू समझ गया है? वे तीन वेद कौन-से हैं? पुरुष वेद, स्त्री वेद और नपुंसक वेद।

विषय सुख चखेगा, तब तक आत्मसुख कैसे चख पाएगा?

आत्मा का सच्चा सुख तो ये ब्रह्मचारी ही चख सकते हैं। जो स्त्रीरहित पुरुष हैं, वे ही चख सकते हैं। फिर उन्हें जल्दी 'स्टडी' (अभ्यास) हो जाती है। क्योंकि जो शादीशुदा हैं उनके पास, यह सच्चा सुख है या वह, उन दोनों की तुलनात्मक दृष्टि नहीं है। फिर भी चलने दो न गाड़ी! जो शादीशुदा हैं उनसे हम ऐसा थोड़े ही कह सकते कि तू कुँवारा हो जा! इसलिए हमने उन्हें 'समभाव से निकाल' करने को कहा है। लेकिन बात को समझो, ऐसा भी कहते हैं। विषय में तो मरने जैसा दुःख होता है। विषय हमेशा परिणाम में कड़वा है। शुरूआत में उसे ऐसा लगता है कि यह विषय सुखदायी है, लेकिन परिणाम में तो कड़वा ही है। उसका विपाक भी कड़वा है। इसके बाद थोड़ीदेर के लिए तो इन्सान मुर्दे जैसा हो जाता है लेकिन उसके सिवा कोई चारा भी नहीं है न? वह भी अनिवार्य है। अब आप किस तरफ जाओगे? ऐसा करने जाओगे तो भी अनिवार्य है और वैसा करने जाओगे तो भी अनिवार्य है। इसलिए मेरा यह कहना है कि अनिवार्य को अनिवार्य जानकर उसकी इच्छा छोड़ दो। 'उसमें मेरी मर्ज़ी है', वह छोड़ दो।

छः-बारह महीने विषयसुख छोड़ दे तो समझ में आएगा कि आत्मा का सुख कहाँ से आता है! यह तो विषय है, इसलिए तब तक उसे, इनमें से सच्चा सुख कौन सा है, इसका उसे पता नहीं चलता। इसलिए हम कहते हैं न कि विषय में से ज़रा निकलकर तो देखो तो सच्चे सुख का पता चलेगा! विषय में सुख है ही नहीं! विषय में तो कभी सुख होता होगा? दाद हो जाए और इस तरह रगड़ता रहे, दाद को खुजलाता रहे तो बहुत मीठा लगता है, लेकिन बाद में उसे जलन होती है। यह उसके जैसा है!

प्रश्नकर्ता : इसमें सच्चा सुख नहीं है, लेकिन एकदम लिमिटेड टाइम के लिए तो है, फिर भी यह छूटता नहीं है न!

दादाश्री : नहीं, इसमें सुख है ही नहीं! यह तो मान्यता ही है सिर्फ! यह तो मूरख लोगों की मान्यता ही है! यह तो, हाथ पर हाथ रगड़े तब सुख लगे तो समझें कि यह बिल्कुल सही सुख है। लेकिन यह विषय तो निरी गंदगी ही है! यदि कोई बुद्धिमान व्यक्ति इस गंदगी का हिसाब लगाए तो उस गंदगी की ओर जाएगा ही नहीं! अभी यदि केले खाने हों तो उसमें गंदगी नहीं है और उसे खाने में सुख है। लेकिन इसने तो निरी गंदगी को ही सुख माना है। किस हिसाब से मानता है, वह भी समझ में नहीं आता!

उसमें गंदगी नज़र आए तो वह जाए

प्रश्नकर्ता : तो इस विषय से दूर कैसे जा सकते हैं?

दादाश्री : यदि एकबार ऐसा समझ ले कि यह गंदगी है तो दूर जा सकेगा। बाकी, यह गंदगी है वह भी नहीं समझा है! अतः पहले ऐसी समझ आनी चाहिए। हमें, ज्ञानियों को तो सब ओपन दिखाई देता है। उसमें क्या-क्या होगा? तो तुरंत ही मति चारों ओर सभी जगह घूम आती है। अंदर कैसी गंदगी है और क्या-क्या है, वह सब दिखला देती है! जबकि यह तो विषय हैं ही नहीं। विषय तो जानवरों में होते हैं। यह तो सिर्फ आसक्ति ही है। बाकी विषय तो किसे कहते हैं कि जो परवश होकर करना पड़े। द्रव्य, क्षेत्र, काल और भाव के आधार पर परवशता से करना पड़े। जो इन बेचारे जानवरों में होता है।

प्रश्नकर्ता : तो फिर जब परवशता से नहीं करे, तब आसक्ति कहलाएगी?

दादाश्री : आसक्ति ही कहलाएगी न! ये तो शौक़ से ही करते हैं। दो पलंग मोल लाते हैं और वे एक साथ रख देते हैं, एक बड़ी मच्छरदानी लाते हैं। अरे! यह भी कोई धंधा है? मोक्ष में जाना हो तो मोक्ष में जाने के लक्षण होने चाहिए! मोक्ष में जाने के लक्षण कैसे होते

हैं? एकांत शैय्यासन के। शैय्या और आसन एकांत (अलग ही) होते हैं।

जब तक जिस बारे में अंध है, तब तक उस बारे में दृष्टि खिलती ही नहीं, बल्कि और ज़्यादा अंध होता जाता है। उससे दूर रहने के बाद उससे छूट सकता है। फिर उसकी दृष्टि खिलती जाएगी, उसके बाद समझ में आता जाएगा।

एकांत शैय्यासन

प्रश्नकर्ता : आपने एकांत शैय्यासन के बारे में कहा है, लेकिन उसमें भी एकांत में तो अंदर से गाँठे फूटेंगी न?

दादाश्री : एकांत शैय्यासन यानी क्या? शैय्या में कोई साथ में नहीं और आसन में भी कोई साथ में नहीं। संयोगी 'फाइलों' का किसी भी तरह का स्पर्श नहीं। शास्त्रकार तो यहाँ तक मानते थे कि 'जिस आसन पर यह परजाति बैठी हो, तू उस आसन पर बैठेगा तो तुझे उसका स्पर्श होगा, विचार आएँगे।' इस तरह की मान्यताएँ थीं। आज उन सूक्ष्म मान्यताओं की बात करें तो उसका कोई अर्थ नहीं है। आजकल तो ऐसा चलता ही रहता है न! यह तो संपूर्ण मोह का काल है! यह मोहनीय काल नहीं है, महामोहनीय काल है!

प्रश्नकर्ता : उसके आसन पर बैठने से जो असर होता है, उससे ज़्यादा असर तो जो भीतर होता है उससे है न? बाहर का तो बहुत सारा स्थूल में गया न? उसकी तुलना में जो अंदर का फूटता है तो वह ज़रा ज़्यादा ज़ोर मारता है न?

दादाश्री : अंदर का फूटे या बाहर से फूटे लेकिन सबकुछ ज्ञायक स्वभाव से बाहर है और बाकी का सबकुछ ज्ञेय है। फिर हमें क्या स्पर्श किया?

प्रश्नकर्ता : ज्ञान लेने के बाद निराकुलता बरतती है, फिर भी विषय में आसक्ति क्यों रह जाती है?

दादाश्री : भीतर ऐसा माल भरा है, इसलिए अभी तक उसके मन में श्रद्धा है कि इसमें सुख है।

बदलो बिलीफ विषय से संबंधित

प्रश्नकर्ता : यानी ज्ञान के बाद सिर्फ 'बिलीफ' ही बदलनी है?

दादाश्री : हाँ, लेकिन ऐसा है न 'राइट (सही) श्रद्धा पूरी बैठ गई,' ऐसा कब कहा जाएगा कि जब सारी रोंग (गलत) श्रद्धा खत्म हो जाए तब! अब मूल रोंग बिलीफ हमने खत्म कर दी लेकिन इस विषय में तो हम थोड़ी-बहुत रोंग श्रद्धा फ्रैक्चर कर देते हैं! बाकी क्या यह पूरा फ्रैक्चर करने हम फालतू बैठे हैं?

यानी विषय में से रस निर्मूल कब होगा कि जब पहले उसे खुद को ऐसा लगे कि 'यह मिर्च खा रहा हूँ, इससे मुझे तकलीफ होती है, ऐसे नुकसान करती है,' उसे ऐसा समझ में आना चाहिए। जिसे मिर्च का शौक़ हो, उसे जब गुण-अवगुण समझ में आ जाएँ और विश्वास हो जाए कि यह मुझे नुकसान ही करेगी तो वह शौक़ जाएगा। अब यदि हमें ऐसा यथार्थ रूप से समझ में आ जाए कि 'शुद्धात्मा में ही सुख है,' तो विषय में सुख रहेगा ही नहीं। फिर भी यदि विषय में सुख महसूस होता है वह पहले का रीएक्शन है!

प्रश्नकर्ता : विषय में सुख है, वह जो बिलीफ पड़ी है, वह किस तरह निकलेगी?

दादाश्री : यह चाय मज़ेदार मीठी लगती है, वह अपना रोज़ का अनुभव है, लेकिन जलेबी खाने के बाद कैसी लगेगी?

प्रश्नकर्ता : फीकी लगेगी।

दादाश्री : तब उस दिन पता चल जाता है, बिलीफ बैठ जाती है कि जलेबी खाई हो तो चाय फीकी लगती है। इसी तरह जब आत्मा का सुख रहता है, तब अन्य सब फीका लगता है।

विषय से चला जाए ज्ञान और ध्यान

यह विषय ऐसी चीज़ है कि एक ही दिन का विषय तीन दिनों तक किसी भी प्रकार की एकाग्रता नहीं होने देता। एकाग्रता डाँवाडोल होती रहती है। यदि कोई महीनेभर विषय का सेवन नहीं करे तो उसकी एकाग्रता डाँवाडोल नहीं होगी। आपको आत्मा का सुख बरतता है, उसके आधार पर आप यहाँ आते रहते हो। आपकी दृष्टि यहीं पर होती है, फिर भी यह सुख आत्मा का है या विषय का है, आपको वह भेद मालूम नहीं पड़ता। किसी को अन्जाने में पहले जलेबी खिलाएँ और बाद में चाय पिलाएँ तो? उसी प्रकार जलेबी की वजह से चाय फीकी लगती है, ऐसा भेद इसमें मालूम नहीं पड़ता!

नहीं बुझती वह प्यास कभी

देखो, सुख कहीं भी नहीं मिलता। इतने पैसे हैं, फिर भी पैसों में सुख नहीं मिलता। पत्नी है पर उससे भी सुख नहीं मिलता! इसलिए फिर बोतल मँगवाकर, ज़रा पीकर सो जाता है! सुख तो मनुष्य ने देखा ही नहीं है न! जीवमात्र क्या खोज रहा है? सुख ही खोज रहा है। क्योंकि उसका स्वभाव ही सुख का है। चित्तवृत्ति सुख ही खोजती है कि इसमें सुख मिलेगा, जलेबी में सुख मिलेगा, इत्र में सुख मिलेगा, सिनेमा में सुख मिलेगा। उसे चखने के बाद खुद तय करता है कि इसमें कुछ भी सुख नहीं है। फिर खुद उसे छोड़ता जाता है और आगे नया खोजता ही जाता है, लेकिन उसे तृप्ति नहीं होती। संतोष होता है लेकिन तृप्ति नहीं होती। संतोष उसे कहा जाता है कि इच्छा पूरी हो जाए, तब संतोष होता है। खाने की इच्छा हुई फिर हम खाना खाएँ, तब संतोष होता है लेकिन तृप्ति नहीं होती। तृप्ति यानी फिर से उस चीज़ की इच्छा ही नहीं हो।

प्रश्नकर्ता : हमने किसी चीज़ की इच्छा की हो और हमें वह चीज़ नहीं मिले तब अंदर जलन शुरू होती है न?

दादाश्री : इच्छ, वही अग्नि है। इच्छा हुई यानी दीयासलाई जलाकर सुलगाना। फिर जब तक वह नहीं बुझती, तब तक जलन होती रहती है।

इच्छा तीव्र है या नरम, उस पर जलन आधारित है। बहुत तीव्र इच्छा हो तो बहुत जलन पैदा होती है। यह विषय की इच्छा तो बहुत जलन पैदा करती है, ज़बरदस्त जलन पैदा करती है। इसलिए ऐसा कहा है न कि 'विषय में पड़ना ही नहीं, वह बहुत जलन देता है।'

प्रश्नकर्ता : ऐसा तो किसी ने बताया ही नहीं था न!

दादाश्री : लोगों को सब घोटालेवाला चाहिए, इसलिए कोई कहेगा ही नहीं न! लोग खुद गुनहगार हैं इसलिए वे नहीं बोलते न! जो गुनहगार नहीं हैं, वे ही बोलेंगे। क्योंकि एक ही बार का विषय कितने ही दिनों तक इन्सान की भ्रांति छूटने नहीं देता। भ्रांति यानी डिसीज़न नहीं आ पाता कि यह आत्मा का सुख है या भौतिक सुख है, इसका भान नहीं होने देता! इस ज्ञान के साथ यदि ब्रह्मचर्यव्रत ले ले, तो फिर माथापच्ची ही नहीं न! परेशानी में भी सुख बरतता रहेगा! ये लोग ऐसा क्यों भूल जाते होंगे कि माँस की पुतली है? ऐसा है न मूर्छावश वह उसमें से जैसे-जैसे सुख लेता है, वैसे-वैसे उस पर मूर्छा छाती जाती है। यदि छः-बारह महीनों तक उसमें से सुख नहीं ले, तब फिर उसकी मूर्छा जाएगी। तब फिर उन्हें रेशमी चद्दर में लिपटा हुआ माँस ही दिखाई देगा!

तभी मिले आत्मा का सुख

चालीस रुपये किलो की चाय हो, लेकिन उसमें स्वाद नहीं आए, तो उसका क्या कारण होगा? क्योंकि एक ओर वह चाय पीता है और दूसरी ओर अनार खाता है, अगरूद खाता है, फिर क्या चाय का स्वाद मालूम पड़ेगा? तो चाय का टेस्ट कब मालूम पड़ेगा? कि जब बाकी का सब खाना बंद कर दे और मुँह-वुँह साफ करने के बाद चाय पीए तो समझ में आएगा कि यह चालीस रुपये किलो की चाय बहुत स्वादिष्ट है! तब चाय का अनुभव होगा! वैसे ही इन सभी चीज़ों के बीच आत्मा का अनुभव कैसे मालूम पड़ेगा? भान ही नहीं रहता न? मनुष्य की इतनी जागृति होती नहीं है न! इसलिए ऐसा प्रयोग करना चाहिए। छः-बारह महीनों का ब्रह्मचर्यव्रत लिया हो तो फिर यह अनुभव समझ में आएगा!

निरालंब आनंद निराला

सबसे बड़ी तकलीफ तो बाहर सभी जगह खराब दृष्टि रखने में है। दूसरा, उससे आगे इसमें क्या करना चाहिए कि जैसे स्कूल में साल में डेढ़ महीने की छुट्टी होती है, उसी तरह इस विषय में यदि छः महीने की छुट्टी ले ले तो उसे पता चल जाएगा कि यह सुख कहाँ से आ रहा है? अतः उसे सुख मिलता है, यह तो तय है लेकिन कसौटी नहीं हो पाती कि इनमें से सच्चा सुख कौन सा है? हमें देखो न, चौबीसों घंटे रूम में अकेले बिठाकर रखे न, तब भी वही आनंद रहता है। साथ में कोई एकाध व्यक्ति हो तो भी वही आनंद रहता है और लाखों लोग हों तो भी वही आनंद रहता है। उसका क्या कारण है? हमें निरालंब सुख उत्पन्न होता है, अवलंबन नहीं चाहिए। सारा जगत्, जीवमात्र परस्पर है, इसलिए एक-दूसरे का अवलंबन चाहिए। इसीलिए तो इन लोगों ने शादी की खोज की थी कि शादी करो ताकि पारस्परिक अवलंबन मिलता रहे।

'मैं शुद्धात्मा हूँ', यह शब्द का अवलंबन है! लेकिन वह प्रवेश के लिए हरी झँडी है और सबसे अंतिम निरालंब आत्मा, उसे शब्द का या अन्य कोई भी अवलंबन नहीं है, ऐसा निरालंब आत्मा! वहाँ तक अब गाड़ी जाएगी! लेकिन एकबार शब्दावलंबन से गाड़ी चलनी शुरू हो जानी चाहिए और वह शब्दावलंबनवाला शुद्धात्मा अनुभव भी देता है! अतः पूछने जैसा कुछ भी नहीं है। सिर्फ आत्मा ही जानने योग्य है। जो 'लक्ष्य' में आया, वह आत्मा जानने योग्य है। यह मार्ग सरल है, सहज है, सुगम है। खुद अपने आपको लक्ष्य में रखकर सब पूछना, *पुद्गल* का ध्यान रखने की ज़रूरत नहीं है। आत्मा आपके पास है, उसका ध्यान रखना है। आत्मा का स्पष्ट अनुभव करना हो तो छः-बारह महीने विषय बंद रखना। ये सारे अनुभव तो होते रहते हैं, लेकिन दोनों साथ रहेंगे तो पता नहीं चलेगा कि 'सुगंधी' कहाँ से आ रही है? हमारी आज्ञा पर अमल करने के बाद प्रतिक्रमण करने की शुरूआत करो, उसके बाद ही वह विषय छूटेगा। हमारा यह ज्ञान, ये जो-जो बातें बतलाते हैं न, उन सभी का अमल करने के बाद महीने-महीनेभर दोषों के प्रतिक्रमण करो। ताकि हमें अपने आपमें

विश्वास हो जाए कि यही सच है। आत्मा की अनंत शक्ति है। कुछ लोगों को ब्रह्मचर्यव्रत लेने के बाद चमत्कार होता है। फिर बहुत सुंदर परिणतियाँ रहती हैं और फिर मन में विषय के विचार ही बंद हो जाते हैं। फिर उन्हें विषय अच्छा ही नहीं लगता! मनुष्य को सुख ही चाहिए। वह सुख यदि मिल रहा हो तो फिर कोई भी कीचड़ में हाथ डालने को तैयार नहीं होगा। यह तो बाहर गरमी लगती है इसलिए कीचड़ में हाथ डालता है, ठंडक के लिए, वर्ना कीचड़ में कोई हाथ डालता होगा? लेकिन क्या हो?

अब आपको एक बार अनुभव से समझ में आया कि बिना विषय के इस ज्ञान में बहुत सुंदर सुख रहता है। इसलिए फिर आपको विषय में रुचि खत्म होती जाएगी। यह ज्ञान ऐसा है कि विषय के बिना भी बहुत सुंदर सुख रहता है। इसलिए फिर सारे विषय अपने आप स्वयं ही छूट जाते हैं, सभी खत्म हो जाते हैं, लेकिन जब सब अनुभव कर-करके समझ में फिट हो जाए, तब ऐसा हो सकता है।

समझना ब्रह्मचर्य की अनिवार्यता

ब्रह्मचर्य तो बहुत बड़ी चीज़ कहलाती है! हिन्दुस्तान में लोग ब्रह्मचर्य पालन करते हैं न? नहीं पालन करते ऐसा नहीं है, लेकिन वह वैज्ञानिक तरीके से नहीं है। अहंकार से हैं। अहंकार से हो सकता है, लेकिन वह वैज्ञानिक ढंग जैसा नहीं होता, वह निर्बल होता है। जबकि निरअहंकारी ढंग से तो 'खुद' ज्ञाता-दृष्टा रहता है, 'चंदूभाई' कैसा ब्रह्मचर्य पालन कर रहे हैं उसे 'खुद' यह जानता है, जबकि अहंकारी ढंग में तो खुद ही ब्रह्मचर्य का पालन करनेवाला है। वह वैज्ञानिक तरीका नहीं है। ब्रह्मचर्य तो जगत् भी पालता है, लेकिन वह वैज्ञानिक नहीं है। अक्रम मार्ग में अपने पास वैज्ञानिक तरीका है, मन-वचन-काया से हैं। मन कूदे तो जगत् के लोगों के पास उसके लिए कोई दवाई नहीं है। जबकि अपने पास दवाई है। अपना ब्रह्मचर्य तो देवगण भी देखने आते हैं।

अब्रह्मचर्य और शराब, ये दोनों तो ज्ञान पर बहुत आवरण लानेवाली चीज़ें हैं, इसलिए बहुत जागृत रहना। शराब तो ऐसा है न कि 'मैं चंदूभाई

हूँ', वह भान भी भूल जाता है न! तो फिर आत्मा तो भूल ही जाएगा न! इसलिए भगवान ने डरने को कहा है। जिसे संपूर्ण अनुभवज्ञान हो जाए, उसे स्पर्श नहीं करता। फिर भी भगवान के ज्ञान को भी उखाड़कर बाहर फेंक दे! उसमें इतना भारी जोखिम है।

यदि पालन करने योग्य एकाध ही कानून हो तो मैं कहूँगा कि ब्रह्मचर्य पालन करना! इच्छाएँ यदि विराम पाएँ तो अंतर का वैभव प्रकट होगा। आत्मा तो ब्रह्मचारी ही है। मेरा दिया हुआ आत्मा ब्रह्मचारी ही है। अब 'आपको' चंदूभाई से कहना है कि 'भाई, तबियत अच्छी रखनी हो, संसार शांति से पूरा करना हो, तब यदि हो सके तो छः-बारह महीने का ब्रह्मचर्यव्रत लिया जा सके तो अच्छा रहेगा। उससे शरीर स्वस्थ रहेगा।' यह तो ढाँचा ही 'लूज़' हो गया है।

ब्रह्मचर्यव्रत लेकर तोड़ना गुनाह है। उसके बजाय लेना ही नहीं और अपनी तरह से अंदर उपशम करते रहो तो बल्कि बेहतर होगा। खुद घर पर रहकर ही सारे प्रयोग कर सकते हैं। जिसे मोक्ष में ही जाना है वह खुद का रास्ता नहीं चूकता, उसी को ज्ञानी कहते हैं। चाहे कितने भी बाहर से लालच आएँ, फिर भी खुद का रास्ता नहीं चूके।

अंत समय भी लेना ब्रह्मचर्यव्रत

ऐसा कोई नियम नहीं है कि जवानी में ही ब्रह्मचर्य होना चाहिए, जवानी का ब्रह्मचर्य, वह तो बहुत ऊँची चीज़ है। लेकिन मैं तो कहता हूँ कभी भी ले लेना। अरे! वृद्धावस्था हो और मरने से दस दिन पहले ब्रह्मचर्यव्रत ले तो भी कल्याण हो जाएगा और वह ब्रह्मचर्यव्रत भी ज्ञानी के हाथों होना चाहिए। जो सर्वांग ब्रह्मचारी हैं, ऐसे ज्ञानी के हाथों ही व्रत दिया जाना चाहिए। इसमें फिर ऐसा नहीं है कि व्रत ले ही लेना चाहिए, इसमें केवल अपनी भावना चाहिए। करना चाहिए कहते हैं लेकिन करने से होता नहीं है। यदि आप आज ऐसा कहें कि मुझे भी ब्रह्मचर्यव्रत लेना है, लेकिन ऐसा हो नहीं सकता। भावना करते रहना चाहिए तो कभी उदय में आएगा और जब उदय आए तब ब्रह्मचर्यव्रत

लेना। भावना की है तो समय आने पर उदय अपने आप आकर खड़ा रहेगा ही!

इसलिए हम चेतावनी देते हैं कि इस ढलान पर चढ़ना हो तो यह रास्ता है, वर्ना वह ढलान तो है ही भाई! और इस ढलान पर चढ़ना हो तो लोगों का काम भी निकल जाए ऐसा है! क्योंकि ब्रह्मचर्यव्रत के बिना कभी कुछ हो पाए, ऐसा नहीं है। जगत् का कल्याण होने में ब्रह्मचर्यव्रत के बिना कुछ भी नहीं हो सकता, बाकी खुद का कल्याण कर सकते हैं। अत: यह ब्रह्मचर्यव्रत तो सबसे बड़ा व्रत है।

बिना ब्रह्मचर्य के नहीं है पूर्णाहुति

जिसे संपूर्ण होना है, उन्हें तो विषय होना ही नहीं चाहिए और वह भी ऐसा नियम नहीं है। वह तो अंतिम जन्म में अंतिम पंद्रह सालों के लिए छूट जाए तो काफी है। कई जन्मों-जन्म इसकी कसरत करने की ज़रूरत नहीं है या त्याग लेने की भी ज़रूरत नहीं है। त्याग ऐसा सहज होना चाहिए कि अपनेआप ही छूट जाए! *नियाणां* (अपना सारा पुण्य लगाकर किसी एक चीज़ की कामना करना) ऐसा रखना कि मोक्ष में जाने तक जो दो-चार जन्म हों, वे बिना शादीवाले हों तो अच्छा। उस जैसा कुछ भी नहीं है। *नियाणां* ही ऐसा करना। फिर जो होगा वह देख लेंगे! और यदि यह एक बोझ गया न, तो सारे बोझ गए! यह एक है तो सबकुछ है!

यह ज्ञान लिया तो दादा के प्रताप से स्वच्छंद रुक गया! इसलिए इन महात्माओं के लिए अवश्य ही मोक्ष का साधन हो गया है। लेकिन फिर यह एक झंझट कच्ची रह जाती है! कई तो शादीशुदा हैं न, वे ये सब बातचीत सुनकर इसका जोखिम समझ गए! अत: फिर वृत्तियाँ मोड़ लेते हैं। ज्ञानीपुरुष की दी गई आज्ञा का पालन करे तो ज़बरदस्त नूर उत्पन्न होगा। आज्ञा-पालन में जितना सच्चा दिल और जितना सच्चा उल्लास होगा उतना फल मिलेगा। व्रत की आज्ञा पालो तब हमें खुद साथ में रहना पड़ता है। इस आज्ञा में तो हमारा वचनबल, चारित्रबल उपयोग में आता है।

प्रश्नकर्ता : दूबवाला खेत हो तो वहाँ बैलों का काम नहीं है, वहाँ तो ट्रेक्टर से ही काम होता है। आप जैसा ट्रेक्टर चाहिए, दादा!

दादाश्री : हाँ, लेकिन उखाड़ देना है। ब्रह्मचर्य तो सबसे ऊँची चीज़ है। शादी करने के बाद ब्रह्मचर्य ले तो वह ब्रह्मचर्य बहुत अच्छी तरह से पाला जा सकता है। संसार का स्वाद चख लेने के बाद उनमें काफी कुछ उपशम हो गया होता है। उसके बाद ब्रह्मचर्यव्रत लेते हैं, जो हम कई लोगों को देते हैं, वे बहुत अच्छा पालन करते हैं। ये जो साध्वीजी बनते हैं, वे तो शादी के बाद चालीस साल की हो जाती हैं, तीन बच्चे होने के बाद दीक्षा लेती हैं, फिर भी वे महासती कहलाती हैं। क्योंकि अंतिम पंद्रह सालों में ब्रह्मचर्य पालन करे तो भी बहुत हो गया। भगवान महावीर ने अंतिम बयालीस सालों में ब्रह्मचर्य पालन किया था। तीस साल की उम्र में उन्हें बेटी थी। लेकिन वे सभी पुरुष तो ऊर्ध्वगामी, ऊर्ध्वरेता (ऊर्ध्वगामी वीर्यवान) होते हैं। उनके दिमाग़ इतने पावरफुल होते हैं, इतनी अधिक जागृति होती है! उनकी वाणी तो और ही तरह की होती है!

जगत् में कभी भी निकला ही नहीं, ऐसा यह विज्ञान है! हमेशा समाधि में रखता है! ऐसा ब्रह्मचर्य पाले तो भी समाधि और ब्रह्मचर्य नहीं पाले और शादी कर ले तो भी समाधि! इसलिए इसका लाभ उठाना।

स्पष्टवेदन रुका है विषयबंधन से

भले ही कैसे भी कर्म हों यह ज्ञान उन्हें मटियामेट कर डाले, भीतर जो हैं उसे भस्मीभूत कर डाले, ऐसा है।

प्रश्नकर्ता : हाँ, वह ठीक है। लेकिन आत्मसुख का कोई स्पष्टवेदन नहीं है, ऐसा क्यों?

दादाश्री : अब वह स्पष्टवेदन कब तक नहीं होगा? जब तक ये विषय-विकार नहीं जाते, तब तक स्पष्टवेदन नहीं होगा। इसलिए यह आत्मा का सुख है या कौन सा सुख है वह 'एक्ज़ेक्ट' समझ में नहीं आता। यदि ब्रह्मचर्य हो तो 'ऑन द मोमेन्ट' समझ में आ जाता है।

स्पष्टवेदन हुआ कि वह परमात्मा ही हो गया कहा जाएगा! जिसे सांसारिक दु:खों का अभाव बरतता है, कपट चला जाता है, तब अंदर स्पष्ट अनुभव होने लगता है! कपट की वजह से अनुभव अस्पष्ट रहता है! जो जितनी हद तक हमारे पास खुलासा करता है, वह उतना ही हमारे साथ अभेद हो जाता है और जितना अभेद हुआ उतना ही स्पष्ट अनुभव होता है!

आपको आत्मा प्राप्त हुआ है, इसीलिए आपको सत्संग में पड़े रहना चाहिए। सत्संग यानी आत्मा का संग! यहाँ से फिर यदि कुसंग में घुसा कि यह रंग उतर जाएगा। कुसंग का ज़ोर इतना भारी है कि कुसंग में थोड़ी देर के लिए भी मत जाना और कृपालुदेव ने घर को कैसा कुसंग कहा है? उसे 'काजल कोठरी' कहा है! अब घर में रहना और असंग रहना, उसके लिए तो जागृति रखनी पड़ेगी। हमारे शब्दों की जागृति रखनी पड़ेगी। हमारी आज्ञा का पालन करे तभी घर में रहा जा सकेगा। इसके अलावा और कब असर नहीं होगा? जब स्पष्टवेदन हो जाएगा, तब असर नहीं होगा और स्पष्टवेदन कब होगा कि जब 'संसारी संग' 'प्रसंग' नहीं रहेगा तब! 'संसारी संग' में एतराज़ नहीं है, लेकिन 'प्रसंग' में एतराज़ है। तब तक 'स्पष्टवेदन' नहीं हो पाएगा। संग तो इस शरीर का है ही, लेकिन फिर प्रसंग तो, यदि अकेले ऐसे चैन से बैठे रहना तो भी नहीं रह पाए। हमें तो यह संग ही बोझ समान हो गया है तो फिर प्रसंग करने कहाँ जाएँ? यह संग ही अंदर से आवाज़ देता है, 'ढाई बज गए, अभी तक चाय नहीं आई!' है खुद असंग और पड़ा है संग-प्रसंग में।

[९]

लो व्रत का ट्रायल

ब्रह्मचर्य के बाद ही आत्मा का स्पष्ट अनुभव

प्रश्नकर्ता : मूल प्रश्न ऐसा है कि आप ऐसा कोई मानसिक रिलीज़ बताइए, जिससे लोग अवलंबन से मुक्त रह सकें। इसमें रहकर भी हल्के होकर रह पाएँ।

दादाश्री : हाँ, हम सभी को ऐसा ही बताते हैं। वह अनुभव किसे होता है कि जिन्हें स्त्री का संयोग नहीं है। उसे उसका अनुभव रहा करता है। अन्य सभी को अनुभव होता अवश्य है, लेकिन स्त्री संयोग के कारण उन्हें बाधा रहा करती है। एक ही बार का स्त्री संयोग हो जाए तो तीन दिनों तक तो मन को एकाग्र नहीं होने देता। इसलिए वह बाधक है। अत: अपने इन ब्रह्मचारियों को यह अनुभव जल्दी हो जाता है और उसी के आधार पर वे ब्रह्मचर्य पालन कर सकते हैं।

विषय तो एक प्रकार का रोग है।

प्रश्नकर्ता : बड़ा रोग, बहुत बड़ा, कैन्सर जैसा।

दादाश्री : बहुत बड़ा। कैन्सर तो अच्छा है बल्कि! वह तो एक ही जन्म के लिए मारता है। यह तो अनंत जन्म बिगाड़ देता है। यह तो, अनंत जन्मों से यही मार पड़ रही है न! आपको नहीं लगता कि यह रोग है? हें! मन में तो सभी समझते हैं, लेकिन क्या करें? निकल नहीं पा रहे हों तो? फिर भी यदि मैं विधि कर दूँ तो छूट जाएगा।

ब्रह्मचर्य को हम समझें तो वह कंट्रोलेबल हो सकता है। विषय में

जो दोष हैं, उसे जानेंगे, तो कंट्रोलेबल हो सकेगा।

एक भाई कहने लगे, 'दादाजी आनंद आत्मा का है या फिर विषय का आनंद है, वह समझ में नहीं आता, उसके लिए क्या करें? आनंद तो मुझे रहता है, लेकिन यह विषय का है या आत्मा का, उन दोनों में फर्क नहीं कर पाता मैं।' इस पर मैंने कहा, 'हम चाय और भूसा साथ में खाएँ, तो वह स्वाद चाय में से आ रहा है या भूसे में से आ रहा है, वह पता नहीं चलेगा। इसलिए दोनों में से एक बंद करना पड़ेगा। आत्मा का आनंद तो आप बंद नहीं कर सकते, अतः आप विषय का आनंद बंद करोगे तो आपको आत्मा के उस आनंद की अनुभूति होगी। मान लो आज से बंद नहीं हो सकता, हर एक की अपनी-अपनी शक्ति के अनुसार है, लेकिन वह बंद करोगे तब समझ में आएगा। वर्ना भूसा और चाय दोनों साथ-साथ खाते रहो तो उनमें से किसका स्वाद आ रहा है, वह क्या पता चलेगा?' तब फिर उस व्यक्ति ने मुझसे क्या कहा कि 'मैं कब से बंद करूँ?' मैंने कहा, 'हम अमरीका जाएँ उस दिन से तुझे बंद करना है और अमरीका से लौट आएँ उस दिन से शुरू।' चार ही महीनों के लिए। कोई हर्ज है इसमें? पता नहीं चलेगा चार महीनों में?

आपको पता चलता है कि यह आनंद कहाँ से आ रहा है? अभी भी लोग द्विधा में हैं। अभी भी इस ज्ञान के बाद आनंद तो बहुत आता ही है, लेकिन उसे ऐसा समझ में आ जाता है कि जैसा पहले आता था, यह वैसा ही है न! मैंने कहा, 'नहीं, वह तो तू जब अलग हो जाएगा, तब। भूसा और चाय एक साथ नहीं फाँकेगा, तब पता चलेगा तुझे कि या तो चाय पी ले, या फिर भूसा खा ले। तब फिर चाय के स्पेसिफिकेशन पता चलेंगे।'

विषय में दुःख है ऐसा तो समझते ही नहीं। नो टेन्शन जैसी स्थिति। इसका मतलब यह नहीं कि ज़बरदस्ती करना है, लेकिन कभी पाँच दिन ट्रायल लेने में हर्ज क्या है? दो दिन का है, अगर पाँच दिन नहीं हो सके तो। जानवर तो नौ महीने का लेते हैं लेकिन इन्सान दो दिन, चार दिन का तो ले सकता है? तो ट्रायल लो न!

यह तो हमने बहुत बार कहा हुआ है लेकिन क्या हो सकता है इसका? हम आपको बार-बार सावधान करते रहते हैं, लेकिन सँभलना उतना आसान नहीं है न! फिर भी यों ही प्रयोग करें न कि महीने में तीन दिन या, पाँच दिन और यदि एक सप्ताह के लिए करो तब तो खुद को अच्छी तरह पता चल जाएगा। सप्ताह के बीचवाले दिन तो इतना अधिक आनंद आएगा! आत्मा का सुख और स्वाद आएगा, कैसा सुख है वह!

नियम में आ जाए तो भी बहुत हो गया

खाना खाने को बिठाने के बाद चावल आने में ज़रा देर हो जाए तो क्या होगा? दाल में हाथ नहीं डाले तो सब्ज़ी में डालेगा, चटनी में डालेगा। नियम में नहीं रह पाता और जिन्हें इस नियम में रहना आ गया, उनका कल्याण हो जाएगा!

हम उपवास नहीं करते, लेकिन नियम में रह सकते हैं कि भाई इतना ही खाना है, फिर बंद। अब वे बनाकर लाते हैं ढोकले , हमें भाते हैं, जितना खाया उससे चार गुना खा सकते हैं, भाते भी हैं, लेकिन 'नहीं'।

प्रश्नकर्ता : तो वह नियम जागृति के आधार पर रहता है?

दादाश्री : जागृति तो होती ही है सभी को, लेकिन अंदर वह जो कि स्वाद से रंग चुका है न, वहाँ कंट्रोल नहीं रह सकता। मुश्किल है कंट्रोल में रहना। वह खुद जितना आत्मारूप होता जाएगा उतना कंट्रोल आता जाएगा।

कुछ लोग कहते हैं, 'यों मुझसे विषय नहीं छूट पाएगा।' मैं कहता हूँ, 'इसके लिए क्यों पागलपन कर रहा है, थोड़ा-थोड़ा नियम ले न! उस नियम में, फिर नियम छोड़ना नहीं।' इस काल में नियम नहीं ले, वह तो चलेगा ही नहीं न! थोड़े होल (hole) तो रखने ही पड़ेंगे। नहीं रखने पड़ेंगे?

प्रश्नकर्ता : रखने पड़ेंगे।

दादाश्री : ब्लेक होल कहते हैं न, उन्हें। यों तो, निरा सच्चा बनकर

बैठेगा, तो मार खा-खाकर मर जाएगा और फिर झूठा बन जाएगा। एकबार झूठा हो गया तो क्या झूठा बन जाए? नहीं। वही नियम में रखेगा। मैंने तुझे ब्रह्मचर्य पालन करने को कहा हो और ब्रह्मचर्य छूट जाए तो क्या बिल्कुल छोड़ देगा? नहीं, फिर से उस नियम पर आ जाना। छः महीने तक पालन नहीं कर पाते तो महीने में दो दिन रखना, चलो। 'बाकी के सभी दिन हमारा ब्रह्मचर्य है', हमारे पास से नियम करवाकर जाना फिर। ऐसा सुंदर रास्ता निकाल दिया है, मैंने यह सारा!

प्रश्नकर्ता : आपने हर एक चीज़ में या किसी भी व्यावहारिक कार्य में भी ऐसा सटीक हल दिया है।

दादाश्री : हल सभी सुंदर! अभी तक तो, इन सभी को ब्रह्मचारी किसी ने कहा ही नहीं, विवाहित है न! इसीलिए मैंने पुस्तक में लिखा कि आप विवाहित हो, इसलिए मैं आपको भाव ब्रह्मचर्यवाला कहता हूँ। कुदरत को मना करना होगा तो मना करेगी, लेकिन मैं तो कहता हूँ न! मेरी ज़िम्मेदारी पर! तब पूछते हैं कि, 'हम ब्रह्मचारी कैसे कहलाएँगे?' मैंने कहा, 'जो अन्य स्त्री की ओर नहीं देखता और अन्य स्त्री के बारे में सोचता तक नहीं, वह ब्रह्मचारी है! जो अन्य स्त्री की ओर नहीं देखता और यदि आकर्षण हो जाए तो प्रतिक्रमण करता है, वह ब्रह्मचारी है।' एक पत्नीव्रत, उसे इस काल में हमने ब्रह्मचर्य कहा है। बोलो, तीर्थंकरों का जोखिम लेकर बोल रहे हैं। मेरी तरह बोला नहीं जा सकता, एक अक्षर भी नहीं बोला जा सकता, पुराना नियम सुधारकर नया नियम स्थापित नहीं कर सकते, लेकिन फिर भी मैं ज़िम्मेदारी लेता हूँ। क्योंकि इस काल में एक पत्नीव्रत रखना और दृष्टि नहीं बिगाड़ना, वह तो बहुत बड़ी चीज़ है। साधुओं ने शादी नहीं की, साधुओं ने ताला लगा दिया है। उसमें क्या नया पराक्रम किया? पराक्रम तो हमने, खुले तालेवालों ने किया, ऐसा कहा जाएगा। यह आपको समझ में आता है? किसने पराक्रम दिखाया कहा जाएगा? खुले तालेवालों ने। वह भी, यदि हम ज्ञान दें, तब। वर्ना अन्य किसी से नहीं हो सकता, इम्पोसिबल!

हर तरह की छूट देने को तैयार हूँ आपको तो, किसी भी नियम

में आना चाहो तो हर तरह की छूट देने को तैयार हूँ। क्योंकि नियम ही मोक्ष में ले जाता है। यम यानी क्या? 'ब्रह्मचर्य पालन करने का ज्ञान जानना' वह यम कहलाता है, 'सत्य बोलना चाहिए', ऐसा जानना, वह यम कहलाता है, 'चोरी नहीं करनी चाहिए' ऐसा जानना, वह यम कहलाता है। 'परिग्रह नहीं करना चाहिए', वह यम कहलाता है। 'हिंसा नहीं करनी चाहिए' वह यम कहलाता है। इतना जाना, यानी आप यम में आ गए। जानने के बाद तय किया कि कोई नियम रखना चाहिए, उस घड़ी आप नियम में आए और नियम रखने के बाद आप उसका 'एक्ज़ेक्ट' पालन करो, तब आप संयम में आ गए।

गृहस्थाश्रम में ब्रह्मचर्य

कौन-कौन से चार आश्रम रखे गए थे?

प्रश्नकर्ता : ब्रह्मचर्याश्रम, गृहस्थाश्रम, वानप्रस्थाश्रम और संन्यस्ताश्रम, और फिर हर एक पच्चीस-पच्चीस साल का।

दादाश्री : यह तो, जब सौ साल तक जीते थे तब की बात है। यह व्यवस्था कितनी सुंदर है! और वह व्यवस्था शब्द क्या करता है? वह मन पर इफेक्ट करता है, इसलिए मन उस ओर मुड़ जाता है। अभी गवर्नमेन्ट ऑर्डर जारी करे कि 'नौ बजे बाद सभी को सो जाना है', ऐसा सख़्त ऑर्डर जारी करे दो-चार बार, तो फिर मन उस ओर मुड़ जाएगा। मन का स्वभाव है कि 'ऑर्डर क्या है?' मन डिस्ऑर्डरवाला नहीं है। ऑर्डर में होना चाहिए।

प्रश्नकर्ता : सांसारिक जीवन में ब्रह्मचर्य का पालन किया जा सकता है?

दादाश्री : हाँ, बहुत अच्छी तरह से पालन करनेवाले होते हैं। पहले ऋषि-मुनि ब्रह्मचर्य का पालन करते थे, स्त्री और पुरुष दोनों। विवाहित लोग भी पालन करते हैं। दोनों साथ में रहते हैं, वे सब भी पालन करते हैं। हमने कईयों को विधि की है और ऐसा ब्रह्मचर्यव्रत भी दिया है!

प्रश्नकर्ता : हाँ, लेकिन दोनों एक होकर आएँ तभी संभव हो सकेगा।

दादाश्री : हाँ।

प्रश्नकर्ता : लेकिन यदि पुरुष की इच्छा ब्रह्मचर्य पालन की हो और स्त्री की नहीं हो तो क्या करना चाहिए?

दादाश्री : नहीं हो तो उसे क्या परेशानी है? समझा देना।

प्रश्नकर्ता : कैसे समझाऊँ?

दादाश्री : वह तो समझाते-समझाते रास्ते पर आ जाएगा, धीरे-धीरे। एकदम से बंद नहीं होगा। समझाते-समझाते। दोनों समाधानपूर्वक मार्ग अपनाओ न! इसमें क्या नुकसान है, ऐसी सब बातें करना और ऐसे विचार भी करना।

प्रश्नकर्ता : पुरुष ने ज्ञान लिया है लेकिन स्त्री ने ज्ञान नहीं लिया है। पुरुष को मालूम है कि यह ब्रह्मचर्य.....

दादाश्री : वह नहीं चलेगा। स्त्री को भी ज्ञान दिलवाना चाहिए। शादी क्यों की थी?

प्रश्नकर्ता : लेकिन पुरुष की भावना होते हुए भी स्त्री को ज्ञान दिलवाना संभव नहीं हो पाता।

दादाश्री : ऐसा नहीं हो पाए तो संयोगों को समझना! तब तक संयोगों के आधार पर रहना पड़ेगा न, थोड़े समय तक!

बीज में से बाली अगले जन्म में

प्रश्नकर्ता : अब्रह्मचर्य का माल भरा हुआ हो और खुद, उसे बदलने के प्रयत्न करे, यानी जो पूरा पुरुषार्थ करे तो उसका फल आएगा न?

दादाश्री : उसका फल अगले जन्म में आएगा। अगले जन्म में

उसके फलस्वरूप बिना मेहनत के ब्रह्मचर्य प्राप्त होगा। ब्रह्मचर्य मिल जाएगा, उसे मेहनत नहीं करनी पड़ेगी। वहाँ बदलना नहीं पड़ेगा। इस जन्म में जितना पालन किया जा सके, उतना इस जन्म में शरीर अच्छा रहेगा, मन अच्छा रहेगा। वर्ना मन ढीला पड़ जाएगा। मन स्वस्थ रहे वह फ़ायदा कम नहीं है न? और सभी फाइलें दूर रहेंगी न!

प्रश्नकर्ता : ब्रह्मचर्य की भावना करेंगे तो फिर अमल में आएगी न?

दादाश्री : हाँ, भावना, वही बीज है और अमल में आना, वह परिणाम है। आज भले ही अमल में नहीं आया, यानी बीज नहीं डाला था। इसलिए अब बीज डालो तो फिर अमल में आएगा। कभी सुना ही नहीं था, तो बीज डालता कैसे? ब्रह्मचर्य जैसी चीज़ ही नहीं सुनी थी न!

अरे! यह तो दुरुपयोग हुआ

छः-बारह महीने स्त्री विषय से दूर रहे न, तभी भान होगा, यह तो भान ही नहीं है। सारे दिन उसका नशा चढ़ता रहता है और नशे में ही घूमता रहता है। इसलिए महात्माओं से कहते हैं कि छः-बारह महीने के लिए कुछ करो न, कुछ। आपको क्या परेशानी है? थोड़े-बहुत महात्माओं ने ऐसा मन में तय किया और व्रत को ट्रायल में भी लिया, सभी ऐसा करें तो काम हो जाएगा न! आज यह मोक्ष का साधन मिला है, अन्य सबकुछ खाने-पीने की छूट है। सिर्फ यही एक चीज़ नहीं। उसका भगवान ने वर्णन किया है न! वह वर्णन यदि करने जाए न, तो पूरा वर्णन सुनते ही मर जाए मनुष्य।

जानवर अच्छे हैं बल्कि! उनमें कोई तो नियम-बाधा होती है। ये तो जानवर ही देख लो न! क्योंकि अभी भी नशे में ही रहा करते हैं। अरे! परसों दो-चार-पाँच महात्माओं ने बताया तो वह बात सुनकर मैं तो दंग रह गया कि, 'ऐसे भी लोग हैं अभी?' कैसे शोभा देगा आपको? इसके अलावा बाकी कुछ भी करो न, सभी विषयों की छूट है। यह विषय बंधनकर्ता है। सामने फाइल है, क्लेम है यह तो। तीस सालों तक सारे

फोर्स हों, तो ठीक है और यदि फोर्स हो, फिर भी जिसका निश्चय दृढ़ है उसे क्या होनेवाला है? सब खाने-पीने की छूट है, फिर भी यदि खाने-पीने में सावधानी नहीं रखोगे तो वह नुकसान करेगा फिर। उसका फोर्स वहाँ पहुँचेगा न!

मोक्ष में जाना हो तो विषय निकालना पड़ेगा। लगभग हज़ार महात्मा हैं, जिन्होंने सालभर के लिए व्रत लिया है। 'सालभर के लिए मुझे व्रत दीजिए' कहते हैं। सालभर में तो उन्हें पता चल जाता है।

अब्रह्मचर्य, वह अनिश्चय है। जो अनिश्चय है, वह उदयाधीन नहीं है। यह तो सब भानरहित है, ये जानवरों की तरह जी रहे हैं। स्त्रियों को भी यह समझना चाहिए और पुरुषों को भी समझना चाहिए। मोक्ष में जाना हो तो, सुख तो मोक्ष में है। और जब विषय नहीं होगा, उन दिनों का तू सुख तो देखना! एक साल के लिए बंद करके देखो! अनुभव करोगे, तो हो पाएगा। परसों चार-पाँच लोग आए थे, उनके साथ मेरी बात हुई तो सुनकर मुझे तो कंपकंपी छूट गई कि ऐसे भी लोग हैं अभी तक? मैं तो समझता था कि विषय के बारे में समझदार हो गए होंगे! इसके बजाय और ज़्यादा विषयी हो गए। ये तो कौन पूछनेवाला है? अब तो दादाजी हैं न सिर पर! अरे! ऐसा किया? मैंने अन्य सारी छूट दी है। अन्य चार विषय, आँख वगैरह के करो, लेकिन यह नहीं। इसमें सामने क्लेमवाला है, एग्रीमेन्टवाला है, भयंकर। वह जहाँ जाएगी वहाँ ले जाएगी। मैंने तो चार-पाँच लोगों से पूछा तो स्तब्ध रह गया। मैंने कहा, 'भैया ऐसी गड़बड़ तो नहीं चलेगी। अनिश्चय है यह तो। उसे तो निकालना ही पड़ेगा।' प्रथम ब्रह्मचर्य तो चाहिए। यों निश्चय से तो आप ब्रह्मचारी ही हो, लेकिन व्यवहार से नहीं होना चाहिए? व्यवहार से होना चाहिए या नहीं होना चाहिए?

बाप ने अनुसरण किया बेटे का

ऐसी बात करने में आबरू नहीं चली जाती?

प्रश्नकर्ता : नहीं, आबरू नहीं जाती, लेकिन रोग निकल जाता है।

दादाश्री : रोग निकल जाता है। नहीं? थोड़ा निकला?

प्रश्नकर्ता : बहुत।

दादाश्री : तो ठीक है। रोग का और आपका कोई लेना-देना है कोई? गुरुपूर्णिमा के बाद आओ, ब्रह्मचर्यव्रत दे देंगे, तो देखना कैसा मज़ा रहेगा। सुख उसके बाद ही आएगा! एक भाई मुझ से क्या कहने लगे थे? मेरे पुत्रों को मैंने आनंद में ही देखा है, इसलिए मुझे ब्रह्मचर्यव्रत लेना है। लेकिन लेने के बाद तो देखो, क्या आनंद रहता है। इसलिए एक्सटेन्शन करवाते रहते हैं, बाद में! इसलिए फिर आनंद रहता है अच्छा रहता है! पहले तो डर लगता है कि, क्या होगा, क्या होगा? क्या होनेवाला है लेकिन? इस गंदगी से दूर रहकर शुद्धात्मा देखें, तो बहुत शांति हो जाएगी!

अपना ज्ञान हो तभी ब्रह्मचर्य पालन किया जा सकता है, वर्ना पालन नहीं कर सकते। मन बिगड़ता ही रहता है। दृष्टि बिगड़ती ही रहती है। यह तो अपनी दृष्टि में शुद्धात्मा दिखाई देंगे न, तो कोई विचार ही नहीं आएगा, ज़रूरत ही नहीं पड़ेगी। अंदर(भीतर) से ऐसा आनंद रहेगा। वे भाई कह रहे थे न कि, 'बहुत आनंद हुआ!'

ये सभी, जिन्होंने ब्रह्मचर्यव्रत लिया है न, अभी तीस-तीस साल की उम्र के लोग आते हैं, दोनों साथ में और कहते हैं कि, 'हमने ब्रह्मचर्य की पुस्तक पढ़ी है और अब हमें ब्रह्मचर्यव्रत लेना है! ऐसे सब दुःख? मैंने कहा, 'आप यह नहीं जानते थे?' तब कहा, 'नहीं, किसी ने बताया ही नहीं था न?' सभी ने बताया कि सच्चा सुख इसी में है, इसलिए हमने भी मान लिया। यह तो जब आपने बताया, तब हमारे आत्मा ने कबूल किया। फिर एक ही स्ट्रोक में तो कितने ही जीव मर जाते हैं। उसमें क्या सुख मिलनेवाला है, इतने जीवों को मारकर? और सुख तो उसमें है ही नहीं।

बाहर के लोगों का ज्ञानसहित नहीं होता न! ज्ञानसहित ब्रह्मचर्य हो तो बहुत अच्छा असर पड़ेगा! बाँधकर उपवास करवाएँ, उसके बजाय समझकर उपवास किया जाए तो उसकी तो बात ही अलग है न!

तय किया तभी से ऊर्ध्वीकरण

शील के ऊर्ध्वीकरण की शुरूआत करनी हो तो हो सकता है। ब्रह्मचर्यव्रत लेकर तय किया, वहीं से ऊर्ध्वीकरण। कितने आनंद में रहते हैं! यह तो, अपने आत्मा का आनंद रहता ही नहीं। अरे, इसी में खो जाते हैं। चेहरे भी उतरे हुए रहते हैं। पूरा दिन लालच और सिर्फ लालच में! अब इतने साल बीत गए, क्या समझना नहीं चाहिए? अब सावधान रहकर चलना अच्छा। और वह कंट्रोल तो रखना ही पड़ेगा। कंट्रोल नहीं रखे तो इन्सान के कंट्रोल करने के विचार भी चले जाते हैं फिर। सबकुछ खुल जाता है, वह सब। इसलिए कई लोग तो कंट्रोल रखकर, यदि दोष हो जाएँ, तो उन दोषों की माफ़ी माँग लेते हैं, बस। लेकिन यदि कंट्रोल ही चला जाए तो फिर कुछ रहेगा ही नहीं। इसलिए अभी साल-दो साल आप अलग रहो। आप अभ्यास करके देखो कि यदि उससे कोई फ़ायदा हो रहा हो तो, वर्ना फिर इस प्रकार से ले लेना। और फिर हर एक का तरीका अलग होता है। सबके लिए एक ही नियम नहीं है। कलियुग में यह रास्ता उत्तम है, इस दूषमकाल में। क्योंकि दादाजी याद आते हैं और फिर दादा का स्मरण रहता है न! इसलिए किसी को भय ही नहीं है न! जब घर में भी कोई कहनेवाला हो तो बच्चे अच्छे रहते हैं या नहीं रहते?

प्रश्नकर्ता : एकदम।

दादाश्री : फिर कहनेवाला भले ही दो दिन दूसरे शहर गया हो लेकिन डर रहता है कि आएँगे तब क्या कहेंगे? उसके जैसी बात है! इसलिए अभी आप अपने आप ही देखो। आपके विचार अच्छे हैं इसीलिए छुड़वा रहे हैं। आपको खुद को ही भावना नहीं है वैसी, मोहरूपी भाव नहीं है, बल्कि यह तो दूसरा दबावरूपी भाव है। मोह छूट चुका है।

ऐसे कई दंपति आए थे। क्योंकि यह तो, सिर्फ अपनी पुस्तक ही पढ़ें न, उसे पढ़कर ही वैराग्य उत्पन्न हो जाता है, तो विषय अच्छा ही नहीं लगता, विषय ही अच्छा नहीं लगता। फिर वे लोग छोटी उम्र में ही

नियम ले लेते हैं। तब मैंने कहा, 'आप मुसीबत में आ जाओगे।' तब कहते हैं, 'नहीं अच्छा ही नहीं लगता अब।' दोनों राज़ी-खुशी नियम लेते हैं। फिर भी दो-तीन बार भूल हो जाती है। क्योंकि दूषमकाल के जीव हैं न! चारों ओर से घिरे हुए जीव। कैसे सारी रात नींद आए ऐसे? ऐसा है यह! इन सौ घरों में से दो घरों में ऐसे लोग होंगे कि क्लेश नहीं होता होगा। लेकिन उन्हें भी परेशानी तो होती ही है न, पड़ोसवाले लड़ रहे हों, तो उन्हें सुनते तो रहना पड़ता है न! यानी यह तो निरा दूषमकाल है। यह तो ज्ञानीपुरुष के पास आए, इसलिए समझदार हो गए। वर्ना समझदार थे ही कहाँ? उनकी पागलों में भी गिनती नहीं की जा सकती थी। पागल भी कुछ नियमवाले होते हैं। इनका तो नियम ही नहीं है किसी तरह का?

यहीं पर 'बिवेयर' के लगे हैं बोर्ड

यह ज्ञान मिलने के बाद अब मन चोखा (खरा, अच्छा, शुद्ध, साफ) हो गया है। नहीं? इसलिए आज से ही सोचना भाईयों! बहुत ही सोचने जैसा है। हम कभी किसी से कुछ कहते नहीं हैं। हमने कभी उलाहना ही नहीं दिया और उलाहना देने की हमें फुरसत ही नहीं है। यह तो आपको समझा रहे हैं कि भूल कहाँ हो रही है, प्रगति क्यों नहीं हो रही? ज़बरदस्त पुरुषार्थ हो सकता है, ज्ञान दिया है इसलिए। वर्ना बात ही नहीं की जा सकती। वर्ना मनुष्य की शक्ति ही क्या है धारण करने की? यह बात थोड़ी बहुत भी अच्छी लगी हो तो हाथ उठाओ। देखते हैं, कहना पड़ेगा यह तो, शूरवीर हैं ये सभी। मैंने सोचा कि अच्छा नहीं लगा होगा। अच्छा लगे बगैर तो हाथ ऊपर नहीं उठाता न कोई! मेरी बात पसंद है, यह बात तो पक्की है। यानी विषयवाली बात चुभती है, वह बात भी पक्की है न! अब धीरे-धीरे इसके लिए उपाय करना। यह चेतावनी दे रहा हूँ। बिवेयर, बिवेयर के बोर्ड लगाते हैं न, 'बिवेयर ऑफ थीफ' उसी तरह यह मैंने 'बिवेयर' कहा। 'सावधान, सावधान।' अभी जब तक ज़िंदा हैं तब तक हो सकेगा। आख़िरी दस साल अच्छे बीत गए तो भी बहुत हो गया। ज़्यादा नहीं निकाल पाएँ तो भी आखिरी दस-पंद्रह-बीस साल अच्छे निकलें तो भी बहुत हो गया। अभी तक जो बीत गए, सो घाटा हुआ और अब 'दादा'

की आज्ञा से शुरू। ज़्यादा नहीं हो पाए तो सालभर के लिए प्रयोग करके देखो, ट्रायल। मैं ट्रायल ही देता हूँ। क्योंकि फिर शायद बेचारों से कुछ भूल हो जाए तो! बाद में फिर से 'एक्सटेन्शन' करवाते रहना।

ऐसी कोई जल्दी नहीं है, अभी भी सोच-समझकर आगे बढ़ना। यह कुएँ में छलाँग लगाने जैसी चीज़ नहीं है। सोचकर करना, ज़रा ज़्यादा सोचना। वह भी सोचना, यह तो बिना कुछ सोचे ऐसे ही पड़े रहना इसका अर्थ क्या है? कर्ज़ बढ़ता ही जा रहा है निरंतर। सोचो। मैंने आपको छूट दे रखी है, ऐसा नहीं है। यह कुछ राह पर आ जाए तो अच्छा है। यह ज्ञान फिर से मिलेगा नहीं, ऐसा! आत्मा अलग हो गया है, हंड्रेड परसेन्ट और रात-दिन भीतर गवाही देता है और चेतावनी देता ही रहता है। क्या वह कम गवाही कहलाएगी? इसलिए सावधान हो जाओ अब! बहुत दिन गए!

प्रश्नकर्ता : हम दोनों की थोड़ी-थोड़ी भावना हो गई है।

दादाश्री : बहुत अच्छा। यह तो निरी गंदगी है। निरा दु:ख। देखने से बदबू और छूने से भी बदबू। सभी में बदबू, बदबू और बदबू। संडास ही है न वह तो! गंदगी पसंद नहीं है, लेकिन कोई चारा ही नहीं है न! भाव करने में हर्ज नहीं है।

प्रश्नकर्ता : लेकिन उनकी इच्छा ऐसी है कि दादाजी से माँगे बगैर छूट जाना चाहिए।

दादाश्री : वह उत्तम है। नुकसान उठाने की आदत हो गई हो तो वह छूट जाएगी या नहीं छूट जाएगी, मुझे बताए बगैर? या फिर मुझसे पूछने से ही छूटेगी?

प्रश्नकर्ता : छूट जाएगी।

दादाश्री : तो, यह सब नुकसान उठाना छोड़ दो तो अच्छा। मुझे बताने की क्या ज़रूरत है?

अनुभव करने के लिए, हम आपसे छः महीनों का उपवास करने को कहते हैं और फिर सालभर के लिए एक्सटेन्शन करवा लेते हैं ये लोग तो।

प्रश्नकर्ता : री-न्यू (नवीनीकरण)।

दादाश्री : हाँ, हर बार एक साल का व्रत देता हूँ। मन यदि कमज़ोर पड़ जाए तो बीच में दो महीने की छूट देता हूँ और बाद में फिर से विधि कर देता हूँ। कमज़ोर हो जाता है ऐसे! कोई जान-बूझकर कमज़ोर नहीं करता न! लेकिन मुश्किल खड़ी हो तो क्या होगा इन्सान का?

प्रश्नकर्ता : ब्रह्मचर्य की विधि करते समय क्या बोलना चाहिए मुझे?

दादाश्री : कुछ नहीं। तू 'शुद्धात्मा' बोलना और बाकी सब मुझे बोलना है।

प्रश्नकर्ता : मुझे अखंड ब्रह्मचर्य पालन करने की शक्ति दीजिए, निरंतर निर्विकार रहने की शक्ति दीजिए।

दादाश्री : वह सब नहीं, वह सब मुझे करना है। तुझे तो भावना हुई, वह प्रकट की तूने कि मुझे ब्रह्मचर्य का पालन करना है, मुझे शक्ति दीजिए, तो हम दे देते हैं। 'मैं शुद्धात्मा हूँ' ऐसे बोलते रहना। ब्रह्मचर्यव्रत में ऐसा सुख है, ऐसा देखा?

प्रश्नकर्ता : ब्रह्मचर्य तो दुष्कर व्रत लेने जैसा है न?

दादाश्री : ब्रह्मचर्य दुष्कर तो है लेकिन वह ऐसे पद्धतिपूर्वक होगा न तो ब्रह्मचर्य सुंदर रहेगा। वह तो ऐसे ताले लगाने हों तो ब्रह्मचर्य दुष्कर है। मुँह पर ताला लगा दें तो कुछ खाया ही नहीं जाएगा न, स्वाद आएगा ही कैसे? वह काम का नहीं है, उसका अर्थ तो यह कि मन बिगड़ जाता है। खुला रखकर ज्ञान से खत्म करना चाहिए। ब्रह्मतर्यव्रत का ज्ञान से पालन करना चाहिए।

विचार ही बंद, व्रत के पश्चात्

इन्हें तो, व्रत लेने के बाद जैसे चमत्कार हो गया, इसके बाद से बहुत सुंदर रहता है। उसका कारण यह है कि, 'सुख कहाँ से आता है'

इसका भान नहीं था और व्रत लेने के बाद जो सुख आता है न, उसके बाद मन में विषय के विचार आने ही बंद हो जाते हैं। विषय अच्छा नहीं लगता। मनुष्य को सुख ही चाहिए। यदि वह सुख मिल रहा हो तो जान-बूझकर कीचड़ में हाथ डालने को कोई तैयार नहीं होता। लेकिन ये बाहर ताप लगता है। इसलिए कीचड़ में हाथ डालते हैं, ठंडक के लिए। वर्ना कीचड़ में कोई हाथ डालता होगा? कौन डालेगा? लेकिन क्या हो? बाहर गर्मी लगती है। अब आपको एकबार अनुभव से समझ में आ गया कि इस ज्ञान से विषय के बिना भी बहुत सुंदर सुख रहता है। इसलिए आपको फिर विषय अच्छे नहीं लगते। यह ज्ञान ऐसा है कि सभी विषय अपने आप ही छूट जाते हैं। झड़ जाते हैं सभी, लेकिन अनुभव कर-करके वह (ब्रह्मचर्य) करने से सुख ही मिलता है और सुख मिल गया कि फिर कुछ रहा ही नहीं।

विषय में तो बहुत दु:ख और जलन है। जब कोई ज्ञान नहीं हो, समकित नहीं हो और जलन हो तभी जलनवाला व्यक्ति विषय में हाथ डालता है, वर्ना विषय में तो हाथ डालेगा ही कौन? अभी तो हाथ डालने की इच्छा नहीं हों, फिर भी डालना पड़ता है। क्योंकि डिस्चार्ज स्वरूप से है। लेकिन वह भी, कोई लेनदार को पैसे देता है तब क्या बहुत खुश होकर देता है? उसी तरह विषय का आराधन करना, उस दृष्टि से। वह शौक़ की चीज़ नहीं है। लेनदार आए और उसे पैसे दें, तो वह शौक़ की चीज़ नहीं है।

मैंने चौदह साल से देखा है, दोनों सुंदर ब्रह्मचर्य पालन कर रहे हैं। दोनों साथ-साथ घूमते हैं चौदह साल से। पूछा तब कहते हैं, 'ज़रा सा भी दाग़ नहीं है।' शुरूआत में चार साल ज़रा हिचकोले खा रहा था, फिर रास्ते पर आ गया। प्रतिक्रमण से सुधरता है न। प्रतिक्रमण से धोते रहने से रास्ते पर आ जाता है।

प्रश्नकर्ता : यदि शादीशुदा ब्रह्मचारी हो, तो वह वेल टेस्टेड होता है न!

दादाश्री : टेस्टेड होता है। अविवाहित भी टेस्टेड (प्रमाणित) तो

होते हैं। उसमें शंका नहीं है। लेकिन दो-तीन साल अभ्यास करता है, बाद में ब्रह्मचर्य टेस्टेड! क्योंकि प्रतिक्रमण का हथियार शक्तिशाली है न! प्रतिक्रमण का हथियार इस्तेमाल करता रहे तो ऐसे करते-करते शुद्ध हो जाएगा। शुद्धिकरण में प्रवेश किया कि शुद्ध हो जाएगा।

अभिप्राय तो ब्रह्मचर्य का ही

ब्रह्मचर्य, वह ज्ञानीपुरुष की आज्ञासहित होना चाहिए। उस आनंद की तो बात ही अलग है न! आत्मा प्राप्त होने के बाद भीतर से आनंद आता ही रहता है। लेकिन उस आनंद को रोकता कौन है? तब कहे कि संसार का हिस्सा उसे खा जाता है। वह हमें आनंद नहीं भोगने देता। विषय की स्मृति बंद हो जाए तो उसके बाद अपार परमानंद रहता है।

ब्रह्मचर्य और अब्रह्मचर्य का जिन्हें अभिप्राय नहीं है, उसे ब्रह्मचर्यव्रत बर्तता है, ऐसा कहा जाएगा। आत्मा में निरंतर रहना, वही हमारा ब्रह्मचर्य है। फिर भी, हम इस बाहरी ब्रह्मचर्य को स्वीकार नहीं करते, ऐसा नहीं है। आप संसारी हो, इसलिए मुझे कहना पड़ता है कि अब्रह्मचर्य में एतराज़ नहीं है लेकिन अब्रह्मचर्य का अभिप्राय तो होना ही नहीं चाहिए। अभिप्राय तो ब्रह्मचर्य का ही होना चाहिए। अब्रह्मचर्य, वह आपकी *निकाली* 'फाइल' है। लेकिन अभी तक उसके लिए अभिप्राय है और उस अभिप्राय से 'जैसा है वैसा' आरपार नहीं देख पाते। मुक्त आनंद का अनुभव नहीं हो पाता, क्योंकि अभिप्राय का आवरण बाधा डालता है। अभिप्राय तो ब्रह्मचर्य का ही रखना चाहिए। व्रत किसे कहते हैं? बरते उसे व्रत कहते हैं। ब्रह्मचर्य महाव्रत बरता किसे कहेंगे? कि जिसे अब्रह्मचर्य याद ही नहीं आए, उसे ब्रह्मचर्य महाव्रत बरत रहा है, ऐसा कहेंगे।

[१०]

आलोचना से ही जोखिम टले व्रतभंग के

व्रत भंग से मिथ्यात्व की जीत

भगवान ने क्या कहा है कि व्रत तो यदि तू खुद तोड़ेगा तभी टूटेगा, कोई क्या तुड़वा सकता है? ऐसे किसी के तुड़वाने से व्रत टूट नहीं जाता। व्रत लेने के बाद यदि व्रत का भंग हो तो आत्मा भी चला जाता है। व्रत लेने के बाद तेरा व्रत भंग हुआ है और उस जोखिमदारी के ये सारे परिणाम आए हैं। वे तो तुझे सहन करने ही पड़ेंगे। व्रत लिया हो तो आप उसका भंग नहीं कर सकते और भंग हो जाए तो बता देना चाहिए कि 'अब मेरा चलन खत्म हो गया है।'

प्रश्नकर्ता : मैंने आपसे बात की थी कि अब वापस व्रत लेना पड़ेगा।

दादाश्री : तूने बात की थी लेकिन कुछ समय बाद वे सब बातें हुई थीं। अतः उसमें तो बहुत जोखिम है। उसके कारण तो सारा लश्कर सजीवन हो गया। मिथ्यात्व लश्कर चारों ओर से सजीवन हो गया, जो अब सवार हो गया है। इसलिए अभी थोड़े टाइम दंड भोगना। फिर से वापस सब सेट करना पड़ेगा। दंड में तो क्या है? अब रविवार के दिन एक ही बार दूध पीकर उपवास करना और उस दिन ज़्यादा समय तक सामायिक करना, प्रतिक्रमण और पश्चाताप करना।

प्रश्नकर्ता : उल्टे रास्ते इतने ज़ोर से फोर्स आता है, और सभी तरह के विचार भी आते हैं। सभी तरह की ट्रिक्स, हर तरह का सामने लाकर रख देता है।

दादाश्री : यदि थोड़े और समय तक भूल नहीं बताई होती, अभी और ऐसे ही चलने दिया होता तो सारा ज्ञान उखाड़कर फेंक दिया होता! लेकिन तूने थोड़े समय में ही बता दिया इसलिए पकड़ में आ गया। वर्ना वह तो फिर हुल्लड़ मचा देता। इसके बजाय तो व्रत नहीं लेना चाहिए और यदि व्रत लेना हो तो पूर्ण रूप से पालन करना! जब ऐसा लगे कि पालन नहीं हो पाएगा, तब हमें सबकुछ बता देना। यह तो, एक देश में रहकर और विरोधी देश को मदद करें, उस जैसी बात है सारी!

विषय घटाने के लिए तो आहार बारह आने कम कर देना चाहिए, पहले स्थूल दबाव कम कर देना चाहिए। फिर सूक्ष्म दबाव कम करना। स्थूल दबाव कम हो जाए उसके बाद सूक्ष्म दबाव कम हो सकते हैं। क्योंकि स्थूल में ही यदि दबाव कम नहीं होगा, तो सूक्ष्म में क्या होगा?

ये विचार टिकनेवाले नहीं है, क्या तुझे ऐसा लगता है? पहले तेरे जो विचार थे, तब तुझे ऐसा ही लगता था कि अब मेरे ये विचार हटनेवाले नहीं हैं, लेकिन मैं यह जानता हूँ कि यही विचार वापस बदलेंगे। हमें अभी तेरे विचार टेम्परेरी लगते हैं! तू इसकी सेटिंग करता रहता है, लेकिन तेरी यह मेहनत बेकार जाएगी। उन दिनों तेरे विचार बहुत स्ट्रोंग थे, लेकिन वे वापस बदल गए! क्योंकि जैसा माल भरा हुआ है, वैसा निकलता रहता है।

प्रश्नकर्ता : भरे हुए माल को तो अब देखते रहते हैं, लेकिन फिर से नये भाव करते रहें तो? आप ज्ञानीपुरुष हैं इसलिए देख सकते हैं कि क्या हो रहा है, लेकिन मुझे ऐसा विश्वास नहीं हो रहा कि मेरे विचार बदलेंगे!

दादाश्री : नहीं-नहीं, वह तो पहले भी तुझे ऐसा लगता था कि मेरे विचार बदलनेवाले नहीं है। तूने मुझे बताया भी था कि, 'अब यह ब्रह्मचर्य ही चाहिए, इसके सिवा और कुछ भी नहीं!' लेकिन फिर बदल गया! उन दिनों तुझमें शारीरिक विचित्रता थी, उसने तुझे विषय रोकने में मदद की थी। शरीर ही ऐसा था कि विषय के प्रति तुझे वैराग्य आए और विषय अच्छा नहीं लगे। इस समय शरीर में बदलाव आ गया है इसलिए वापस

उसी ओर मुड़ गया। जैसे ही शरीर में फोर्स (शक्ति) आता है, ताक़त आती है तो मन फिर से विषय की ओर दौड़ता है। इसके बावजूद भी यह शरीर अलग चीज़ है और हम अलग हैं।

प्रश्नकर्ता : भाव करनेवाले हम हैं न? शरीर नहीं है न? निश्चय करनेवाला विभाग खुद का है न? तब फिर विषय की ओर क्यों चले जाते हैं?

दादाश्री : अभी किसी व्यक्ति को बहुत विषय-विकारी विचार आते हों और यदि वह तीन महीनों तक बीमार रहे तो उसके वे विचार बिल्कुल खत्म हो जाएँगे। बल्कि ऐसा कहेगा, 'अब यह कभी भी नहीं चाहिए।' अतः यह सब शरीर पर ही निर्भर करता है!

प्रश्नकर्ता : आपके ज्ञान से पहले मनोबल डेवेलप ही नहीं हुआ था न! इस समय अब मनोबल उत्पन्न होता जा रहा है।

दादाश्री : वह उत्पन्न होगा, लेकिन मनोबल इस बॉडी पर निर्भर करता है, 'डिपेन्डन्स अपॉन बॉडी!' मनुष्य का मनोबल पूर्ण रूप से स्वतंत्र नहीं है। पूर्ण रूप से (पूर्णतः) स्वतंत्र मनोबल अलग चीज़ है। बिल्कुल 'वीक बॉडी' होने पर भी मनोबल तो वही का वही रहता है।

प्रश्नकर्ता : लेकिन ऐसा मनोबल डेवलप होता है न?

दादाश्री : नहीं होता। यह आपका मनोबल तो बॉडी के अधीन हैं। अंदर जो शारीरिक बीमारी थी, उसकी वजह से मन के सारे विचारों को ब्रेक लगा हुआ था और इसलिए उन दिनों इच्छा के अनुसार कंट्रोल रह सकता था और इसीलिए फिर तुझे सोचने का अवकाश मिला कि विषय क्या है? उन दिनों, विषय इतनी बुरी चीज़ है, वह सब यों पिक्चर की तरह हाज़िर रहने लगा और उसी अनुसार हुआ। लेकिन फिर शरीर ने पलटा खाया, कि फिर विचार पलट गए! विषय से संबंधित ढीलापन आने का कारण कई बार शारीरिक कमज़ोरी होती है, बाद में इलाज हो जाने पर विषय ज़ोर मारता है। इसलिए तेरा पलटा हुआ देखकर मैं समझ गया कि यह क्यों पलटा हैं! मैं जानता हूँ कि यह इलाज किया और इलाज करने

से ऐसा हुआ है। अभी भी तेरे ये विचार बदल जाएँगे। तू अपने आप देखा कर न! पहले तुझे तेरे जो ब्रह्मचर्य से संबंधित विचार 'स्ट्रोंग' लगते थे, तब मुझे मन में लगा कि इसकी यह स्थिति हमेशा रहनेवाली नहीं है, फिर भी रह सके तो उत्तम! शरीर में बदलाव होगा, तब यह वापस इस ओर मुड़ेगा, उसके बाद मुड़ा भी सही। उसके बाद हम समझ गए। इसलिए हम पहले से कुछ कहते ही नहीं हैं न! हम जानते हैं कि यह भला आदमी शरीर के अधीन अपने निश्चय में से बहक रहा है, इसमें उसका दोष नहीं है। इसलिए तो हम कोई उलाहना नहीं देते। बाकी ब्रह्मचर्य के संबंध में विरोधी विचार आना, वह उलाहना देने योग्य है! यानी यह विचार किस के अधीन बदलते रहते हैं, वह सब हमें देखते रहना है। अभी तू कोई भाव मत करना। सब देखता रह कि कैसा 'सेटिंग' होता है! ब्रह्मचर्य से संबंधित तेरे भाव इतनी ऊँचाई तक पहुँचे थे कि लोगों का कल्याण कर डालें, ऐसा था!

जिसे ब्रह्मचर्य के विचार आते हों, वह प्रभावशाली कहलाता है! देवता ही कहलाता है! और जिसे अब्रह्मचर्य के विचार आते हों, तो वह साधारण मनुष्य ही माना जाएगा न? पशु से लेकर आम मनुष्य तक के सभी लोगों को अब्रह्मचर्य के विचार आते हैं। अब्रह्मचर्य के विचार, वे खुली पाशवता हैं। जिनमें समझदारी नहीं है, वे अब्रह्मचर्य में पड़ते हैं। तुझे खुद को भी उस दिन यह समझ में आ गया था, लेकिन इस शारीरिक स्थिति ने मन को बदल दिया। तूने समझा कि मेरा मन हिम्मतवाला हो गया होगा, लेकिन मन हिम्मतवाला तभी कहा जाएगा, जब ब्रह्मचर्य सहित हो! जो ब्रह्मचर्य तोड़े, उसे कोई हिम्मतवाला नहीं कह सकता।

ब्रह्मचर्य के विचार आना, वह कभी-कभी शरीर पर 'डिपेन्ड' करता है। बीच में तेरे बहुत पुण्य जागे थे कि शरीरिक कमज़ोरी आई! शारीरिक कमज़ोरी को भगवान ने इस काल में सबसे बड़ा पुण्य कहा है। वह अधोगति में से बच जाता है। ज्ञान नहीं हो, फिर भी वह अधोगति में से बच जाता है। लेकिन यदि शरीर मज़बूत हुआ, तो फिर तालाब फटता है। उस वक्त देख लो फिर! इसलिए इन छोटे बच्चों को बहुत

मगदल और मिठाइयाँ देने का मना करता हूँ। अरे! बच्चों को मगदल नहीं देना चाहिए। ये लोग तो कैसे हैं कि जो बच्चों को मगदल और गोंदपाक आदि देते हैं! उन्हें तो सिर्फ दाल-चावल खिलाने से भी खून बहुत बढ़ जाता है, फिर बच्चों को मिठाइयाँ आदि देंगे तो क्या होगा? फिर सभी पंद्रह साल की उम्र में ही निरे दोष में पड़ जाते हैं! फिर खराबी ही हो जाएगी न? जिससे उत्तेजना हो, ऐसा आहार नहीं देना चाहिए। इन ब्रह्मचारियों को, यदि ऐसा आहार दिया जाए जिससे उत्तेजना हो तो क्या होगा? मन-वन सब बदल जाएगा! मन पूरी तरह से आहार पर आधारित है। वह पूरे महल को ज़मीनदोस्त कर देता है! अतः क्या कहा है कि सभी तरह का आहार लेना, लेकिन हलका लेना। शारीरिक तंदुरस्ती खत्म नहीं होनी चाहिए।

प्रश्नकर्ता : हम विषय में फिसलें उसमें जोखिम तो है, लेकिन उसमें हमारी सत्ता कितनी? यदि हमें नहीं करना हो, तो उसमें हमारी सत्ता कितनी है?

दादाश्री : पूरी सत्ता है। 'एक्सिडेन्ट' तो कभी-कभार ही होता है, रोज़ नही होता। अतः रोज़ाना जो करते हो, वह खुद की 'विल पावर' से होता है। बाकी 'एक्सिडेन्ट' तो छः-बारह महीने में एकाध बार होता है और उसे 'व्यवस्थित' कहते हैं। प्रतिदिन 'एक्सिडेन्ट' हो उसे यदि 'व्यवस्थित' कहोगे तो वह 'व्यवस्थित' का दुरुपयोग हुआ कहा जाएगा।

प्रश्नकर्ता : वह 'व्यवस्थित' का दुरुपयोग हुआ कैसे कहा जाएगा?

दादाश्री : उसका दुरुपयोग हो ही जाता है। उल्टी मान्यता मानी इसलिए। उसमें भी आपको छूट दी जाती है कि विचार आएँ और आपकी दृष्टि मलिन हो जाए तो उसमें हर्ज नहीं है; उसे धो डालना और हमारी पाँच आज्ञा का पालन होते रहना चाहिए। यह तो पाँच आज्ञा का पालन नहीं हो पाता, इसलिए मुझे दूसरी ओर का स्क्रू टाइट करना पड़ता है।

प्रश्नकर्ता : नहीं, वहाँ भी आज्ञा पालन तो होता है, अलग रहा जाता है।

दादाश्री : वह आज्ञा नहीं कहलाती। वह तो एक प्रकार का लालच घुस गया है, उससे लालची हो जाता है फिर।

इस लड़के ने अपने दोष का प्रतिक्रमण किया था, बाद में मैंने इसे आज्ञा दी, उसके बाद इससे एक भी दोष नहीं होता। क्योंकि इसने तय किया है कि मुझे अब उस ओर दृष्टि ही नहीं करनी है, मुझे बिगड़ना ही नहीं है। मुझे विषय के बारे में सोचना ही नहीं हैं और मैंने उसे आज्ञा दी। अब उसका कुछ भी नहीं बिगड़ रहा है, अरे, निरंतर समाधि में रहता है! आपकी नीयत खराब हो, तभी सबकुछ बिगड़ता है। इस एक बात में तो स्ट्रोंग रहना ही पड़ेगा न? इस बारे में पहले संतपुरुषों ने ज़हर खाए हैं। क्योंकि ज़हर खाना तो एक जन्म के लिए मारता है और इस विषय से तो अनंत जन्मों का मरण होता है!

जो *अणहक्क* के विषय भोगते हैं, वे तो दुराचार फैलाते हैं। दुराचार का विज्ञापन करते हैं। उसके खुद के हक़ का लोग भोग जाएँगे, इसका उसे विचार भी नहीं आता। जो *अणहक्क* का नहीं भोगते, उनके घर में से भी कोई उनका नहीं भोगता, यों सँभल जाता है, ऐसा कुदरत का नियम है। जो उस नियम को तोड़ दे, वह भान रहित, पूरी तरह से अभानता कही जाएगी। अपना यह विज्ञान निरंतर समाधि में रखे, ऐसा है। फिर वह भौतिक सुखों की इच्छा ही नहीं रखता न?

प्रश्नकर्ता : किसी में विषय-सुख की ग्रंथि होती है न?

दादाश्री : ऐसा कुछ नहीं होता। ग्रंथियाँ हों तो उनका छेदन किया जा सकता है।

प्रश्नकर्ता : बाकी आपका ज्ञान, आपका जो सुख है, वह सचमुच इन सबसे ऊँचा है, यह बात समझ में आती है।

दादाश्री : ऊँचा नहीं, यह ज्ञान तो ऐसा है कि वर्ल्ड में कभी ऐसा हुआ ही नहीं है। नये सिरे से यह उद्‌भव हुआ है।

प्रश्नकर्ता : हाँ, यह समझ में आता है कि बात सही है लेकिन वह वर्तन में नहीं आता।

दादाश्री : वर्तन में बहुत सुंदर प्रकार से आ सके, ऐसा है! वर्तन में इतना सुंदर रह सकता है कि बात ही मत पूछो।

प्रश्नकर्ता : जब ज्ञान लिया, तब पहला डेढ़ साल ग़ज़ब का गुज़रा, तब वर्तन में भी ग़ज़ब का आया था।

दादाश्री : वह तो फिर नीयत बिगड़ी, नीयत नया-नया ढूँढती है फिर। मन का स्वभाव है वेराइटी ढूँढना। शुरूआत में इतना अच्छा हो गया था कि मुझसे कहता था कि यह विषय मुझे रास नहीं आएगा। मुझे सदा के लिए ब्रह्मचर्य ही ले लेना है। उसके बजाय अब उल्टी तरफ चल पड़ा है।

प्रश्नकर्ता : तो, इसमें तो खुद की ही कमज़ोरी है न?

दादाश्री : कमज़ोरी मतलब बेहद कमज़ोरी! यह तो इन्सान को मार डालती है। जब से तेरी नीयत बिगड़ी, तब से भगवान की कृपा कम होने लगी, ऐसा मुझे पता चलता है न! नीयत चोर है तो फिर खत्म हो गया!

प्रश्नकर्ता : तो अब इसका उपाय क्या है? भगवान की कृपा यदि कम होने लगे, तब फिर तो खत्म ही हो गया न?

दादाश्री : तो फिर यह चोर नीयत छोड़ देनी चाहिए। उस तरफ दृष्टि ही क्यों जानी चाहिए? ये सभी मीनिंगलेस बातें हैं। यह तो तुझे दृष्टि सुधारनी चाहिए कि यों कपड़ों सहित भी आरपार दिखे यानी कि कपड़े पहने हों, फिर भी कपड़े रहित दिखाई दे। फिर चमड़ी रहित दिखाई दे, ऐसी दृष्टि विकसित करनी पड़ेगी। तब खुद की सेफसाइड हो सकेगी न? ऐसा क्यों बोल रहा हूँ? मनुष्य को मोह क्यों होता है? अच्छे कपड़े पहने देखे कि मोह हो जाता है! लेकिन हमारे जैसी आरपार दृष्टि हो जाए, फिर मोह ही उत्पन्न नहीं होगा न?

प्रश्नकर्ता : बीच में थोड़ा समय ऐसा रहता था, बाद में फिर ऐसा नहीं रहा।

दादाश्री : मतलब चोर नीयत है। नीयत ही गलत थी! और विषय ऐसी चीज़ है कि वहाँ पर एक्सेप्शन (अपवाद) है ही नहीं। यह तो आपमें पाँच आज्ञा पालन करने की शक्ति ही नहीं है। यदि पाँच आज्ञा पालन करनी हो तो भी मैं 'एक्सेप्शन' नहीं दूँगा किसी को भी। क्योंकि यह विषय तो आपको न जाने कहाँ तक स्लिप करके (फिसलाकर) खत्म कर देगा। अत: यदि सिर्फ एक इसी विषय को पार कर गया तो पूरा हो गया, उसकी सेफसाइड हो जाए! हमारी आज्ञा में रहोगे तो आपको सहज ही कृपा मिलेगी। दादा को कुछ लेना नहीं है और देना भी नहीं है। आप आज्ञा में रहोगे, तो हम समझेंगे कि इन लोगों ने आज्ञा में रहकर ज्ञान रोशन किया!

कोई आदमी पाँच-सात दिन से भूखा हो, तो वह लड़ने जाएगा क्या? नहीं। क्यों? उसका मन ठंडा पड़ जाता है। वैसा ही इस विषय में है मन ठंडा पड़ गया, यानी ठंडा बर्फ!

प्रश्नकर्ता : लेकिन दादाजी, जब उपवास करता हूँ उस दिन मुझ से स्कूटर भी ठीक से नहीं उठाया जा सकता, ऐसा लगता है।

दादाश्री : यह सब वकालत है। यहाँ पर वकालत नहीं करनी है। यह तो बचाव है। यहाँ बचाव नहीं करना है न?

प्रश्नकर्ता : नहीं, यह मैं बचाव नहीं कर रहा हूँ, लेकिन आपके सामने खोल रहा हूँ।

दादाश्री : लेकिन यह सब तो बचाव है। यहाँ बचाव नहीं करना है। यहाँ पर कहाँ कोई जेल में डाल देंगे? खुद के मन में ऐसा घुस जाता है कि अब उपवास किया इसलिए ऐसा हो जाएगा, वैसा हो जाएगा, तो वैसा हो जाता है। उपवास तो बहुत शक्ति देता है। यह तो मन तुझे छल रहा है। उल्टी पटरी पर चढ़ा रहा है।

यह जो मैंने आपको दिया है, वह इतना अधिक सुखदायी है कि आपको अन्य सुख फीके लगेंगे, यानी अच्छे ही नहीं लगेंगे। इतना अधिक सुखदायी है! परम सुखदायी है, परम सुख का धाम है! अन्य सबकुछ फीका लगता है, अच्छा ही नहीं लगता, बल्कि घिन आती है!

यह तो वकालत करके अर्थ का अनर्थ कर देते हैं कि यह सब 'व्यवस्थित' ही है न! लेकिन कितना बड़ा जोखिम है? *अणहक्क* के विषय यानी कितना बड़ा जोखिम! आप जिस औरत से शादी करो, वही आपके हक़ का विषय है। दूसरों के हक़ का विषय आपके लिए ठीक नहीं है। सोचन भी नहीं चाहिए, दृष्टि भी नहीं डालनी चाहिए, तब जाकर हमारा साइन्स खुलेगा! हमारा साइन्स तो इसके आधार पर, ब्रह्मचर्य के बेज़मेन्ट पर टिका है!

प्रश्नकर्ता : मेरी दृष्टि तो दूसरी जगह चली जाती है।

दादाश्री : वह दृष्टि दूसरी जगह जाना, वह तेरी पुश ऑन चीज़ है, जबकि यह तो उसी की वकालत की और व्रत का नियम तोड़ा। आज्ञा तोड़ी न? इसलिए यह सारा जोखिम आया है।

निश्चय नहीं टूटे और टूटते ही सावधान नहीं हो जाएँ तो निश्चय दूसरी ओर मुड़ जाता है। आत्मा के संबंध में निश्चय है, वह निश्चय, जिस ओर जाता है, उस ओर मुड़ जाता है।

इस जगत् के कुतुबनुमा से हमें उत्तर में नहीं जाना है। ज्ञानी के कुतुबनुमा से उत्तर में जाना है। जगत् का कुतुबनुमा तो, जो दक्षिण में जा रहा है, उसी को उत्तर कहते हैं। गलत को गलत समझे, और तभी से सच की ओर जाने लगोगे। एक सूक्ष्म ज़हर है और एक दवाई है, खाँसी मिटाने की। दोनों सफेद होती हैं, लेकिन जिस पर पॉइज़न लिखा हुआ हो, उसे हम नहीं छूते क्योंकि 'मर जाएँगे'। ऐसा जानने के बाद छोड़ देंगे या नहीं?

अभी जगत् पोलम्पोल चल रहा है। पैसे भी *अणहक्क* के और ऐसे ही आते हैं सारे। इसलिए हम उसमें हाथ नहीं डालते। अभी सिर्फ विषय के लिए ही मना करते हैं। क्योंकि पैसे तो जड़ चीज़ हैं और ये तो दोनों चेतन। वह कब दावा कर ले, वह कहा नहीं जा सकता। आप बंद कर दो तो भी वह दावा करेगी न?

प्रश्नकर्ता : यह तो न जाने अंदर क्या हो गया है, वही समझ में

नहीं आता। जहाँ दृष्टि बिगड़े, वहाँ पर प्रतिक्रमण करता है और वापस दृष्टि बिगाड़ना तो चलता ही रहता है।

दादाश्री : उसीका नाम 'व्यवस्थित' है न! उल्टा समझकर सेट कर दिया और कह दिया 'व्यवस्थित'! नहीं है वह 'व्यवस्थित'! यह तो अपनी समझ से सेट कर दिया कि प्रतिक्रमण कर लेगा तो खास परेशानी नहीं होगी। फिर इसका ऐसा नहीं और उसका वैसा नहीं।

मनुष्य को 'स्ट्रोंग' रहना चाहिए। खुद परमात्मा ही है! परमात्मा क्यों नहीं दिखते? ऐसे सब उल्टे लक्षण हो गए हैं, इसलिए। अब तुझे ज़रा ज़्यादा जागृति से काम लेना है, और ज़्यादा तो मन को पकड़ना है। मन ढीला हो गया है। पहले मन नहीं बिगड़ा था, अभी तो मन बिगड़ गया है। पहले शरीर बिगड़ा हुआ था, तब मन सुधरा हुआ था। दवाई के कारण शरीर तंदुरस्त हो गया, तो देख नुकसानदेह हो गया। पहले ऐसा नहीं था। मैंने सारा हिसाब निकाला था। विषय घेर लें तब फिर आगे का कुछ दिखाई नहीं देता। वह मनुष्य को अंध बना देता है। हिताहित का भान नहीं रहता। 'अगले जन्म में क्या होगा?' जगत् को इसका भान ही नहीं है। हिताहित का भान ही कहाँ है?

अहंकार करके भी विषय से छूट जाओ

'अतिपरिचयात् अवज्ञा'। इन पाँच विषयों का अनादिकाल से अवगाढ़ परिचय होने के बावजूद भी उनकी अवज्ञा नहीं होती, वह भी आश्चर्य है न! क्योंकि एक-एक विषय के अनंत पर्याय हैं! उनमें से जिस विषय के जितने पर्यायों का अनुभव हुआ, उतने पर्यायों की अवज्ञा हुई और उतने छूट गए! पर्याय अनंत होने के कारण अनंतकाल तक भटकना पड़ेगा और पर्याय अनंत होने के कारण अंत भी नहीं आएगा! यह तो, ज्ञान के बिना इसमें से छूट ही नहीं सकते।

अपना मार्ग हर तरह से साहजिक है, लेकिन विषय के बारे में साहजिक नहीं है। इस विषय को तो इगोइज़म करके भी उड़ा देना है। क्योंकि यह चरम शरीरी नहीं है! इसलिए अहंकार करके भी आज्ञा में रहना।

अहंकार का कर्म भले ही बँधे, लेकिन अक्रम विज्ञान में इतना सँभालने जैसा है!

शरीर पर से चमड़ी निकाल दे और फिर वहाँ पीप हुआ हो और कोई आपसे कहे कि इसे चाट लो, वर्ना कल से मेरे यहाँ मत आना, तो आप क्या करोगे?

प्रश्नकर्ता : 'जाओ, नहीं आऊँगा', ऐसे कहूँगा।

दादाश्री : 'नहीं आऊँगा' ऐसा ही कहोगे न? देखो, अब एक इतनी छोटी सी बात के लिए पूरी तरह से छोड़ देता है, चाटता नहीं है न! आपको क्या लगता है? आपसे कोई कहे कि पीप चाट जाओ, वर्ना कल से मेरे यहाँ मत आना, तो?

प्रश्नकर्ता : आज अभी से ही नहीं आऊँगा, कल से क्यों?

दादाश्री : देखो, इतनी छोटी सी बात है न, तो आपको बात को पकड़ना नहीं आना चाहिए? कैसा आश्चर्य है न! सिर्फ पीप पड़ जाए, उसमें अहंकार करता है कि, 'अब नहीं आऊँगा', और जिसमें हज़ारों जोखिम हैं ऐसे विषय में अहंकार कर न, कि 'तू मुझ से ऐसा करवाती है, तो मैं तेरे पास आऊँगा ही नहीं!'

प्रश्नकर्ता : कर्म बाँधकर आया है, इसलिए भोगना ही पड़ेगा न? बाद में उसकी सत्ता में नहीं है न?

दादाश्री : भोगना पड़ता है, वह बात अलग है, और भोगते हैं वह बात अलग है। ये सभी तो भोग रहे हैं। भोगना पड़े ऐसा तो कोई एकाध ही व्यक्ति होता है। जिसे भोगना पड़ता है, ऐसा व्यक्ति तो पूरे दिन *उपाधि* (बाहर से आनेवाला दु:ख) में ही रहा करता है। जबकि यहाँ तो भोगने के बाद मुँह पर संतोष भी दिखता है। इसे मनुष्य ही कैसे कहें फिर?

अपने कुछ महात्मा ऐसे हैं कि जिन्होंने अहंकार करके भी विषय छोड़ दिया है। अहंकार किया कि जो होना हो सो हो, लेकिन विषय बंद। अब विषय चाहिए ही नहीं। यदि विषय आए तो मर जाऊँगा, ऐसे अहंकार

करके छोड़ दिया। उसका एक कर्म ज़्यादा बँधता है। ऐसे अहंकार से पुण्यकर्म में वृद्धि होती है।

आज तक नासमझी से चले अवश्य हैं, लेकिन यह ज्ञान लेने के बाद तो कितनी समझ उत्पन्न होती है। अत: समझदारी सहित होगा तो वैराग्य आएगा और फिर तोड़-फोड़कर विषय की धज्जियाँ उड़ा देगा। ऐसा कोई नियम नहीं है कि कर्म बदलेंगे ही नहीं। कर्म बदल सकते हैं। अज्ञानी का कर्म कैसे बदलता है? अभी कोई लेनदार आए, तब उस कर्म का उदय तो आया, उसे पूरा तो करना ही पड़ेगा न? लेकिन वह पड़ोसी से पचास रुपये लेता है और लेनदार को पैंतालीस देकर पाँच खुद के पास रखता है। इससे एक कर्म पूरा हुआ और दूसरा कर्म खड़ा किया। इस प्रकार पुराना कर्म तो समाप्त हो जाता है लेकिन नया कर्म खड़ा करते हैं। ये संसारी इसी प्रकार से सभी कर्म पूरे करते हैं। लेकिन क्या ये सभी कर्म चुका देते हैं? नहीं, यह तो नया ओवरड्राफ्ट लेकर चुकाते हैं!

प्रश्नकर्ता : ओन अकाउन्ट पूरा करते हैं।

दादाश्री : हाँ, लेकिन इससे आनेवाली, अगले जन्म की ज़िम्मेदारी का उसे भान नहीं है। वे फिर यहाँ से जानवर में चले जाते हैं। लेकिन इतना सुधरा, इतना भी बहुत अच्छा हुआ न, क्योंकि जो रोज़मर्रा का आचरण है, वे कुछ हद तक चलाया जा सकता है, लेकिन सिर्फ विषय संबंध में ही नहीं चलाया जा सकता। बाकी सभीकुछ चला सकते हैं। अन्य सभीकुछ हम चला लेते हैं। यदि शराब पीता हो तो कभी-कभी चला लेते हैं, लेकिन आपको इतना समझना चाहिए कि दादाजी इसे दरगुज़र कर रहे हैं! लेकिन आपको क्या करना चाहिए? दिन-रात 'यह बहुत गलत चीज़ है, बहुत गलत चीज़ है', ऐसे जाप करने चाहिए।

प्रश्नकर्ता : यानी उसके प्रति खेद ही होना चाहिए?

दादाश्री : निरंतर खेद रहना चाहिए, तभी हमारा यह कहना कि 'चला लेंगे', वह आपके काम आएगा, वर्ना दादाजी अलाउ करते हैं उसका मतलब ऐसा नहीं है कि कोई हर्ज नहीं है। जबकि विषय संबंध को तो

अहंकार करके भी तोड़ देना चाहिए। दो-चार जनों से मैंने इस प्रकार से तुड़वा दिया था! अहंकार करके, तहस-नहस कर देते हैं! फिर जो अहंकार किया, उसका कर्म बँधे तो भले ही बँधे, लेकिन वह सारा विषय तो खत्म कर देगा न? ये सारे कर्म ऐसे हैं कि एक के बजाय दूसरा दो तो उसके एवज में छूट जाते हैं। सिर्फ विषय ही ऐसा है कि अहंकार करके भी छूट जाना चाहिए, वर्ना यह विषय तो मार ही डालेगा!

पुराने समय में चारित्र स्थिरता आज जैसी नहीं थी। आज तो ये लोग अभान हैं। यह तो, यदि ज्ञान लेने के बाद भी विषय की आराधना होगी तो क्या होगा? सत्संग को दगा दिया और ज्ञानी को भी दगा किया, तो फिर यहाँ से सीधे नर्क में जाएगा। यहाँ पर (ज्ञान लेने के बाद) ज़्यादा दंड मिलता है, इसका क्या कारण होगा?

प्रश्नकर्ता : ज़िम्मेदारी है न?

दादाश्री : नहीं, इस सत्संग को दगा दिया, ज्ञानी को दगा दिया। बड़ा दगाबाज़ कहा जाएगा। ऐसा तो होता होगा? क्या खुद ऐसा नहीं समझता कि यह गलत है? यह तो जान-बूझकर चला लेते हैं कि कोई हर्ज नहीं, वर्ना 'समभाव से *निकाल*' का दुरुपयोग करता है या फिर 'व्यवस्थित है' करके दुरुपयोग करता है। ऐसा सब आपने नहीं सुना था न, पहले?

प्रश्नकर्ता : ऐसा तो नहीं सुना था।

दादाश्री : अब आपको सब लक्ष्य में रहेगा या छूट जाएगा? आपमें ऐसा नहीं होना चाहिए। यह तो मुँह भी नहीं दिखा सकें, ऐसी चीज़ हो जाती है। शोभा नहीं देता आपको। अहंकार से जितना किया उतना कर्म बँध जाता है, कि कितना 'ऑवरड्राफ्ट' लिया। लेकिन 'विषय तो चाहिए ही नहीं', ऐसा होना चाहिए। जो बाहर विषय का आराधना करता हो उसे तो, खुद की पत्नी-बेटी कहीं भी जाए तो एतराज़ नहीं होता। तो फिर उसे नंगा ही कहेंगे न? उसके लिए चारित्र की क़ीमत ही नहीं है न!

अब सारा सेट कर दो। आख़िर में यदि कल देह छूट जाए, तो अपने

आप ही विषय तो छूट ही जाएगा न? तो जीते जी करो तो क्या बुरा है? मार-पीटकर कुदरत करवाए, उसके बजाय जीते जी आप खुद करोगे तो छूट जाओगे इसमें से! इस विषय का कर्म उसने रोका, उसके बदले दूसरा कर्म बँधा वापस। भले ही वह सहजभाव नहीं कहा जाएगा! यानी दूसरा कर्ज़ा खड़ा किया। यह दूसरा कर्ज़ तो अच्छा है, लेकिन विषय का कर्ज़ तो बहुत ही गलत है!

विषय का विचार आते ही तुरंत प्रतिक्रमण करना। प्रतिक्रमण होता है न तुझ से? तेरी खुद की इसमें बिल्कुल इच्छा ही नहीं है न? अंदर थोड़ी बहुत इच्छा रहती है कि 'व्यवस्थित है' वगैरह, इस तरह पोल (जान-बूझकर दुरुपयोग करना, लापरवाही) रखता है क्या?

प्रश्नकर्ता : नहीं।

दादाश्री : बाकी पोल रखता है। 'व्यवस्थित है' न, ऐसा कहता है! पोल मारनी हो तो चला सकता है न? पोल मारने में तो बहुत जोखिम है न? वह तो नर्कगति में ले जाएगा। इसलिए हम सावधान करते हैं!

[११]

चारित्र का प्रभाव

चारित्र की नींव, मोक्षपथ का आधार

खाओ-पीओ, मज़े करो। बहुत सारी चीज़ें हैं खाने के लिए। एक आदमी को कोई विकारी आदत थी। उस आदत को छुड़वाने के लिए मैंने क्या कहा, 'इस गंदगी में क्यों पड़े रहते हो? अन्य चीज़ें इस्तेमाल करो न? सेन्ट, इत्र वगैरह रखो न! यह आपको अच्छा नहीं लगेगा?' तब बोला, 'यह मुझे अच्छा लगेगा?' मतलब इस तरह मन को समझा-बुझाकर काम निकाल लेना है। एक गोली से अच्छा नहीं लगे, तो दूसरी गोली देना, दूसरी से अच्छी नहीं लगे तो तीसरी। इस तरह (ऐसे तरह-तरह) की जो गोलियाँ बताई हैं, वे देना। उनमें से किसी एक गोली में मन लग गया कि चल पड़ा। फिर उस गंदगी से छूट जाएगा न!

चारित्र में स्ट्रोंग हो गया तो जगत् जीत जाएगा। जगत् जीतने के लिए, चारित्र में स्ट्रोंग हो, बस इतना ही चाहिए। कपड़े कैसे भी पहने, उसमें कोई हर्ज नहीं है। व्यवहार चारित्र का और कपड़ों का कोई लेना-देना नहीं है। कपड़ों के बारे में तो एक का मत ऐसा है कि कपड़े बिल्कुल होने ही नहीं चाहिए। किसी दूसरे का मत ऐसा है कि सफेद कपड़ा लपेटना चाहिए। लेकिन आप कोट-पतलून पहनो तो भी हर्ज नहीं है। वे सभी मत व्यवहार के हैं। खाने की चीज़ें कोई भ्रांति जैसी चीज़ नहीं हैं। यदि जलेबी मुँह में रखें, तो बड़े लोगों को भी मीठी लगती है न? नहीं लगती? इसलिए यदि सिर्फ 'चारित्र' जीत लिया तो सारा जगत् जीत लिया। बाकी खाओ-पीओ उसमें मुझे कोई एतराज़ नहीं है। कम-ज़्यादा खाओगे तो कोई एतराज़ नहीं करेगा न? आप इत्र ज़्यादा लगाओ तो लोग एतराज़ करते हैं क्या?

और इतनी बड़ी-बड़ी मूछें रखो, गलमुच्छें रखो तब भी दुनिया एतराज़ नहीं करती। दुनिया तो, जहाँ गड़बड़ है, वहीं पर एतराज़ करती है। दुनिया को अन्य सभी चीज़ों में कोई एतराज़ है ही नहीं। और इस *अणहक्क* के संबंध में तो बहुत ही जोखिमदारी है, भयंकर अधोगति में फेंक देता है! जगत् तो आईने जैसा है, वह हमें दिखाता है, अपना रूप दिखाता है। जो-जो टोकनेवाले हैं न, वे अपना ही आईना हैं।

वास्तव में तो, विषय में सुख है ही नहीं। जो सुख माना है न, वह निरी रोंग बिलीफ की भी रोंग बिलीफ है। जलेबी में सुख लगता है। अब किसी को जलेबी नहीं भाती होगी, लेकिन उसे श्रीखंड तो भाता होगा? यानी ये चीज़ें भी सुखदायी लगती हैं। जबकि विषय तो दाद को खुजलाने जैसा है। वह कोई चीज़ नहीं है फिर भी उसमें सुख मिलता है न? अत: विषय रोंग बिलीफ की भी रोंग बिलीफ है। वह भी फिर जगत् में चल पड़ा तो चला फिर। सही समझ ही नहीं है न!

मैं इन सभी को इसीलिए ब्रह्मचर्य के बारे में समझाता हूँ। क्योंकि चारित्र की बुनियाद पर मोक्षमार्ग कायम है। आपको यदि खाना-पीना है, तो उसमें हर्ज नहीं है। सिर्फ शराब या मांसाहार नहीं करना चाहिए। बाकी सबकुछ, पकौड़े-जलेबी खाने हों तो खाना, उसका हल ला दूँगा। अब इतनी छूट देने के बावजूद भी यदि आप अच्छी तरह से आज्ञा में नहीं रह पाओ तो क्या हो सकता है? कृपालुदेव ने तो यहाँ तक कहा है कि तेरी पसंद की थाली दूसरों को दे देना। अपने यहाँ तो क्या करने को कहा है कि 'तुझे जिससे शांति मिलती है, वैसा तू कर। तू अपनी पसंद की थाली दूसरों को मत देना, आराम से खाना।' आपको तो चारित्र की बुनियाद मज़बूत रखनी है। मोक्ष में जाने के लिए वही एक मूल चीज़ है।

अपने यहाँ पर ज्ञान लेने के बाद क्रोध-मान-माया-लोभ नहीं होते हैं इसलिए यह व्यवहार चरित्र बहुत ऊँचा कहलाता है। जो भी क्रोध-मान-माया-लोभ होते हैं, वे निकाली हैं, वे निर्जीव हैं। अत: वास्तव में वे क्रोध-मान-माया-लोभ नहीं हैं। इसलिए यह व्यवहार चरित्र बहुत ऊँचा कहलाता है, लेकिन ब्रह्मचर्य ठीक से नहीं सँभालने के कारण सारा चरित्र कच्चा पड़

जाता है। अब ब्रह्मचर्य के लिए ज़ोर लगाकर, यों खींच-तानकर लाने जैसा नहीं है। ब्रह्मचर्य अपने आप सहज उदय में आए तभी काम का है। आपका भाव ब्रह्मचर्य के लिए होना चाहिए। जब तक ब्रह्मचर्य ठीक से नहीं सँभाल पाते, तब वह तक पौद्‌गलिक सुख और आत्मसुख के बीच का भेद नहीं समझने देगा।

व्यवहार चारित्र यानी किसी स्त्री को दु:ख हो ही नहीं, ऐसे बरतना। किसी स्त्री के लिए दृष्टि नहीं बिगाड़े। कुछ मुद्दत के लिए लिया गया चारित्र्य तो अच्छा कहलाता है। अभ्यास तो हो जाएगा न! चारित्र्य लिया मतलब झंझट ही खत्म हो जाएगा न! फिर वे विचार ऐसा समझेंगे कि इन्हें अपमान महसूस होगा, अत: जान-बूझकर कम आएँगे।

'ज्ञानीपुरुष' के आधार पर चारित्र्य, वह तो सबसे बड़ी चीज़ है। जबकि 'ज्ञानीपुरुष' का चारित्र तो बहुत ही उच्च होता है। कभी मन भी नहीं बिगड़ता।

विषय का विचार तक नहीं आना चाहिए और यदि विचार आ जाए तो उसे धो देना। मन में यदि सिर्फ विषय का भाव ही उत्पन्न हो, यानी वाणी में नहीं हो, वर्तन में नहीं हो, विचार में नहीं हो लेकिन कभी यदि ज़रा सा भी विचार मन में आए, तो उसका प्रतिक्रमण कर लेना। इसे व्यवहार चारित्र कहा जाता है। निश्चय चारित्र में तो भगवान ही बन जाएगा। निश्चय चारित्र, वही भगवान। केवलज्ञान के बिना निश्चय चारित्र संपूर्ण नहीं हो सकता, पूर्ण दशा में नहीं हो सकता।

व्यवहार चारित्र यानी *पुद्‌गल* चारित्र, आँखों से दिखाई दे ऐसा चारित्र और जब निश्चय चारित्र उत्पन्न हुआ कि भगवान बन गया, ऐसा कहा जाएगा। अभी तो आप सभी को 'दर्शन' है, फिर ज्ञान में आएगा, लेकिन चारित्र उत्पन्न होने में देर लगेगी। फिर भी अक्रम है न, इसलिए चारित्र शुरू होगा ज़रूर, लेकिन आपके लिए समझना मुश्किल है।

प्रश्नकर्ता : उसके लक्षण क्या होते हैं?

दादाश्री : ऐसा है न, वह निश्चय चारित्र बहुत कम होता है। जो

आँखों से देखा और जाना जा सके, वह चारत्र नहीं कहलाता, बुद्धि से देखा-जाना जा सके वह भी चारित्र नहीं कहलाता। उसमें तो आँखों का उपयोग नहीं होता, मन का उपयोग नहीं होता, बुद्धि का उपयोग नहीं होती। उसके बाद जो भी देखे-जाने, वह निश्चय चारित्र है।

लेकिन इसमें जल्दबाज़ी करने जैसा नहीं है। यह 'दर्शन' तक पहुँचा है, इतना भी बहुत हो गया न! खुद के दोष दिखाई दें और उन सभी के प्रतिक्रमण हों, तो काफी है!

प्रश्नकर्ता : व्यवहार चारित्र के लिए, विशेष रूप से और क्या करना है?

दादाश्री : कुछ नहीं। व्यवहार चारित्र के लिए और क्या करना है? ज्ञानी की आज्ञा में रहना, वह व्यवहार चारित्र है और उसमें भी यदि ब्रह्मचर्य सम्मलित हो तो अति उत्तम। तभी वास्तव में चारित्र कहलाएगा। तब तक पूरी तरह से व्यवहार चारित्र नहीं कहलाता। व्यवहार चारित्र की पूर्णाहुति नहीं होती। जब ब्रह्मचर्यव्रत आ जाए, तब 'व्यवहार चारित्र' की पूर्णाहुति होती है।

शीलवान को देखकर जगत् 'प्रभावित' होगा ही

जिन लोगों में चारित्र नहीं हो, वे लोग जब चारित्रवान को देखते हैं तो तुरंत ही प्रभावित हो जाते हैं। जिस बारे में खुद खराब है, उस बारे में सामनेवाले के अच्छे गुण देखे तो तुरंत ही प्रभावित हो जाता है। क्रोधी व्यक्ति अन्य किसी शांत पुरुष को देखे तो भी प्रभावित हो जाता है। इस जगत् में आपका प्रभाव पड़ने लगे और तब आप, आप विषय खोजो तो फिर क्या होगा? शिक्षक यदि विद्यार्थी से सब्ज़ी मँगवाए, और कुछ मँगवाए तो फिर उसका प्रभाव रहेगा क्या? इसी को विषय कहा है। शीलवान का ऐसा प्रभाव पड़ता है कि कोई गालियाँ देने का तय करके आया हो, तो भी उसके सामने आते ही जीभ सिल जाती है। आत्मा का ऐसा प्रभाव है। प्रभाव यानी क्या कि उसे देखने से ही लोगों को उच्च भाव होते हैं। इस ज्ञान के बाद प्रभाव बढ़ता है। यह प्रभाव

आगे चलकर चारित्र कहलाता है। प्रभाव बहुत ऊँचा हो, तब चारित्रवान कहलाता है।

मनुष्य के चारित्रबल जितनी क़ीमती अन्य कोई चीज़ है ही नहीं, लेकिन उसकी क़ीमत ही नहीं समझता न! यह तो मनुष्य का चारित्रबल है, ऐसा कि जिससे बाघ भी घबराए! लेकिन समझ ही नहीं हो तो क्या हो सकता है?

प्रश्नकर्ता : शीलवान में कौन से विशेष गुण होते हैं?

दादाश्री : शीलवान, वह ऐसे चारित्रवान की ओर जाता है। और सिर्फ चारित्रवान ही नहीं, अन्य बहुत से गुण भी हों, तब शीलवान कहलाता है।

यानी शीलवान के सामने सभी लोग रेग्युलर (नियमनिष्ठ) रहते हैं। शीलवान का प्रभाव और चारित्र वगैरह तो बहुत उच्च कोटि का होता है!

सिर्फ ब्रह्मचर्य को ही चारित्र नहीं कहा जाता। चारित्र तो, यदि शीलवान हो, तब चारित्र कहलाता है। अतः शील का तो बहुत महात्म्य है। शील में ब्रह्मचर्य का समावेश तो हो ही गया, लेकिन ब्रह्मचर्य सहित इतने गुण और होने चाहिए। यानी जिसकी वाणी से किसी को दुःख नहीं हो, जिसके वर्तन से किसी को किंचित् मात्र दुःख नहीं हो, जिसका मन किसी के लिए बुरा नहीं सोचे, शीलवान व्यक्ति ऐसा होता है। चारित्रवान किसे कहते हैं? जो किसी को क्रोध से भी दुःख नहीं पहुँचाता, किसी को लोभ से दुःख नहीं पहुँचाता, मान को लेकर किसी का तिरस्कार नहीं करता, कपट से किसी को दुःख नहीं देता, वह चारित्रवान कहलाता है। चारित्रवान की तो बहुत क़ीमत! लेकिन यह तो खुद ने हर तरह से खुद का दिवाला घोषित किया है और उसी का दुःख है। दिवाला घोषित करते हैं न लोग? क्रोध, लोभ, कपट, मान की वजह से दिवाला घोषित करते हैं। इसलिए फिर चारित्र खत्म हो जाता है। किसी प्रकार से दिवाला नहीं निकले, तभी वह चारित्रवान कहलाएगा, शीलवान कहलाएगा। शीलवान को देखते ही आनंद होता है।

अभी तो निरा कु-शील का ही वातावरण हो गया है। लेकिन शीलवान बनना पड़ेगा, सच्चा बनना पड़ेगा, सभी तरह से ऑल राइट हो जाना पड़ेगा। बाकी सबकुछ खाओ-पीओ, इत्र लगाओ इन सभी में पब्लिक को हर्ज नहीं है, हर्ज केवल कु-शीलता का ही है। किसी को ज़रा सा भी, किंचित् मात्र दुःख नहीं पहुँचाए, अपने ऐसे विचार, भाव, और वर्तन होने चाहिए और बहुत ही उच्च चारित्र होना चाहिए।

जगत् जीतने के लिए एक ही चाबी बताता हूँ कि, यदि विषय विषयरूप नहीं बने तो सारा जगत् जीत जाएगा। क्योंकि वह व्यक्ति फिर शीलवान माना जाएगा। जगत् का परिवर्तन कर सकेगा। आपका शील देखकर ही सामनेवाले में परिवर्तन हो जाएगा। आपमें जितना शील होगा, उतना सामनेवाले में परिवर्तन हो सकेगा, वर्ना किसी में परिवर्तन हो ही नहीं पाएगा। बल्कि विपरीत होगा। अभी तो शील ही सारा नष्ट हो गया है न!

प्रश्नकर्ता : जो व्यक्ति पहले चरित्रहीन हो, क्या वह मनुष्य शीलवान बन सकता है?

दादाश्री : हाँ, क्यों नहीं? जब से यह कर्ज़ा.... एक बार दिवालिया हो जाने के बाद यदि वह कर्ज़ चुका दिया तो फिर कर्ज़ा गया। बाद में वह साहुकार भी बन सकता है न! जब तक जीवित है, तब तक हो सकता है, जितनी मुद्दत हो उतनी, लेकिन एकदम से शीलवान नहीं बन सकता।

प्रश्नकर्ता : बुरे कामों का कर्ज़ कैसे चुका सकते हैं?

दादाश्री : कर्ज़ तो चढ़ गया है। लेकिन अब नये सिरे से सब इंतज़ाम कर रहा है न?

प्रश्नकर्ता : पश्चाताप से हो सकता है।

दादाश्री : नये सिरे से इंतज़ाम कर देगा न!

शीलवान बनाने के लिए ही हम यह सत्संग करवाते हैं न! मोक्ष की क्या जल्दी है? किसलिए मोक्ष की जल्दी है? हम मोक्ष स्वरूप ही

हैं और ये तो शीलवान पुरुष कहलाते हैं। इसलिए इन्हें खुद को सदैव सुख ही रहता है और इन्हें देखते ही लोगों में परिवर्तन होने लगे, इतनी ही ज़रूरत है हमें। बाकी उपदेश देने से परिवर्तन नहीं होता।

शीलवान होना तो बहुत ऊँची चीज़ है। आत्मा मोक्ष स्वरूप है। जब से वह रियलाइज़ हुआ, तभी से मोक्ष स्वरूप है। लेकिन पहले शीलवान बनना पड़ेगा, उसके गुण उत्पन्न होने चाहिए। खुद शीलवान हुआ कि उसके बाद जगत् में सभी उसके निमित्त से बदल जाएँगे। जो मशीनरी उल्टी चल रही थी, बाद में वह सीधी हो जाएँगी।

कैसे लक्षण शीलवान के !

प्रश्नकर्ता : शीलवान के क्या-क्या लक्षण होते हैं, वे जानने हैं।

दादाश्री : शीलवान में मॉरेलिटी, सिन्सियरिटि, ब्रह्मचर्य आदि सब होता है और फिर सहज नम्रता होती है। सहज यानी नम्रता रखनी नहीं पड़ती। सहज रूप से सामनेवाले के साथ नम्र रहकर ही बात करता है। और फिर, सहज सरलता होती है। सरलता रखनी नहीं पड़ती। जैसे मोड़ना चाहो वैसे मुड़ जाते हैं। उनका संतोष सहज होता है। इतने से ही चावल और कढ़ी परोसें न, तो वे सिर उठाकर देखते नहीं हैं। सहज संतोष! उनकी क्षमा भी सहज होती है। उनका अपरिग्रह और परिग्रह दोनों सहज होते हैं। यानी ऐसी कितनी ही बातें सहज हों तब समझना कि ये भाई शीलवान हैं!

प्रश्नकर्ता : लेकिन शीलवान पुरुष मोक्ष में जाता है क्या?

दादाश्री : वही दूसरों को मोक्ष दे सकता है!

प्रश्नकर्ता : तो फिर यह जो गुण ग्रहण करने की बात है, वृत्तियों पर कंट्रोल, वह तो अहंकार से हुआ।

दादाश्री : ऐसे जो अहंकार से हो, वह काम का नहीं है, सहज रूप से होना चाहिए। उसी को शीलवान कहेंगे। वृत्तियों पर कंट्रोल किया, वह तो अहंकार से है। त्याग करते हो, वह अहंकार है और ग्रहण करना

वह भी अहंकार है। सहज, सहज के सामने कोई त्याग भी नहीं है और अत्याग भी नहीं है। इसीलिए श्रीमद् राजचंद्रजी ने कहा है कि, 'ज्ञानी के लिए त्यागात्याग संभव नहीं है।' त्याग भी संभव नहीं है और अत्याग भी संभव नहीं है। क्योंकि वे खुद उदयाधीन बरतते हैं। मतलब जैसे किसी गठरी को ले जाते हैं न, उसी तरह वे मुंबई जाते भी हैं और गठरी की तरह आते भी हैं वापस।

प्रश्नकर्ता : आपने जो वह बताया न, सहज क्षमा।

दादाश्री : सहज क्षमा यानी सामनेवाला यदि उसे धौल मारे न, फिर भी जब उसकी ओर देखे तो क्षमा से भरी आँखें दिखाई देंगी हमें।

प्रश्नकर्ता : ऐसा तो ज्ञान के बगैर संभव ही नहीं है। तब तो शील भी ज्ञान के बिना संभव है ही नहीं न!

दादाश्री : वह सब एक ही चीज़ है और यदि अलग करके देखा जाए तो ऐसा कह सकते हैं।

प्रश्नकर्ता : सहज क्षमा। अब मैं क्षमा करता हूँ।

दादाश्री : वह काम की नहीं है। बड़े आए क्षमा करनेवाले! सहज होनी चाहिए!

आप धौल लगाओ और फिर उसकी आँखें देखो तो आपको क्षमा दे रही होती हैं। तब वह सहज क्षमा कहलाती है। 'मुझे क्षमा चाहिए' ऐसा कहना नहीं पड़ता। आप धौल लगाओ तब उसकी आँखों में सँपोले नहीं खेलते! पता नहीं चलेगा कि सँपोले खेल रहे हैं, इसकी आँखों में?

आप इस इफेक्ट को क्या समझो? हम कॉज़ेज़ को भी जानते हैं और इफेक्ट को भी जानते हैं। दोनों का ही, कॉज़ेज़ का ज्ञान है और इफेक्ट का ज्ञान, दोनों का ज्ञान है हमें। तभी सहज क्षमा रह सकती है।

प्रश्नकर्ता : अब 'शील' शब्द है, उसमें मॉरेलिटी, सिन्सियारिटी के अलावा अन्य पाँच-सात गुण होने चाहिए, वे सभी बताइए।

दादाश्री : अंग्रेज़ी में तो ये दो ही शब्द कह दिए जाएँ, तो सब अच्छी तरह से समझ में आ जाएगा।

शीलवाले को स्त्री का विचार तक नहीं आता, विषय का विचार आया यानी शील कच्चा है अभी। लेकिन फिर भी जिसे विचार आते हैं, उसके लिए कहते हैं कि, 'भैया, उसका ऐसा है। ये विचार थोड़े समय में चले जाएँगे और वह शीलवान ही है!' आप कॉज़ेज़ को कार्य कहते हो। कईबार कॉज़ेज़ को कार्य कहते हैं, मतलब क्या? यदि ये भाई कहें कि, 'मैं यहाँ से अहमदाबाद जा रहा हूँ।' तो जब वह यहाँ से निकले, तब कोई पूछे कि, 'वह भाई कहाँ गया? तब कहेगा, 'वह तो अहमदाबाद गया।' अब वह बात फेक्ट है क्या? फिर भी 'वह अहमदाबाद गया' ऐसा कहते हो या नहीं कहते?

इस संसार का नियम ही ऐसा है, अपना व्यवहार ही ऐसा है कि 'वह अहमदाबाद गया।' तो क्या यह कुछ गलत, यह व्यवहार कुछ गलत है क्या? तब कहे, 'नहीं। गलत कैसे कह सकते हैं?' क्योंकि लोग कारण का कार्य में आरोपण करते हैं। वह अहमदाबाद जा रहा है, अर्थात् अहमदाबाद जानेवाला है, इसलिए 'वह अहमदाबाद गया', ऐसा कहते हैं। इसी तरह इसमें भी शील में कुछ खराब विचार आते हों, फिर भी, क्योंकि वह शील प्राप्त करनेवाला है इसलिए हम उसमें कार्य का आरोपण करते हैं।

प्रश्नकर्ता : यह शील एक ऐसी चीज़ है कि उसमें बहुत सारे अच्छे-अच्छे गुणों का समावेश होता है और सभी, उन सभी के मिलने से गुणों का जो समूह बनता है, वह शील कहलाता है।

दादाश्री : यह शील तो बहुत ही, महान गुण है। जिसकी किसी के साथ तुलना नहीं की जा सकती, ऐसा गुण है! किसी-किसी काल में ऐसे दो-चार-पाँच ही लोग होते हैं, लेकिन अभी तो उनका अभाव है।

शील हो तो साँप नहीं डसता

''शीले सर्प न आभडे, शीले शीतल आग,
शीले अरि, करी, केसरी, सब जावे भाग''

शीलवान को देखते ही हाथी, सिंह वगैरह सभी भाग जाते हैं।

इस जगत् का एक नियम इतना सुंदर है कि पूरे कमरे में सभी जगह साँप बिछे हुए हों, एक इंच भी खाली नहीं हो, फिर भी यदि उस कमरे में अँधेरे में शीलवान प्रवेश करे तो साँप उस शीलवान को छूएँगे नहीं। जगत् इतना नियमबद्ध है। क्योंकि साँप को शील का इतना ज़्यादा ताप लगता है कि दस फुट की दूरी से ही सभी साँप इधर-उधर हो जाते हैं और एक-दूसरे पर चढ़ जाते हैं! अतः शीलवान को साँप तक भी नहीं छूते। उनकी मौजूदगी से वातारवण ही ऐसा हो जाता है कि साँप भी हट जाते हैं। साँप यदि उसे कभी थोड़ा छू जाए तो साँप को जलन पैदा हो जाएगी और वह मर जाएगा। शीलवान का ताप इतना अधिक होता है। साँप को खुद को जलन नहीं हो, दुःख नहीं हो, इसलिए वहाँ से हट जाते हैं। शील का प्रभाव ऐसा है कि कोई भी उसका नाम नहीं दे।

शीलवान तो सबसे क़ीमती रत्न कहलाता है। ऐसा शीलवान मैं भी नहीं था और आज भी नहीं हूँ। शीलवान तो व्यवहार चारित्र का सबसे ऊँचा पद है।

इस काल में शीलवान नहीं हैं। यदि इस काल में शीलवान होता न, यदि एक ही शीलवान इस दुनिया में होता तो, आज सारी दुनिया में बहुत ही सुख होता।

प्रश्नकर्ता : पुराने ज़माने में कोई शीलवान पुरुष हुए हों तो उनका उदाहरण दीजिए न?

दादाश्री : शीलवान, कोई ऐतिहासिक चीज़ नहीं है। कभी किसी बार कोई एकाध होता था। कोई आठ आने शीलवान, कोई बारह आने शीलवान होता है बाकी पूर्ण रूप से सोलह आने शीलवान तो शायद ही कोई होता है कभी। सोलह आने शीलवान तो जब साँप इधर-उधर हो जाएँ, उसे कहा जाता है। वीतराग पूर्ण शीलवान कहे जाते हैं, लेकिन तब उनके लिए शीलवान जैसा विशेषण रहता ही नहीं।

शीलवान यानी निर्भय। भगवान भी फिर उसे पूछ नहीं सकते। बोलो, भगवान भी नहीं पूछ सकें, तब वह कैसी स्थिति होगी उनकी?

अत: अब कुछ निबेड़ा लाओ। अनादि से मार खाते आए हो और उसमें ऐसा कौन सा सुख है? सात्विक रूप से पता नहीं लगाना चाहिए कि इसमें कोई सुख नहीं दिखता? बल्कि मूर्खता हो जाती है, फूलिशनेस हो जाती है। विषय से दूर रहा तो भगवान बनकर खड़ा रहेगा और विषय में यदि लटका तो अधोगति में नर्क में जाने पर भी अंत नहीं आएगा, ऐसा हमने ज्ञान से देखा है। अब आपको विश्वास हो गया न? आज आपको ऐसा ज्ञान हो गया न कि 'यह गलत हुआ है?' यह कोई ऐसा-वैसा ज्ञान नहीं है। 'यह गलत है' ऐसा ज्ञान हुआ, उसी को हम 'ज्ञान' कहते हैं। वापस पलटने लगा मतलब काम ही निकाल लेगा। यह तो, कोई दीया धरनेवाला होना चाहिए, कोई दीया धरनेवाला नहीं हो तो क्या होगा?

एकांत शैय्यासन

चौबीसों तीर्थंकरों ने कहा है 'एकांत शैय्यासन!' ऐसा क्यों कहा? दो प्रकृतियाँ इकट्ठी हुई तो वह शैय्यासन के लिए किसी काम का नहीं है। क्योंकि दो प्रकृतियाँ, पूर्ण रूप से एकाकार या 'एडजस्टेबल' नहीं हो सकतीं, इसलिए 'डिस्एडजस्ट' होती रहेंगी और उससे संसार खड़ा होता रहेगा। इसलिए भगवान ने खोज की थी कि एकांत शैय्यासन और आसन।

दो लोग कभी भी एक नहीं हो सकते। वे चाहे कितना भी करें तो भी एक होंगे क्या? फिर जब भी अलग होंगे तो फिर दो नहीं हो जाएँगे? फिर 'मैं' और 'तू' करते रहेंगे न? 'मैं ही हूँ, मैं ही हूँ' ऐसा नहीं करते? इसीलिए 'ज्ञानीपुरुष' एकांत शैय्यासन खोजते हैं। कभी किसी दिन दो से एक हो जाएँगे, लेकिन हमेशा एक नहीं रह पाते और फिर बखेड़ा होगा, उसके बजाय एक सिंगल बिछौना बिछा दो, ताकि झंझट ही मिट जाए! और यदि किसी को 'जेल' हुई हो, तो सज़ा तो पूरी करनी ही पड़ेगी न? पच्चीस साल की सज़ा हुई हो तो पच्चीस साल और चालीस साल की हो तो चालीस साल। पूरे तो करने ही पड़ेंगे न? लेकिन भावना कैसी

रखनी चाहिए? एकांत शैय्यासन की! शैय्या और आसन एकांत में, यह ज्ञानियों का पसंद किया हुआ मार्ग है कि दो में मज़ा नहीं है। दो से एक होते ज़रूर हैं, लेकिन फिर एक में से वापस दो हो ही जाते हैं। इसलिए जब तक यह साथ है, तब तक जेल समझना। जेल में और कोई चारा ही नहीं होता न! पुलिसवाला कहे वैसा करना पड़ता है। भगवान की (भाषा में) अहिंसावाला कैसा होता है? एकांत शैय्यासनवाला होता है। भले ही सबके साथ उठे-बैठे, लेकिन शैय्यासन एकांत होता है।

एकांत शैय्यासुख का गुण उत्पन्न होने के बाद ही वास्तव में सुख उत्पन्न होता है। जब सामनेवाले व्यक्ति को आरपार देखना आ जाए, तब एकांत शैय्यासुख नामक गुण उत्पन्न होता है। फिर उसे अकेले रहना और एकांत ही अधिक सुखकर लगता है। इसके बाद उसमें वास्तविक मस्ती उत्पन्न होती है। भीतर सुख तो भरपूर पड़ा है, वह प्रकट होता है। फिर उसकी वाणी, वह जो भी बोले, उसे शास्त्र ही माना जाता है।

एकांत शैय्यासन। एक आसन और एक शैय्या हो जाए तब परम सुखी हो जाता है, जो कि कई सालों से हमारा रिवाज़ है और वीतरागी मस्ती का अनुभव कर रहे हैं। 'दादा' का यह पद आपको यदि एक ही घंटे के लिए मिल जाए तो सदा के लिए मेरे जैसे सुखी हो जाओगे।

बाकी, जब तक स्त्री हो तब तक किसी को मोक्ष की आशा ही नहीं रखनी चाहिए। जब तक 'विषय हैं तब तक आत्मा को जाना ही नहीं है' ऐसा कहा जाता है। किसी की यदि स्त्री के प्रति दृष्टि जाए तो उसने ज़रा सा भी, अंशमात्र भी आत्मा नहीं जाना है। उसने आत्मसुख का अनुभव ही नहीं किया है! वर्ना आत्मसुख तो कैसा होता है!

इतना ही जीतना है, स्त्री विषय! स्त्री के प्रति दृष्टि हुई, उस तरफ का विचार भी आया कि खत्म हो गया। मोक्ष की नींव ही उखड़ गई और यदि विचार आए, तो आप क्या करोगे?

प्रश्नकर्ता : प्रतिक्रमण, 'शूट ऑन साइट'।

दादाश्री : सिर्फ यह विषय ही छोड़ दो न? विषय छोड़ दोगे तो

कभी न कभी उसका फल मिलेगा। बाकी की सभी चीज़ों के लिए एतराज़ नहीं है। बाकी सब चीज़ें हम 'लेट गो' करते हैं। यदि भटकना नहीं हो तो बाकी सभी के लिए एतराज़ ही नहीं है। लेकिन यदि भटकना हो तो खुला ही है न? जो करना हो वह करे! लेकिन उसका भयंकर गुनाह लगेगा। जब तक विषय रहे, तब तक आत्मा का स्पर्श हो ही नहीं सकता, कभी स्पर्श हो ही नहीं सकता। इतने में ही सावधान रहने को कहते हैं। यह क्या बहुत कठिन है? कठिन लगता है? लेकिन यदि मोक्ष में जाना हो तो फिर सब दुरुस्त तो करना पड़ेगा न? कब तक ऐसे ही चलता रहेगा, पोलम्पोल, ठोकाठोक? विषय का यदि एक भी विचार आए, तो उसे उखाड़कर तोड़ देना। जो ऐसे तोड़ देता है उसके लिए हम गारन्टी लेते हैं और उसकी गारन्टी दी है। हमारी गारन्टी है, यदि हमारे इस 'ज्ञान' का पालन करोगे तो एकावतार की गारन्टी है! लेकिन विषय तो होना ही नहीं चाहिए। अन्य सभी कुछ करो। खाओ-पीओ मज़े करो, लेकिन विषय क्यों? विषय तो नर्कगति में ले जानेवाली चीज़ है। आपको ये सब बातें अच्छी लगीं या नहीं?

प्रश्नकर्ता : अच्छी लगती हैं दादाजी, बहुत अच्छी।

दादाश्री : अत: अपने ज्ञान में इतनी ही सावधानी बरतनी है। अन्य कोई सावधानी नहीं बरतनी।

विषय से मुक्ति, वहाँ दसवाँ गुणस्थानक

जिसमें स्त्री को 'परिग्रह' माना जाता है, उस नौवे गुणस्थानक को पार कर ले तो फिर उसे जोखिम नहीं रहता। नौवा गुणस्थानक पार किया यानी काम हो गया! स्त्री का परिग्रह मन-वचन-काया से बंद हो जाए, तब व्यवहार में दसवाँ गुणस्थानक आता है। जब तक स्त्री परिग्रह पार नहीं किया, तब तक नौवा पार किया, ऐसा नहीं कहा जाएगा। स्त्री का विचार आए, तो भी नौवा पार नहीं कर सकता। विषय का विचार आए तो भी नौवा पार नहीं कर सकता, इसलिए व्यवहार तो आपको उच्च स्तर पर लाना ही पड़ेगा न? निश्चय के साथ-साथ व्यवहार भी ऊपर उठाना है। जब तक

स्त्री परिग्रह है, तब तक व्यावहारिक गुणस्थानक आठवें से आगे नहीं बढ़ सकता। वह जब ब्रह्मचर्यव्रत का पालन करेगा, उसके बाद नौवा गुणस्थानक पार कर सकेगा।

प्रश्नकर्ता : ब्रह्मचर्य में आने के बाद बारहवें गुणस्थानक में जा सकते हैं?

दादाश्री : नहीं। बारहवें गुणस्थानक में नहीं जा सकते। इस काल में मैं ही दसवें गुणस्थानक तक पहुँच पाया हूँ न? हमारा निश्चय से बारहवाँ और व्यवहार से दसवाँ गुणस्थानक है।

प्रश्नकर्ता : स्त्री के साथ में पुरुष हो तो स्त्री का गुणस्थानक आगे बढ़ सकता है क्या?

दादाश्री : नहीं बढ़ सकता! हमें बढ़ाने से कोई मतलब भी नहीं है। उनके लिए तो जो है वह ठीक है। उनसे तो कहें कि 'इतना करो' और वह करती रहे तो बहुत हो गया। रास्ता उन्हें दिखाया है। उन्हें कुछ ऐसी उछल-कूद करने की ज़रूरत नहीं है, वर्ना कल सवेरे पति को निकाल बाहर करेगी कि 'मुझे आपसे कोई मतलब नहीं है।'

स्त्री बाधक नहीं है, अज्ञान बाधक है। स्त्री कितनी बाधक है? जिस जन्म में मोक्ष में जाना हो सिर्फ उस जन्म में अंतिम दस, पंद्रह या पच्चीस साल स्त्री की गैरहाज़िरी होनी चाहिए। तभी वह गुणस्थानक में आगे बढ़ पाएगा, वर्ना वह गुणस्थानक नहीं चढ़ सकता। नौवे गुणस्थानक में कब पहुँचता है? कि स्त्री जिसके यहाँ नहीं हो या फिर स्त्री भले ही हो लेकिन उसे स्त्री के विचार नहीं आएँ, विचार और वर्तन नहीं हों। स्त्री से कोई एतराज़ नहीं है। स्त्री कुछ बाधक नहीं है। लेकिन यदि स्त्री के विचार और वर्तन नहीं हों, तो वह नौवा गुणस्थानक पार करके दसवें में आता है। इस काल में 'व्यवहार' दसवें गुणस्थानक से आगे नहीं बढ़ सकता और 'निश्चय' बारहवें गुणस्थानक तक पहुँच सकता है!

'अक्रम मार्ग' में आपको अन्य कोई परिषह तो हैं नहीं, लेकिन आपको स्त्री परिषह है न! स्त्री परिषह में नाटकीय कैस रह पाओगे? यह

'ज्ञान' तो नाटकीय रखे, ऐसा है। राज चला रहा हो, फिर भी नाटकीय रखता है। लेकिन स्त्री परिषह वह तो सबसे बड़ा परिषह है, वह नाटकीय नहीं रहने देता। व्यापार-धंधे बाधक नहीं हैं, स्त्री परिषह बाधक है। स्त्रियाँ बाधक नहीं हैं, स्त्री परिषह बाधक है। स्त्रियाँ तो आत्मा ही हैं। विकारी भाव, वह परिषह कहलाता है, सभी स्त्रियाँ आत्मा ही हैं न?

'ज्ञानीपुरुष' को कितना सुंदर दिखाई देता होगा! सभी जगह शुद्धात्मा ही दिखाई देते हैं। हम नौवे गुणस्थानक में से जब दसवें गुणस्थानक में पहुँचे, तब से अरे! अपार सुख का अनुभव किया! उस सुख का एक छींटा भी यदि बाहर गिरे और मनुष्य उसे चखे तो सालभर के लिए परम सुखी हो जाएगा! इस विषय के कारण ही सभी प्रकार की रुकावटें है न। यही महारोग है!

खंड - २

आत्मजागृति से ब्रह्मचर्य का मार्ग

[१]

विषयी-स्पंदन, मात्र जोखिम

विषयों से वीतराग भी डरे थे

आत्मा और संयोग, दो ही हैं। इनके बीच तीसरा कोई भूत नहीं है। आत्मा शाश्वत है। संयोग वियोगी स्वभाव के हैं। अब आपको जैसा करना हो, वैसा करो और जो विषयी है, वह 'चंदूभाई' है। उससे 'आपको' क्या लेना-देना? 'आप' उसके साथ यारी मत करना कि ले यह 'कॉल' दिया, ऐसा करने का भाव नहीं हो, वह जागृति रखना। विषयों से तो भगवान भी डरे थे। वीतराग किसी भी चीज़ से नहीं डरते थे, लेकिन सिर्फ विषय से ही डरते थे। डरते थे यानी कैसा, कि जब साँप आता है, तब हर एक व्यक्ति पैर ऊपर ले लेता है या नहीं ले लेता!

प्रश्नकर्ता : ले लेता है।

दादाश्री : उसमें, खुद का हित नहीं है, ऐसा जानता है इसलिए ले लेता है न?

प्रश्नकर्ता : हाँ।

दादाश्री : उसी तरह वीतराग भी इतना समझे कि इसमें हित नहीं

है, यह तत्काल इफेक्टिव है, इसलिए यहाँ पर इस बारूदखाने से बहुत दूर रहने जैसा है। इतना डर तो रखना चाहिए न? लोग विषयों से नहीं डरते और साँप से डरते हैं। अरे! साँप से क्यों डरते हो? साँप के सामने हिताहित देखते हैं, तो यहाँ विषय में हिताहित क्यों नहीं देखते? विषय में इस तरह लापरवाह नहीं हो जाना चाहिए। पुलिसवाला पकड़कर करवाए, उसके जैसा होना चाहिए। यहाँ पर विषयों का साइन्स समझ लेना है। यह प्रत्यक्ष ज़हर है, ऐसा ज्ञान हाज़िर रहना चाहिए।

आत्मा सदैव ब्रह्मचारी

अब अन्य क्या कमी लगती है, वह बताओ।

प्रश्नकर्ता : इन षड्‌रिपुओं में से काम को जीतना मुश्किल है।

दादाश्री : हाँ। काम को जीतना नहीं है। काम को हराना भी नहीं है और जीतना भी नहीं है।

प्रश्नकर्ता : तो फिर उसका क्या करना होता है?

दादाश्री : आप तो ब्रह्मचारी ही हो। यह तो चंदूभाई में जो डिस्चार्ज भाव हैं, जो भरा हुआ माल है, उसका निकाल कर देना है। हमने एक टंकी में माल भरा हो तो फिर हमें निकाल तो करना पड़ेगा न, या नहीं करना पड़ेगा?

प्रश्नकर्ता : करना पड़ेगा।

दादाश्री : जैसा भरा हुआ होगा, डामर जैसा भरा होगा तो डामर जैसा। शुद्ध पानी होगा तो शुद्ध पानी, दूध भरा होगा तो दूध। जैसा भरा होगा, उसका निकाल तो करना पड़ेगा न!

प्रश्नकर्ता : तो इसे सैद्धांतिक रूप से देखा जाए तो, यह ब्रह्मचर्य भी निकाली चीज़ों में जाएगा?

दादाश्री : आत्मा निरंतर ब्रह्मचारी ही है, आत्मा को अब्रह्मचर्य हुआ ही नहीं। ब्रह्मचर्य तो *पुद्‌गल* का ही झंझट है। इसलिए जब आप चंदूभाई

को ब्रह्मचारी बनाओगे, उस दिन आपका निबेड़ा आएगा। वर्ना मुक्त नहीं होने देगा। और कैसा ब्रह्मचारी? पत्नी होने के बावजूद ब्रह्मचारी रहे तो उसे बहुत चिंता नहीं रहेगी। यह ब्रह्मचर्य का भाव है न, वह तो अंतिम जन्म में सारे भाव छूट जाते हैं। उसके लिए कुछ सौ-दो सौ जन्म पहले से कसरत नहीं करनी पड़ती। अंतिम जन्म में छूट जाता है सबकुछ। लेकिन जिसे मुक्त होना है, उसे इसके भरोसे नहीं रहना है। अपने आप ऑटोमेटिक चला जाए, तो अच्छी बात है। क्योंकि वह न तो *पुद्गल* के लिए ज़रूरी चीज़ है और न ही आत्मा के लिए ज़रूरी चीज़ है। कल्पित रूप से खड़ी हो चुकी चीज़ है यह।

इसलिए आपको चंदूभाई से कहते रहना है। आपको कभी-भी उस रूप को सिर पर नहीं लेना है। आप चंदूभाई से कहते रहना कि, 'यह पॉइज़न है! आपको जैसा अनुकूल आए, वैसा करो।' आपको उपदेशदाता बनना है। आप खुद तो 'ब्रह्मचारी' ही हो, लेकिन अब यह जो अलग किया हुआ हिस्सा है, वह ऐसा है कि उसे आपको कहना पड़ेगा कि 'यह पॉइज़न है।' अपने ज्ञान में जो भाव है, उसे यह प्रज्ञा तुरंत पकड़ लेती है। यह प्रज्ञा उसे पकड़कर तुरंत अमल में लाती है। बाकी सब चल सके, ऐसा है। क्योंकि विषय को भगवान ने 'रौद्रध्यान' कहा है। शादीशुदा हों, मियां-बीवी राज़ी हों, तो उसे भगवान ने रोग नहीं कहा है। क्योंकि उसमें कहाँ गुनाह आया? किसे दुःख दिया? दोनों राज़ी हों, वहाँ न तो सरकार हस्तक्षेप करती है और न ही नेचर हस्तक्षेप करता है। नेचर को कोई लेना-देना नहीं है। सिर्फ इतना ही है कि उसमें एक ही बार के विषय में अनंत जीव मर जाते हैं। उसका फिर जोखिम आता है, इसलिए उसे 'रौद्रध्यान' कहा है। विषय के जो स्पंदन खड़े होते हैं, उन स्पंदनों में से वापस परमाणु भोगने पड़ते हैं। बाकी, इसमें कोई किसी को आमने-सामने दुःख देता ही नहीं है। दोनों को आनंद होता है। किसी को दुःख दिया जाए, तभी उसे नैचुरल गुनाह कहा जाता है।

किसी ने ऐसा स्पष्ट रूप से नहीं बताया है, लेकिन यदि स्पष्ट रूप से बताए तो फिर लोग उसका दुरुपयोग करेंगे, ऐसे हैं। इसलिए विषय

की सिर्फ निंदा ही की है। निंदा यानी विषय को ऐसे जोखिम के रूप में बताया गया है। विषय के जो स्पंदन किए होंगे, तो उनका फल आए बगैर रहेगा ही नहीं न? आपने दरिया में एकबार ढेला फेंका तो स्पंदन उत्पन्न होते ही रहेंगे!

यानी विषय बहुत ही रोगिष्ठ चीज़ है।

भीतर नाच तो बाहर नाचनेवाली हाज़िर

सुबह-सुबह पाँच बार बोलना कि, 'इस जगत् की कोई विनाशी चीज़ मुझे नहीं चाहिए।' मुझे यानी 'मैं शुद्धात्मा हूँ' उस तरह से और जो चाहिए, वह 'चंदूभाई' को चाहिए और चंदूभाई 'व्यवस्थित' के अधीन है। 'व्यवस्थित' में जो हो, सो भले हो और 'व्यवस्थित' में नहीं हो, वह भी भले हो। यदि इतना रहेगा तो भीतर कोई रस(रुचि) खड़ा हुआ या नहीं, आपको उसका पता चलेगा। खास करके अन्य कोई रुचि खड़ी हो ऐसा नहीं है, लेकिन इस काल में वातावरण इतना दूषित हो गया है कि स्त्री को पुरुष की ओर देखते समय और पुरुष को स्त्री की ओर देखते समय आँख गड़ाकर नहीं देखना चाहिए। नहीं तो अन्य और कोई खास दोष खड़ा हो, ऐसा नहीं है। या फिर जैसा ऊपर बताया है, सुबह वैसा बोलकर करना, क्योंकि आपमें वैसा वैराग्य नहीं है। आपमें जागृति है, लेकिन संपूर्ण रूप से जितनी जागृति होनी चाहिए वह नहीं रह पाती, क्योंकि अभी तक पृथक्करण नहीं हुआ है।

जागृति तो उसे कहते हैं कि किसी स्त्री को देखो या पुरुष को देखो, चाहे किसी को भी देखो, तो राग होने से पहले उसका पूरा हिसाब दिखाई दे जाए। इस चमड़ी की वजह से सब सुंदर दिखता है लेकिन इस चमड़ी को निकाल दिया जाए तो कैसा दिखेगा? यह गठरी बाँधी हुई हो, और उस पर से कपड़ा निकाल दें तो कैसा दिखेगा? जागृत को तो वैसा ही दिखाई देता है सब। संपूर्ण जागृति कब कहलाती है? यह सब उसे, वैसा ही दिखाई दे। लेकिन इस काल की वक्रता ऐसी है कि वह जागृति को टिकने नहीं देती, इसलिए सावधान रहना चाहिए। नहीं तो फिर रोज़ सुबह-सुबह बोलना और उस के प्रति 'सिन्सियर' रहना।

यदि चौथे *आरे* में मैंने यह ज्ञान दिया होता तो मुझे ऐसे सावधान नहीं करना पड़ता। यह पाँचवाँ *आरा* (कालचक्र के बारहवें हिस्से में से एक भाग) बहुत कठिन *आरा* है, बहुत वक्र *आरा* है, बहुत वक्रतावाला है। वक्रता यानी कपट। कपट का संग्रहस्थान ही कह दो न! अत: हम क्या कहते हैं कि स्त्री का मिलना, वह जोखिम नहीं है। लेकिन आँखों का आकर्षित होना, जोखिम है। इसलिए उसका प्रतिक्रमण करके केस खारिज कर देना। शास्त्रकारों ने भी कहा है कि नजरें नीची करके चलना।

प्रश्नकर्ता : विषय के प्रति जो लगाव है, आकर्षण के लिए जो लगाव है, वह पकड़ता है या मिकैनिकल क्रिया पकड़ती है?

दादाश्री : वह लगाव पकड़ता है, क्रिया नहीं पकड़ती। इसीलिए हम कहते हैं न कि शादी की है तो उसका *निकाल* कर। उसमें हर्ज नहीं है, लेकिन जो लगाव है, वह पकड़ता है। इसीलिए हमने कहा है कि विषय विष नहीं है। विषयों में निडरता, वही विष है। 'गलत हुआ है' मन में हमेशा ऐसा तो रहना ही चाहिए। बाकी निकाल करो न! निकाल करने में हर्ज नहीं है, लेकिन लगाव तो रहना ही नहीं चाहिए। लगाव के प्रतिक्रमण-प्रत्याख्यान करना।

नियम कैसा है कि भीतर जो परमाणु होते हैं, वे ही बाहर आ मिलते हैं। भीतर खुद में नाच शुरू हो जाए, उसके बाद नाचनेवाली दिखाई देती है। यानी पहले खुद में ही शुरू हो जाता है, उसके बाद सभी ओर दिखाई देता है। यों ही तो कुछ होता ही नहीं है न? यदि खुद में माल भरा हुआ होगा, तभी आ मिलेगा, वर्ना मिलेगा ही नहीं न?

विषय का जाल तो देखो

पेड़ पर आम दिखाई दें और अगर लोगों ने देखे, तो रात में आकर ले जाते हैं। उसी प्रकार कोई स्त्री किसी को पसंद आ जाए, तो रात को आकर उसे उठा ले जाते हैं। तो ये सब भी आम ही हैं न? जो भोग लिए जाते हैं, वे सभी आम हैं। अच्छे किस्म के हाफूस के आम हों, लेकिन

भोग लिए जाने के बाद गुठलियाँ पड़ी रहती हैं, लेकिन इसमें मरते समय गुठली साथ में लेकर जाते हैं।

विषय यदि मजबूरन भोगना पड़े तो वह विष नहीं है। तू पैसे खुलकर खर्च करता है या मजबूरन? यह तो सिर्फ पैसों की ही बात है, लेकिन एक ही बार के विषय में तो कितने ही अरबों का नुकसान है, भयंकर हिंसा है। पैसों की इतनी क़ीमत नहीं है, पैसा तो फिर से आ जाएगा। ये सारे हिसाब भुगतने पड़ेंगे। जितने हिसाब बाँधने हों, उतने बाँधना। जितनी ताकत हो, उतने हिसाब बाँधना। बाकी, यदि भुगतते समय सहन नहीं हो और चीखे-चिल्लाए, उसके बजाय पहले से ही सावधान रहकर हिसाब बाँधना। वे सारे हिसाब चुकाने तो पड़ेंगे न? विषय की वेदना से तो नर्क की वेदना अच्छी। यह विषय तो वापस बीज डालता है। नर्क में बीज नहीं डलते, नर्क में सिर्फ भुगतना ही होता है, डेबिट चुकता हो जाता है। और यदि क्रेडिट होगा तो वहाँ देवगति में पूरा होगा। जबकि विषय में तो नये बीज पड़े बगैर रहते ही नहीं। ऐसे विचार तो हमें बचपन से ही आते थे, बहुत सोच चुके हैं हम।

'*गणे काष्ठनी पूतडी, ते भगवान समान*' अब काष्ठ की पुतली कैसे माने? ऐसा मानना कोई आसान बात है?! ये लोग तो, यदि सचमुच काष्ठ की पुतली लाकर दे दें फिर भी उसे आलिंगन करते रहें, ऐसे हैं! अब यहाँ देखे और वैराग्य आए, वह तो भगवान ही कहलाएगा। हड्डियाँ, माँस और खून से भरी हुई यह देह, इसके जैसी जगत् में कोई गंदगी नहीं है। जब इसी देह से मोक्ष का काम निकाल दे तो उसके जैसा उत्तम और कुछ भी नहीं! मनुष्य देह है, उससे जिस तरह का काम निकालना हो, वैसा हो सकता है।

ब्रह्मचर्य से तो मन को संस्कारी बनाना है और ज्ञान समझना है कि कहीं पर भी आकर्षण नहीं हो। मुझे ये स्त्री-पुरुष कैसे दिखाई देते हैं? पहले बिल्कुल नंगे दिखाई देते हैं, फिर चमड़ी निकाल दी गई हो, ऐसे दिखाई देते हैं। इससे फिर वैराग्य ही रहेगा न? वैराग्य कहीं मार-पीटकर नहीं आता, वह तो ज्ञान से आता है।

प्रश्नकर्ता : यह तो बहुत गूढ़ है।

दादाश्री : इसे समझने बैठें तो बहुत गहन है, लेकिन फिर भी आसान है। कहीं पर भी विरोधाभास उत्पन्न नहीं होता। यह सैद्धांतिक ज्ञान है और सबल अनुभवजन्य ज्ञान है। अपना तो यह अक्रम मार्ग है, इसलिए हमने खाने-पीने की छूट दी है, हर प्रकार से छूट दी है, लेकिन हम विषय के सामने सावधानी रखने को कहते हैं! बाकी, विषय से तो भगवान भी डरते थे। अपने यहाँ तो सिनेमा की भी छूट दी है। क्योंकि सिनेमा में ऐसा तन्मयाकार नहीं होता, जबकि विषय में तो अत्यधिक तन्मयाकार हो जाता है। मनुष्य का स्वभाव हरहाया है। हरहाया मतलब जहाँ देखा वहाँ मुँह डाला, जहाँ देखा वहाँ मुँह डाला। बाकी सभी चीज़ों में रूप देखना है, इसमें रूप है ही कहाँ कि उसे देखें? ये तो ऊपर से ही सुंदर दिखते हैं। आम तो अंदर से कच्चा हो, फिर भी स्वादिष्ट लगता है और दुर्गंध भी नहीं आती और इसे यदि काटें तो दुर्गंध का अंत ही नहीं आए!

अत: यहीं पर माया है। पूरे जगत् की माया यहीं भरी पड़ी है। स्त्रियों की माया पुरुषों में है और पुरुषों की माया स्त्रियों में है।

प्रश्नकर्ता : इसी कारण सब अटका हुआ है न?

दादाश्री : हाँ, इसी कारण अटका हुआ है।

सबसे बड़ी अटकन विषय की

कृपालुदेव को लल्लूजी महाराज ने सूरत से पत्र लिखा था कि हमें आपके दर्शन करने मुंबई आना हैं। तब कृपालुदेव ने कहा कि मुंबई मोहमयी नगरी है, साधु-आचार्यों के लिए यह काम की नहीं है। यहाँ तो जहाँ-तहाँ से मोह घुस जाएगा। आपके मुँह में से नहीं घुसेगा तो कान से घुस जाएगा, आँख से घुस जाएगा। आखिर में हवा जाने के छिद्र हैं, वहाँ से भी मोह घुस जाएगा! इसलिए यहाँ आने में फायदा नहीं है। इसका नाम कृपालुदेव ने क्या रखा, मोहमयी नगरी। उसमें मैंने आपको यह 'ज्ञान' दिया है। अब क्या वह मोहमयी गायब हो गई है? क्या बी-ओ-एम-बी-ए-वाय, बोम्बे हो गया? नहीं, मोहमयी ही है। इसलिए हम आपसे कहते

हैं कि अन्य पाँच इन्द्रियों के विषय के नहीं, लेकिन स्त्रियों से और पुरुषों से एक ही बात कहते हैं कि जहाँ कहीं स्त्री-विषय या पुरुष-विषय से संबंधित विचार आया कि तुरंत वहीं के वहीं आप प्रतिक्रमण कर लेना। 'ऑन द स्पॉट' तो कर ही लेना। लेकिन बाद में उसके सौ-दो सौ प्रतिक्रमण कर लेना।

कभी यदि होटल में नाश्ता करने गए और उसका प्रतिक्रमण नहीं किया होगा तो चलेगा। मैं उसका प्रतिक्रमण करवा लूँगा। लेकिन यह विषय से संबंधित रोग नहीं घुसना चाहिए। यह तो भारी रोग है। इस रोग को निकालने की औषधि क्या? तब कहे कि प्रत्येक मनुष्य को जहाँ अटकन होती है, वहाँ पर यह रोग होता है। कोई स्त्री जा रही हो, तो उसे देखते ही किसी पुरुष में तुरंत अंदर वातावरण बदल जाता है। अब यों तो सभी, हैं तो तरबूजे ही लेकिन वह तो सविस्तार उसका रूप ढूँढ निकालता है। इस फूट (बड़ी ककड़ी) के ढेर पर कुछ राग होता है? लेकिन इन्सान हैं इसलिए इन्हें रूप की पहले से आदत है, 'ये आँखें कितनी अच्छी हैं, इतनी बड़ी-बड़ी आँखें है।', ऐसा कहते हैं। 'अरे, इतनी बड़ी-बड़ी, अच्छी आँखें तो उस भैंस के भाई की भी होती हैं, वहाँ पर क्यों राग नहीं होता तुझे? तब कहे वह तो भैंसा है और यह तो इन्सान है। अरे! यह तो फँसने की जगह हैं।

देखतभूली यदि टले तो

अक्रम विज्ञान क्या कहता है कि फर्स्ट क्लास हाफूस आम देखने में हर्ज नहीं। तुझे सुगंधी आई उसमें भी हर्ज नहीं, लेकिन भोगने की बात मत करना। ज्ञानी भी आम को देखते हैं, सूँघते हैं! ये विषय जो भोगे जाते हैं, वे तो 'व्यवस्थित' के हिसाब के अनुसार भोगे जाते हैं। वह तो 'व्यवस्थित' है ही! लेकिन बिना वजह बाहर आकर्षण हो न, उसका क्या अर्थ है? जो आम घर पर आनेवाले नहीं हैं, उनके प्रति आकर्षण रहे, वह जोखिम है सारा। उससे कर्म बँधेंगे!

श्रीमद् राजचंद्रजी ने कहा है कि, 'देखतभूली टले तो सर्व दु:खों

का क्षय होगा।' शास्त्रों में पढ़ते हैं कि स्त्री के प्रति राग मत करना लेकिन स्त्री को देखते ही वापस भूल जाते हैं, उसे 'देखतभूली' कहा है। मैंने तो आपको ऐसा ज्ञान दिया है कि अब आपको 'देखतभूली' भी नहीं रही, आपको शुद्धात्मा दिखाई देते हैं। बाहरी पैकिंग चाहे कैसी भी हो, फिर भी पैकिंग के साथ हमें क्या लेना-देना? पैकिंग तो सड़ जाएगा, जल जाएगा, पैकिंग से क्या मिलेगा? इसलिए ज्ञान दिया है कि आप शुद्धात्मा देखो ताकि 'देखतभूली' टले! 'देखतभूली' टले यानी क्या कि यह जो मिथ्या दृष्टि है, वह दृष्टि बदले और सम्यक् दृष्टि हो जाए तो सभी दुःखों का क्षय होगा! फिर वह भूल नहीं होने देगी, दृष्टि आकृष्ट नहीं होगी।

हम सब तो सामनेवाले व्यक्ति में शुद्धात्मा ही देखते हैं, फिर हममें और कोई भाव कैसे उत्पन्न होगा? वर्ना मनुष्य को तो कुत्ते पर भी राग होता है। बहुत अच्छा सुंदर कुत्ता हो, तो उस पर भी राग हो जाता है। लेकिन यदि आप शुद्धात्मा देखो तो राग होगा? इसलिए आप शुद्धात्मा ही देखना। यह 'देखतभूली' टले ऐसी है नहीं। और यदि टल जाए तो सर्व दुःखों का क्षय हो जाए। यदि दिव्यचक्षु होंगे तो 'देखतभूली' टलेगी, वर्ना कैसे टले?

विज्ञान से विषय पर विजय

प्रश्नकर्ता : इसका मतलब यह हुआ कि राग भी नहीं होना चाहिए और भूल जाना चाहिए?

दादाश्री : अपना यह ज्ञान ऐसा है कि राग हो, ऐसा तो है ही नहीं। लेकिन जब आकर्षण हो, उस घड़ी उसके शुद्धात्मा देखोगे, तो आकर्षण नहीं होगा। 'देखतभूली' यानी देखे और भूल हो जाती है। जब तक नहीं देखा हो तब तक कोई भूल नहीं होती और देखा कि भूल हो जाती है। जब तक आप कमरे में बैठे रहो, तब तक कुछ नहीं होता लेकिन शादी में गए और देखा, कि फिर से वापस भूलें होने लगती हैं। वहाँ पर यदि आप शुद्धात्मा देखते रहो तो दूसरा कोई भाव उत्पन्न नहीं होगा और पूर्व कर्म के धक्के से यदि भाव उत्पन्न हो गया, तो उसका प्रतिक्रमण कर लेना,

यह उपाय है। यहाँ घर पर बैठे रहें तब तक कोई बुरे विचार नहीं आ रहे थे और शादी में गए कि विषय के विचार खड़े हो गए। संयोग आ मिला कि विचार खड़े हो जाते हैं। यह 'देखतभूली' सिर्फ दिव्यचक्षु से ही टल सके, ऐसी है। दिव्यचक्षु के बिना नहीं टल सकती।

प्रश्नकर्ता : यह तो संयोगों को टालने की बात हुई न? तो फिर एक स्थान पर ही बैठे रहना चाहिए?

दादाश्री : नहीं, अपना विज्ञान तो अलग ही तरह का है, अपने लिए तो 'व्यवस्थित में जो हो, सो भले हो', लेकिन वहाँ पर आज्ञा में रहना चाहिए। जहाँ अंगारे हों, वहाँ आज्ञा में नहीं रहते? अंगारों को भूल से भी नहीं छूते हो न? उसी प्रकार यहाँ विषयों में भी सँभालना चाहिए कि ये अंगारे हैं, प्रकट अग्नि है। जो-जो चीज़ें इस जगत् में आकर्षणवाली हैं, वे सब प्रकट अग्नि है। वहाँ सावधान रहना चाहिए।

प्रश्नकर्ता : उसका मतलब यह हुआ कि हम जिसे देखते हैं, वह अपना नहीं है फिर भी उसके प्रति जो भाव होता है, वह नहीं होना चाहिए, ऐसा?

दादाश्री : वह अपना है ही नहीं। *पुद्‌गल* अपना हो ही नहीं सकता। यदि अपना यह *पुद्‌गल* ही अपना नहीं है, तो उसका *पुद्‌गल* अपना कैसे हो सकता है?

आकर्षण, प्रकट अग्नि है। भगवान ने आकर्षण को तो मोह कहा है। मोह की जड़ ही आकर्षण है। ऐसा सब समझकर लक्ष्य में रखना चाहिए न? हमें दवाई के बारे में तो जान लेना चाहिए न कि इसकी दवाई कौन सी है?

यह विज्ञान है। संपूर्ण भाव से विज्ञान है। अंगारों को क्यों नहीं छूते? वहाँ क्यों सतर्क रहते हो? क्योंकि उसका फल तुरंत ही मिल जाता है। और विषय में तो लालच होता है, इसलिए लालच से फँसता है। अंगारो को छूना अच्छा है। उसका उपाय है। उस पर कुछ भी लगाने से ठंडक

हो जाती है। लेकिन विषय तो आज लालच में फँसाकर अगले जन्म के कर्म बाँध लेता है। यह तो अपने ज्ञान को भी धक्का मारनेवाला है, इतना बड़ा विज्ञान है, उसे भी धक्का मार दे, ऐसा है! इसलिए सावधना रहना!

'देखतभूली' का अर्थ क्या है? मिथ्या दर्शन! लेकिन अन्य सभी तरह की 'देखतभूली' हों तो उसमें हर्ज नहीं है, लेकिन इस विषय से संबंधित 'देखतभूली' की बहुत बड़ी जोखिमदारी है। अब वहाँ 'देखतभूली' का उपाय क्या है? आपको ज्ञान मिला हो तो खुद को भूल का पता चलता है कि यहाँ पर भूल हुई, यहाँ मेरी दृष्टि बिगड़ गई थी। वहाँ फिर खुद आलोचना-प्रतिक्रमण-प्रत्याख्यान करके भी धो लेता है। लेकिन जिसे यह ज्ञान नहीं मिला है, वह बेचारा क्या करेगा? उसे तो भयंकर गलत चीज़ को सही मानकर चलना पड़ता है, यह आश्चर्य ही है न?

दृष्टि से कुछ नया दिखा और आँखें आकृष्ट हों तो तुरंत प्रतिक्रमण कर लेना। अनादिकाल से आँखें ही आकर्षित होती रही हैं न? नया माल दिखा कि नज़रें खिंचती हैं। लेकिन नया है ही नहीं। यह तो वही का वही खून, पीप और हड्डियाँ। वही माल है। सिर्फ चादरों में फर्क है। किसी की 'ब्लेक कॉटन' की, किसी की 'व्हाइट कॉटन' की, किसी की 'यलो कॉटन' की। चादरें सभी अलग-अलग तरह की हैं। इनमें कुछ देखने लायक है ही नहीं, अंदर वही का वही माल है! यह रेशमी चादर में बाँधा हुआ है और अगर रेशमी चादर में बाँधा हुआ नहीं हो तो घिन आएगी! हमें तो इसमें वही का वही दिखाई देता है और आप तो चादरें देखते रहते हो, लेकिन अंदर माल देखो न! भीतर माल तो वही का वही है न? इसलिए सिर्फ इसी में, यहाँ पर जो मिला हो, जो 'फाइल' है, इतना संतोष रखकर काम लेना और बाकी जो कुछ भी खाना हो, दहीबड़े-आलूबड़े, जितने खाने हों उतने खा लेना! बस इतना सा, यह विषय ही जीतना है। किसी भी तरह, और कुछ नहीं। बाकी तो खाओ-पीओ और मज़े करो न!

जोखिमों का भी जोखिम अर्थात् विषयरोग की जड़

जैसे कि किसीने तम्बाकू बोया हो और उसके साथ दूसरा कोई पौधा

उग जाए, तो उसके उगते ही समझ लेना चाहिए कि यह तम्बाकू नहीं है। इसलिए उसे उखाड़कर फेंक देना चाहिए, वर्ना पौधा बड़ा हो जाएगा। इस काल के खेत तो निरे बिगड़े हुए ही हैं। वर्ना 'यह विज्ञान' काम निकाल दे, ऐसा है। एक-एक को भावी तीर्थंकर बना दे ऐसा है, यह विज्ञान!

बाकी, विषय के लिए तो जैनधर्म में क्या कहा है कि ज़हर खाकर मर जाना, लेकिन विषय मत करना। ब्रह्मचर्य टूटना ही नहीं चाहिए, ऐसा जैनधर्म कहता है। लेकिन हमने यहाँ अक्रम मार्ग में इसमें छूट दी है कि, भाई, पत्नी हो तो घर पर रहना और अन्यत्र दृष्टि मत बिगाड़ना। यदि पत्नी नहीं हो तो प्रतिक्रमण करते रहना। क्योंकि इससे, जो वीर्य अधोगामी जा रहा होगा, वह ऊर्ध्वगामी हो सकता है। वीर्य निरंतर अधोगामी स्वभाव का है। उसे रोको, विधि करो और प्रतिक्रमण करो, तो ऐसे करते-करते सब ऊर्ध्वगामी हो जाएगा।

बाहर कुछ देखा और दृष्टि आकृष्ट हो तो समझना कि यह पहले का पड़ा हुआ बीज है। वह बीज जब उगे, तब आप क्या करते हो?

प्रश्नकर्ता : वहाँ प्रतिक्रमण हो ही जाता है।

दादाश्री : उसके तो निरंतर प्रतिक्रमण करते रहने पड़ेंगे। अपने को तो समझ में आता है कि अंदर यह बीज पड़ा हुआ है, अतः यह तो बड़ा जोखिम है। यह विषय तो बहुत जोखिमवाली चीज़ है। सामनेवाला व्यक्ति जहाँ-जहाँ जाए, वहाँ आपको जाना पड़ेगा। फिर सामनेवाला व्यक्ति बेटा बनकर आएगा। यानी इतना बड़ा जोखिम खड़ा हो जाता है। तभी तो विषय के लिए हम यहाँ बहुत सख्ती रखते हैं न! अन्य सबकुछ चलाया जा सकता है, लेकिन विषय नहीं चलाया जा सकता।

यह तो अक्रम विज्ञान है। इसलिए इतना ही जोखिम रखा है। वर्ना जैनधर्म ने तो बाकी सब को भी जोखिम ही कहा है। सबको जोखिम कहेंगे तो कैसे अंत आएगा? फिर लोग क्या कहेंगे कि, 'मुझे आपके साथ धंधा ही नहीं करना है, सौदा ही नहीं करना।' लेकिन यदि एक ही चीज़ रही तो कहेंगे कि, 'सब सहन कर लूँगा, लेकिन यदि यही एक चीज़ है न,

तब तो मैं इसे सँभाल लूँगा।' और तभी उसे विज्ञान का लाभ मिलेगा न! अतः हमने तो इसी एक चीज़ पर ज़ोर दिया है।

खेद द्वारा छूट सकते हैं, विषय से

ज़रा सी भी चंचलता उत्पन्न नहीं होनी चाहिए। विषय में चंचलता, वही अनंत जन्मों के दुःख की जड़ है। दिनोंदिन दुःख ही उत्पन्न होते रहते हैं, वर्ना आत्मा प्राप्त होने के बाद दुःख कैसे उत्पन्न हो सकता है? यह तो भयंकर दोष कहलाता है। वर्ना इससे तो दुःख हो तो भी चला जाए और सुख आए। सभी अच्छी चीज़े आ मिलें। आत्मा प्राप्त हुआ, तब सारी सुविधाएँ सरलता से प्राप्त होती रहें, पद्धति अनुसार होती रहें। यों ही गप्प नहीं चलेगी न! यह तो वीतरागों का विज्ञान है!

सच्चा सुख नहीं मिला है, इसलिए ये सभी विषय भोग रहे हैं, वर्ना विषय क्यों भोगते? आत्मा विषयी है ही नहीं, आत्मा निर्विषयी है। यह तो कर्मों के प्रताप से दुःख होता है, वह सहन नहीं होने की वजह से ऐसे गटर में हाथ डालते हैं। गटर में मुँह डालकर गटर की गंदगी पीते हैं। ज्ञान नहीं था इसलिए सहन नहीं होता था, अब यह ज्ञान दिया है तो आप में सहन करने की शक्ति उत्पन्न हो गई है। आपको जुदापन का भाव रह सकता है। तो फिर विषय क्यों होने चाहिए? लेकिन फिर भी परिणाम कोई भी नहीं बदल सकता, क्योंकि ये *पुद्गल* परिणाम हैं और यह तो रिज़ल्ट हैं। रिज़ल्ट नहीं बदला जा सकता लेकिन रिज़ल्ट पर खेद, खेद और खेद रहे तो आप छूट जाओगे। आपको यदि खेद है, तो आप मुक्त हो और रिज़ल्ट में एकाकार हो तो बंधन है।

यह विज्ञान इतना सुंदर है! आज तक किसी ने यह स्पष्ट नहीं किया कि इस व्यक्ति ने पूरणपूरी खाई, तो उसके लिए वह गुनहगार है क्या? तब हम क्या कहते हैं कि नहीं, वह गुनहगार नहीं है, फिर भी जगत् ने उसे गुनहगार माना है। उसका कारण यह है कि उसके पीछे उसके पूरणपूरी खाने के भाव होते हैं कि पूरणपूरी बहुत अच्छी है या फिर बहुत खराब है। इसलिए ये लोग पूरणपूरी नहीं खाने देते। यदि अंदर से भाव नहीं पलटें

तो विषयों में कोई हर्ज नहीं है। और हमने वैसा ही ज्ञान दिया है। इस ज्ञान से अंदर भाव नहीं पलटते, इसलिए बाहर के लिए हमने कोई एतराज़ नहीं उठाया। आप पूरणपूरी खा सकते हो और भीतर आप अपने शुद्धात्मा में रह सकते हो और देख सकते हो। ऐसा है यह विज्ञान। पूरणपूरी में तन्मयाकार हुए बगैर नहीं रह सकते। यदि कोई भक्त हो तो द्वेष करता है कि, 'पूरणपूरी क्यों बना रहे हैं?' यानी 'ऐसी चीज़ नहीं बनानी चाहिए', वर्ना उसीमें चित्त चला जाता है। जबकि पूरी दुनिया तो राग करती रहती है कि 'पूरणपूरी तो बहुत अच्छी है, बनाएँ तो अच्छा।' उसीमें चित्त रहा करता है!

सत्संग से उतरे ज़ंग

इसलिए हमने हलका(कम) कर दिया है। इस जगत् ने जो माना है न, स्थूल भाग को ही धर्म की शुरूआत माना है। लेकिन हमने कहा कि स्थूल भाग को ही निकाल दो! इस कलियुग में स्थूल भाग को पकड़ने गए उसी की तो यह सब मार है न! स्थूल भाग तो रोंग ही है और कलियुग में जो स्थूल भाग रूपक में है, उसमें से एक भी राइट नहीं है। इसलिए हमने कहा कि जहाँ दिवाला ही है, बाहर का वह भाग फेंक दो, कट ऑफ कर दो। वह तो रिज़ल्ट है, उसे अब लेट गो करो।

प्रश्नकर्ता : आज बहुत अच्छा सत्संग मिला।

दादाश्री : हाँ, ब्रह्मचर्य पर बात निकली न! ज़ंग लग गया है, उसे झाड़ना तो पड़ेगा न? जितने भी पुराने गुनाह हुए हों, उन्हें माफ़ कर देने को तैयार हूँ, लेकिन वैसा नया कुछ भी नहीं चलेगा। अब आपको सच्चा सुख मिला है। जब तक सच्चा सुख नहीं था, तब तक आरोपित सुख भोगा। लेकिन अब खुद का सुख, परमसुख कि जो आप जब भी माँगो तब मिले ऐसा है, तो फिर अब आपको यह सब क्यों चाहिए! कोई कहे कि पिछला कर्म बाधा डाल रहा है। तो वह बाधक हो सकता है, लेकिन पिछला कर्म बाधा डाल रहा है, ऐसे कब कह सकते हैं कि मनुष्य अनजाने से कुएँ में गिर जाए न, तब ऐसा कह सकते हैं कि पिछला कर्म बाधा डाल रहा

है। वर्ना यदि ऐसा निश्चय हो कि मुझे गिरना ही नहीं है, ऐसे विषय के कुएँ में गिरना ही नहीं है, ऐसा निश्चय होना चाहिए। फिर भी यदि गिर पड़े तो उसका गुनाह माफ़ कर देते हैं। लेकिन जो जान-बूझकर कुएँ में गिरता है, उसका गुनाह माफ़ नहीं करते। लेकिन अपने यहाँ तो मैं सारे गुनाह माफ़ करता हूँ। फिर अब और कितनी माफ़ी दें? जहाँ जोखिम नहीं हो, वहाँ छूट देते ही हैं न, सबकुछ खाने-पीने की छूट देते ही हैं न? क्या नहीं दी है सारी छूट?

यह तो इस काल का आश्चर्य है। यह तो ग्यारहवाँ आश्चर्य है! आदमी स्त्री के साथ रहते हुए जगत् के दु:खों का अभाव अनुभव करे, ऐसा कभी हुआ नहीं है! जहाँ पूरा जगत् दु:खी है, वहाँ संसारी दु:ख का अभाव, वह तो सबसे बड़ा पुरुषार्थ कहा जाएगा!

अब आपका यह पूर्ण हुआ, ऐसा कब माना जाएगा? जब आपको देखकर सामनेवाले को समाधि महसूस हो, आपको देखकर सामनेवाला दु:ख भूल जाए, तब पूर्ण हुआ माना जाएगा! आपका हास्य ऐसा दिखाई दे, आपका आनंद ऐसा दिखाई दे कि सभी को हास्य उत्पन्न हो, तब समझना कि खुद के सारे दु:ख गए! आप सभी को अभी टेन्शन रहता है और वह 'टेन्शन' भी हमारी आज्ञा में नहीं रहने के कारण है। आज्ञा तो इतनी सुंदर है और बहुत आसान है। लेकिन अब जो कुछ भोगने का हो, उससे बच नहीं सकते न?! और उसमें हम हस्तक्षेप नहीं कर सकते न! लेकिन कभी न कभी इसमें से बाहर निकल जाओगे। क्योंकि जब सही रास्ता मिल जाए, उसके बाद कोई व्यक्ति मार्ग नहीं चूकेगा न?

[२]

विषय भूख की भयानकता

असंतोष की भूख, अब कब छूटेगी ?

किसी पुरुष को स्त्रियों के सामने नहीं देखते रहना चाहिए और किसी स्त्री को पुरुष के सामने नहीं देखते रहना चाहिए। जो खुद का है, उसी की छूट है। हलवाई की दुकान में लोग देखते नहीं रहते। क्योंकि वे जानते है कि हमारी नहीं है। लेकिन ये पुरुष, स्त्रियों को देखते रहते हैं और स्त्रियाँ, पुरुषों को देखती रहती हैं। अरे! इसमें देखने का है क्या? ये तो तरबूजे जा रहे हैं सभी। इनमें क्या देखना है?

ऐसा कोई नहीं बताता! 'चलने दो', सब ऐसा ही कहते रहते हैं न! लेकिन यह तो भयंकर जोखिम है। खुद के हक का भोगो। खुद की परिणीता स्त्री हो, उस स्त्री के माता-पिता शादी करवाते हैं और गाँववाले भी शामिल होते हैं, यानी सभी लोग 'एक्सेप्ट' करते हैं न? उस हक में एतराज़ नहीं है, लेकिन बाकी कुछ तो देखना ही नहीं चाहिए। अन्यत्र कहीं-भी दृष्टि नहीं बिगाड़नी चाहिए। लेकिन ऐसा उपदेश किसी ने नहीं दिया। ऐसी ही पोल चलने दी, इसलिए गाड़ी उल्टी चली।

यह तो जगत् है, कहाँ-कहाँ दृष्टि नहीं बिगड़ेगी? क्योंकि तरह-तरह के आमों का संग्रहालय है यह तो। हाफूस के आम, रत्नागिरि के, आदि तरह-तरह के आम तो फिर आदमी बेचारा क्या करे? इतना 'कंट्रोल' कैसे हो सकेगा? यह ज्ञान लिया हो तो 'कंट्रोल' रख सकता है। बाकी, *अणहक्क* का भोगने का विचार आए, तभी से जानवर गति में जाता है। लोगों के मन में ऐसा होता है कि 'मेरा क्या हो सकता है?' इसलिए लोग भय नहीं

रखते। लेकिन यह जगत् तो पूरा भय का ही कारखाना है। इसलिए सावधान रहकर चलना। भयंकर कलियुग है। दिनोंदिन 'डाउन' काल आता जा रहा है। विचार आदि सब बिगड़ते ही जाएँगे। अत: यदि मोक्ष में जाने की बात करोगे, तो शायद कुछ हो सकेगा।

कुछ लोग ऐसे होते हैं कि जो अच्छी मज़ेदार मिठाई या नमकीन देखें, फिर भी उन्हें भाव या अभाव नहीं होता। ऐसे पंद्रह प्रतिशत लोग हैं तो सही। लेकिन ये जो स्त्री-पुरुष हैं, उन्हें तो देखते ही भाव या अभाव उत्पन्न होता है। उनमें से दो प्रतिशत मनुष्यों को छोड़कर, शेष सभी के मन बिगड़े बगैर रहते ही नहीं। यदि चाचा का बेटा हो फिर भी लड़की का मन बिगड़ता है और चाचा की बेटी हो फिर भी लड़के का मन बिगड़ता है। मिठाई के लिए क्यों नहीं बिगड़ता? क्योंकि वहाँ उसे संतोष है। लेकिन विषय में तो असंतोष है न! लेकिन इसमें असंतोष रखने जैसा है ही क्या? ये भी आम ही हैं न? जिसे भोजन में असंतोष है, उसका चित्त खाने की चीज़ों में जाता है और जहाँ होटल देखे, वहाँ खिंचता है, लेकिन क्या सिर्फ भोजन का ही विषय है? यह तो पाँच इन्द्रिय और उसमें कितने ही विषय हैं। जिसे भोजन से असंतोष हो, उसका चित्त खाने की चीज़ों में चिपक जाता है। उसी तरह जिसे देखने में असंतोष हो, वह यहाँ-तहाँ नज़र घुमाता रहता है। पुरुष को स्त्री का असंतोष रहता है और स्त्री को पुरुष का असंतोष रहता है इसलिए फिर चित्त वहीं चिपकता है। इसे भगवान ने मोह कहा है। देखते ही चिपक जाता है। स्त्री देखी कि चित्त चिपक जाता है। ये लोग क्या सीधे रहते होंगे? यह तो कहीं पर भी सुख नहीं मिलता इसलिए व्यर्थ प्रयत्न में लगे हैं। शायद ही कोई पुण्यशाली होगा, जो व्यर्थ प्रयत्न में नहीं लगा होता। तब फिर वह लोभ में पड़ा होता है।

कोई व्यक्ति बहुत भूखा हो, तो क्या वह कपड़े की दुकान की ओर देखेगा? नहीं, वह तो मिठाई की दुकान देखेगा, या फिर होटल देखेगा। जब देह की भूख नहीं होती, तब मन की भूख खड़ी होती है। जब ये दोनों भूख नहीं होतीं, तब वाणी की भूख खड़ी होती है। लोग ऐसा कहते हैं न, कि 'उसे तो मैं सुनाए बगैर छोडूँगा ही नहीं?' वही वाणी की भूख।

घर पर हम कुछ खा रहे हों और भिखारी आ जाए तो अपने बुज़ुर्ग नहीं कहते, 'अरे, सँभालना, नज़र न लग जाए?' यह नज़र लगना यानी क्या कि जिसकी भूख लगती है, उसमें चित्त का चिपकना, वह। स्त्री को पुरुष की भूख हो, तो स्त्री का चित्त पुरुष में चिपक जाता है। स्त्री की भूख हो, तो स्त्री को देखते ही पुरुष का चित्त स्त्री में चिपक जाता है। इस तरह नज़र लगने से बिगड़ा है यह सब। सिर्फ 'ज्ञानीपुरुष' को ही किसी की नज़र नहीं लगती। कोई उन पर नज़र गड़ाए फिर भी 'ज्ञानीपुरुष' उसके शुद्धात्मा ही देखते हैं, इसलिए कुछ छूता नहीं। ये छोटे बच्चे खूबसूरत होते हैं, इसलिए घरवाले उसके कपाल पर काला टीका लगाते हैं। ताकि नज़र न लगे! कोई भूखा व्यक्ति उसे देखे, फिर भी चित्त न चिपके। इसलिए काला टीका लगाते हैं।

दर्शन मोह से खड़ा है संसार

अनंत जन्मों से दर्शन मोह के कारण ही यह संसार जंजाल खड़ा हो गया है। जब सम्यक् दर्शन होता है, तब दर्शन मोह टूटता है। जगत् क्यों खड़ा है? दर्शन मोह से। इतना कुछ करने के बावजूद भी क्यों मुक्ति प्राप्त नहीं कर पाते? दर्शन मोह बाधक है। किसी व्यक्ति ने रात को खाना खाया, लेकिन सवेरे फिर से ज़ोरदार भूख लगे, तो वह सुनार की दुकान या साड़ी की दुकान नहीं देखता। लेकिन उसे तो हलवाई की दुकान ही दिखाई देगी। ऐसा क्यों? उसका चित्त खाने के लिए ही भटकता रहता है? देह में जब भूख का 'इफेक्ट' होने लगे, तब खाने का मोह होता रहता है, वह दर्शन मोह है। देह को विषय की भूख लगे तो स्त्री के प्रति मोह जागता है। इस तरह इस दर्शन मोह से तो अगले जन्म के बीज डालता है न? इससे अगले जन्म का संसार खड़ा करता है। वीतराग को किसी की नज़र नहीं लगती। अत: यदि संसार से छूटना हो तो वीतराग बन। लेकिन वीतराग कैसे बन सकते हैं? जिससे दर्शन मोह टूटे, ऐसा कोई उपाय कर! दर्शन मोह से संसार खड़ा है।

आपने कहीं अच्छी भिंडियाँ देखीं, तो आपकी आँखें वहीं चिपक जाती हैं। कुछ अच्छा देखे, वहीं नज़र चिपक जाती है। नज़र चिपकी कि

संसार खड़ा हो गया। यह जगत् खुली आँखों से देखने योग्य है ही नहीं। उसमें भी कलियुग में तो भयंकर असर होता है। इन आँखों से तो पूरा संसार खड़ा हो जाता है।

इस जगत् में तो सभी चीज़ें ऐसी ही हैं न कि जो भ्रमित करें? जहाँ मन ही कच्चा है, वहाँ क्या हो सकता है? इसमें देखने जैसा है ही क्या? यह तो देखने की बुरी आदत है। जो दिखाई देता है, उसके प्रति मोह होता है। इन्सान को तो इन सभी पर्यायों का ज्ञान है नहीं! यदि खाने के बाद उल्टी हो जाए तो जो उल्टी हुई, वह खाया था उसीका हिस्सा है, ऐसा एट-ए-टाइम लक्ष्य में नहीं रहता न? जैसे कि ये आम होते हैं, उनमें बौर आते हैं, फिर फल लगते हैं, छोटे-छोटे आम आते हैं। वे कसैले लगते हैं, फिर खट्टे होते जाते हैं, उसके बाद मीठे होते हैं। वे ही फिर सड़ जाते है, बिगड़ जाते है, बदबू मारते हैं। ये सारे पर्याय एट-ए-टाइम हाज़िर रहें तो फिर आम के प्रति मोह ही नहीं होगा न? खाने लायक, देखने लायक तो सत्युग में था। आज की स्त्रियाँ देखने लायक नहीं होतीं, पुरुष देखने योग्य नहीं होते। ये तो बिगड़े हुए आम जैसे दिखते हैं। अरे! इस बिगड़े हुए माल में देखने जैसा क्या लगता है तुझे? स्त्री, वह पुरुष का संडास है और पुरुष, वह स्त्री का संडास है।

जिन्हें मोक्ष में जाना है, उन्हें स्त्री जाति को या स्त्री को पुरुष जाति को दृष्टि गड़ाकर देखना ही बंद कर देना चाहिए। वर्ना इसका निबेड़ा ही नहीं आएगा। यह चमड़ी निकाल दी जाए तो क्या दिखाई देगा? लेकिन ये लोग तो यों भी इतनी बदबू मारते हैं कि ऐसा होता है कि 'न जाने ये कैसे लोग हैं?' पहले के समय में ऐसी स्त्रियाँ होती थीं, पद्मिनी-स्त्रियाँ, जिनकी सुगंध आती थी। कुछ दूरी पर बैठी होतीं फिर भी यहाँ तक सुगंध आती थी। आजकल तो पुरुषों में बरकत ही नहीं है और स्त्रियों में भी बरकत नहीं है। सारा फेंक देने जैसा माल, निकाल देने जैसा माल है, रबिश मटिरियल्स। उसके प्रति फिर मोह करता है। अरे! इसमें मोह करने जैसा क्या लगा तुझे? क्यों, गोरी चमड़ी है, इसलिए? सीलबंद पेट्रोल के डिब्बे हों, जिनमें से हवा तक न निकल पाए ऐसे हों, फिर भी इस रूम में कोई

बीड़ी पीए, फिर भी डिब्बे जल उठेंगे। अतः स्त्री-पुरुषों को 'बीवेयर ऑफ पेट्रोल' ऐसा बोर्ड लगाना चाहिए।

स्त्री-पुरुष के दृष्टिरोग का इलाज क्या?

इस जगत् में स्त्री को पुरुष का और पुरुष को स्त्री का आकर्षण कुछ उम्र तक रहता ही है। देखने से ही कॉज़ेज़ उत्पन्न होते हैं। लोग कहते हैं, 'देखने से क्या होता है?' अरे! देखने से तो निरे कॉज़ेज़ ही उत्पन्न होते हैं। लेकिन यदि 'दृष्टि' दी हुई हो तो देखने से कॉज़ेज़ उत्पन्न नहीं होंगे। पूरा जगत् व्यू पोइन्ट से देखता है। जबकि सिर्फ ज्ञानी ही 'फुल' (पूर्ण) दृष्टि से देखते हैं।

लोग क्या कहते हैं कि, मुझे स्त्री के लिए बुरे विचार आते हैं। अरे! तू जब देखता है, तभी फिल्म तैयार हो जाती है। वह फिर रूपक में आती है, तब फिर उसके लिए शोर मचाता है कि ऐसा क्यों होता है? ये फिल्म कॉज़ेज़ हैं और रूपक इफेक्ट है। हमारे अंदर कॉज़ेज़ ही नहीं पड़ते। जिन्हें कॉज़ेज़ पड़ते ही नहीं, उन्हें देहधारी परमात्मा ही कहा जाता है। स्त्री तो, आत्मा पर एक तरह का इफेक्ट है। स्त्री भी इफेक्ट है, पुरष भी इफेक्ट है। उसका इफेक्ट अपने पर नहीं पड़े तो ठीक है। अब स्त्री को आत्मा रूप देखो, *पुद्गल* में क्या देखना है? ये आम सुंदर भी होते हैं और सड़ भी जाते हैं, इनमें क्या देखना? जो सड़े नहीं, बिगड़े नहीं, वह आत्मा है। उसे देखना है। हमें तो स्त्री भाव, पुरुष भाव ही नहीं है। हम उस बाज़ार में जाते ही नहीं।

'यह स्त्री है' ऐसा देखते हैं। जब पुरुष के अंदर रोग होगा तभी उसे स्त्री दिखेगी, वर्ना आत्मा ही दिखेगा और जब स्त्री ऐसा देखती है, कि 'यह पुरुष है' तो वह उस स्त्री का रोग है। निरोगी बनेगा तो मोक्ष होगा। इस समय हमारी निरोगी अवस्था है। इसलिए मुझे ऐसा विचार ही नहीं आता। पैकिंग अलग हैं, सिर्फ ऐसा रहता है, वह स्वाभाविक है। लेकिन ऐसा लक्ष्य रहे कि यह स्त्री है और यह पुरुष है, ऐसा सब झंझट नहीं है। वह तो यदि अंदर रोग होगा, तभी तक ऐसा दिखाता हैं। जब तक

यह रोग है, तब तक हमें परहेज में क्या करना चाहिए? कि उपयोग जागृत रखना चाहिए। ऐसा दिखे कि तुरंत ही शुद्धात्मा देख लो। ऐसी भूल हुई, उसे 'देखतभूली' कहते हैं। पुरुष को पुरुष का रोग नहीं होगा, तो 'यह स्त्री है' ऐसा नहीं दिखेगा और स्त्री को स्त्री का रोग नहीं होगा, तो 'यह पुरुष है' ऐसा नहीं दिखेगा। सभी में आत्मा दिखेगा।

प्रश्नकर्ता : इतनी जागृति नहीं रह पाती न?

दादाश्री : जागृति नहीं रहेगी, तो मार ही खानी पड़ेगी। यह ब्रह्मचर्य तो जिसे बहुत जागृति रहे, उसीके काम का है।

क्रमिक मार्ग में तो स्त्री को पास में रखते ही नहीं, क्योंकि वह बहुत बड़ा जोखिम है। स्त्री, वह पुरुष के लिए जोखिम है। पुरुष, वह स्त्री के लिए जोखिम है। लेकिन मेरा कहना है कि इसमें स्त्री का दोष नहीं है, स्त्री तो आत्मा है, दोष तेरे स्वभाव का है।

दादाजी के अलावा, नहीं छू सकता कोई भी

हम तो, आप जो माँगोंगे वह देंगे। क्योंकि हम में, हम अखंड ब्रह्मचारी हैं, जिन्हें ज्ञान होने के बाद अट्ठाईस साल से आज तक कभी भी स्त्री का विचार ही नहीं आया। इसीलिए हम स्त्री को छू सकते हैं न। वर्ना स्त्री को छूआ नहीं जा सकता। पचास हज़ार लोग हैं अपने यहाँ, लेकिन उनमें से एक को भी ऐसी छूट नहीं है कि स्त्री को आप छू सकते हो, क्योंकि उस स्पर्श का गुण बहुत ही विषम है। सभी ऐसे होते हैं, ऐसा नहीं है। लेकिन हो सके तब तक उसमें नहीं पड़ना चाहिए। हमें छूट है। क्योंकि हम तो किसी भी जाति में नहीं हैं। मैसक्युलिन या फीमेल या ऐसी किसी जाति में नहीं हैं। हम जाति से परे हो गए हैं।

स्त्री-पुरुषों को एक-दूसरे को छूना नहीं चाहिए, बहुत जोखिम है। जब तक पूर्ण नहीं हुए हैं तब तक नहीं छू सकते, वर्ना यदि एक भी परमाणु विषय का भीतर प्रवेश कर गया तो कितने ही जन्म बिगाड़ देगा। हम में तो विषय का एक भी परमाणु नहीं है। एक भी परमाणु बिगड़े तो तुरंत

ही प्रतिक्रमण करना होगा। प्रतिक्रमण करने से सामनेवाले को भाव उत्पन्न नहीं होता।

स्त्री को छूने का अधिकार किसी को भी नहीं है। क्योंकि स्त्री को छूए तो परमाणु का असर हुए बगैर रहेगा नहीं। परस्त्री को ज़रा सा भी छू लिया हो, तो घंटेभर धोना पड़ेगा। सिर्फ 'ज्ञानीपुरुष' के ही चरणों को छूकर स्त्रियाँ विधि कर सकती है। 'ज्ञानीपुरुष' तो विषय के सारे बीज उखाड़कर फेंक चुके होते हैं। उनमें विषय का बीज ही नहीं होता। छूने का अधिकार किसे है? नवाँ गुणस्थानक पार कर दिया हो उसे। क्योंकि उन्हें तो विषय संबंधी विचार तक नहीं आते न! वे विचार ही बंद न! ऐसा होने के बाद तो उन्हें दिमाग़ में ऊर्ध्व विचार ही आते हैं, सारी शक्तियों का ऊर्ध्वीकरण ही होता है।

यह ज्ञान होने के बाद हमें कभी-भी विषय का विचार ही नहीं आया। जिन्हें विषय का विचार तक नहीं आए, जिनका मनोबल ज़बरदस्त ज्ञानपूर्वक हो गया हो, फिर उन्हें कोई हर्ज नहीं है। इसीलिए तो स्त्रियाँ हमारे चरणों को छूकर विधि कर सकती हैं न! लेकिन अन्य किसी को भी स्त्रियों को छूने की छूट नहीं है और स्त्रियों को भी किसी को छूने की छूट नहीं है, छू ही नहीं सकते। अन्यों को तो स्त्री के छूने से पहले ही विषय का विचार खड़ा हो जाता है। हमें तो 'थ्री विज़न' से एक ही सेकन्ड में सब आरपार दिखाई देता है। हमारा दर्शन इतना उच्च है कि फिर रोग उत्पन्न ही कैसे हो?

और हमें *पुद्गल* के प्रति राग ही नहीं है न! मेरे ही *पुद्गल* के प्रति मुझे राग नहीं है। *पुद्गल* से मैं सर्वथा जुदा ही रहता हूँ। खुद के *पुद्गल* के प्रति जिसे राग होता है, उसे दूसरों के *पुद्गल* के प्रति राग होता है। अनंत जन्मों से यही का यही भोगा है फिर भी नहीं छूटता। यह आश्चर्य ही है न! जब कितने ही जन्मों से विषय सुख का विरोधी हो चुका हो, विषय सुख के बारे में आवरण रहित दृष्टि से बहुत ही सोचा हो, जब ज़बरदस्त वैराग्य उत्पन्न हो चुका हो, तब विषय छूट सकता है। वैराग्य कब उत्पन्न होता है? उसे अंदर जैसा है वैसा दिखाई दे, तब।

जागृति में देखें, गर्भ से बुढ़िया होने तक

वीतराग इतना ही देखते थे कि मनुष्य की प्राकृतिक शक्ति का उत्पन्न होना, व्यय होना और वर्तमान शक्ति, उन सभी शक्तियों को त्रिकाल ज्ञान से देखते थे। उत्पन्न, व्यय आदि को संपूर्ण रूप से जानते थे इसलिए फिर उन्हें राग उत्पन्न नहीं होता था। यह राग का उत्पन्न होना, वह तो सिर्फ वर्तमानकाल के ज्ञान से होता है। एक तो खुद के स्वरूप का अज्ञान और वर्तमानकाल का ज्ञान, तब फिर उसे राग उत्पन्न होता है। लेकिन यदि उसे यह समझ में आए कि यह गर्भ में थी तब ऐसी दिखती थी, जन्म हुआ तब ऐसी दिखती थी, छोटी बच्ची थी तब ऐसी दिखती थी, फिर ऐसी दिखती थी, आज ऐसी दिखती है, फिर ऐसी दिखेगी, बूढ़ी होने पर ऐसी दिखेगी, पक्षाघात होगा तब ऐसी दिखेगी, अर्थी उठेगी तब ऐसी दिखेगी, ऐसी सभी अवस्थाएँ जिनके लक्ष्य में है, उन्हें वैराग्य सिखाना नहीं पड़ता! यह तो, आज जो दिखता है, उसे देखकर ही जो मूर्छित हो जाते हैं, उन्हें वैराग्य सीखना है। वीतराग तो बहुत समझदार थे। भले ही कोई भी चीज़ आए लेकिन उन्हें मूर्छा उत्पन्न नहीं करवा सकती थी क्योंकि उस चीज़ को वीतराग तीनों काल से देख सकते थे।

यह जो चीज़ है, इसकी क्या-क्या अवस्थाएँ उत्पन्न होती हैं? मिट्टी में से उत्पन्न हुआ, उसमें से घड़ा बनाया, अब ऐसी अवस्था हुई, ऐसी अवस्था हुई। फिर अब वह विनाश के पथ पर जाएगा, ऐसी सारी अवस्थाएँ बता सकते हैं, आख़िर में फिर से मिट्टी बन जाएगी।

प्रश्नकर्ता : उन सभी अवस्थाओं का ज्ञान एक ही बार में रहता है?

दादाश्री : एक ही बार में! मैंने वह जो कहा न कि मनुष्य को मोह क्यों उत्पन्न होता है? तब कहे, दोनों जवान हैं इसलिए और उस समय वहाँ पर होश नहीं रहता, कि यह मोह टिकाऊ है या टेम्परेरी है? फिर इस समय जो है, वैसा ही उनकी कल्पना हमेशा के लिए ढूँढती है। अब फिर बुढ़ापे में क्या होता है? कल्पना कैसी हो जाती है?

प्रश्नकर्ता : उस समय उसे बोरियत होती है।

दादाश्री : इन लोगों को क्या हो रहा है, वह मैं जानता हूँ। अच्छा नहीं लगता लेकिन कहें किसे अब? क्योंकि बुद्धि तो यह स्वभाव दिखाएगी। यानी यह जन्म लेने से पहले कैसा था! लड़का या लड़की जन्म के बाद कैसे होते हैं? वह इतनी सी थी, तब क्यों मोह उत्पन्न नहीं होता था, बाद में कुछ बड़ी हुई तब क्यों मोह उत्पन्न नहीं होता था? यानी इन सारी अवस्थाओं को ध्यान में रखते हैं। और मोह उत्पन्न होता है, उस अवस्था को भी ध्यान में रखते हैं फिर। उससे आगे की अवस्था, प्रौढ़ावस्था, फिर वृद्धावस्था, फिर लकवे की अवस्था, सभी में क्या स्थिति होती है? उसके बाद अर्थी निकालते समय की अवस्था, अग्निदाह के समय की अवस्था। अग्निदाह की अवस्था देखी हो और उस घड़ी प्रेम करने को कहे तो? यह तो शादी के बाद मूर्ख बनते हैं लेकिन कहें किस से? जहाँ सभी मूर्ख हैं वहाँ? स्त्रियाँ भी इस मूर्खता को समझती हैं, कि ऐसी मूर्खता है यह! देखकर पति ढूँढा लेकिन पति लाकर चेहरा लटक जाता है न, सूरत उतर जाती है न, क्या से क्या हो जाता है, आँखें चली जाती है, कान से सुनाई नहीं देता! और जिसे यह सब ध्यान में हो उसे वैराग्य रहता है! जिसे अवस्थाएँ लक्ष्य में रहती है, उसे वैराग्य सिखाना नहीं पड़ता! जितनी लिखी हैं न, उतनी अवस्थाएँ हमारे लक्ष्य में रहती हैं, एट-ए-टाइम। ऐसी बातें बाहर नहीं होतीं। ऐसी बातें यहीं पर होती हैं! लोग तो खा जाते हैं, ऐसी बातें। इस तरह वैराग्य के विचार लाए, तब कुछ हो पाएगा वर्ना कुछ नहीं बदलेगा। जब मूल बात को, वैराग्य के मूल कॉज़ेज़ का नाश नहीं किया जाए, तब तक वैराग्य कैसे आ सकता है?

प्रश्नकर्ता : युवावस्था में जो मोह होता है, वह मोह कैसे उत्पन्न नहीं हो? यदि एट-ए-टाइम सारी अवस्थाएँ देखे, तो...

दादाश्री : तो मोह नहीं होगा लेकिन एट-ए-टाइम तो अवस्थाएँ कैसे देख सकता है! मनुष्य की बिसात नहीं है न! उतनी शक्ति नहीं होती। दाल-चावल-रोटी-सब्ज़ी खानेवाला हो या माँसाहार करनेवाला हो किसी की ऐसी बिसात नहीं है। कोई अपवाद ही हो सकता है। बाकी इस मामले

में कोई नहीं होता। उसका मन पसंद दिखाए तो मोह उत्पन्न होता ही है।

प्रश्नकर्ता : साठ साल की उम्र में यदि कहा जाए, वह एक बात है और पच्चीस साल की उम्र में कहा जाए, वह दूसरी बात है, तब ऐसी जागृति रहनी चाहिए।

दादाश्री : जागृति अलग चीज़ है। पच्चीस साल की उम्र में कहना, वह कोई ऐसी आसान बात नहीं है। तब तो मोह से अंध होता है, 'मोहांध'। इसलिए उस समय, देखते समय फिर किस की सलाह मानता है? मन की और बुद्धि की, खुद का तो कुछ रहा ही नहीं! खुद का डिसीज़न नहीं। मन और बुद्धि की सलाह मानता है, मन तो उकसाता ही रहेगा बार-बार।

प्रश्नकर्ता : आप हमें ऐसी जड़ी-बूटी बताइए ताकि हम कह सकें कि 'भाई, चौबीस साल की उम्र में यह विचार याद रखना।'

दादाश्री : इतनी सारी अवस्थाओं की जागृति आपको एक साथ नहीं आएगी। हम जो वह थ्री विज़न देते हैं न, उस पर यदि सोचता रहे तो थ्री विज़न उत्पन्न हो जाएगा। वे विचार जब उत्पन्न हो जाते हैं, तो उसकी वजह से कई लोग बच जाते हैं। मुझे पत्र लिखकर बताते हैं कि, 'आपके थ्री विज़न ने तो मेरा बहुत काम कर दिया।' वे सारी अवस्थाएँ नहीं आतीं, यह तो मैं कहता हूँ उतना ही है! मेरी कही हुई बात से आपको विचार आता है कि, 'हाँ, यह बात सही है!'

[३]

विषय सुख में दावे अनंत

अपवाद से ब्रह्मचारी....

विषय में सुख तो पूरा जगत्, जीवमात्र मान रहा है। सिर्फ यहाँ जो त्यागी हैं और वहाँ देवलोक में जो समकिती देव हैं, सिर्फ ये दोनों ही विषय में सुख नहीं मानते। जानवर भी विषय को सुख मानते हैं। लेकिन बेचारे जानवर, वे तो कर्माधीन भोगते हैं। उन्हें ऐसा कुछ नहीं है कि हमें हमेशा के लिए ऐसा ही चाहिए। मनुष्यों को तो हमेशा के लिए ही चाहिए। पति परदेश गया हो तो पत्नी को अच्छा नहीं लगता। पत्नी यदि मायके चली जाए छः बारह महीनों के लिए, तो परेशान हो जाता है क्योंकि उसने सुख माना है उसमें। किस में माना है? इन त्यागियों को क्यों लगा होगा कि 'इसमें दुःख है?' क्या इसमें सुख नहीं है?

ऐसा है न कि ये गेहूँ, चावल, बाजरा, जलेबी, लड्डू, वगैरह सभी सुख नहीं ढूँढते। ये जो सारे फ्रूट होते हैं, कोई फ्रूट सुख ढूँढता है? ये दूध, दही, घी, आदि सब सुख ढूँढते हैं?

प्रश्नकर्ता : नहीं ढूँढते।

दादाश्री : भगवान ने कहा है कि 'जो सुख ढूँढ रहा हो, वहाँ सुख मत ढूँढना। जो खुद, सुख ढूँढ रहा हो वहाँ सुख मत ढूँढना, जो सुख नहीं ढूँढ रहा, वहाँ सुख ढूँढना', कहा है। यानी जो सुख ढूँढ रहा है, उस भिखारी के वहाँ यदि हम सुख लेने जाएँ तो क्या फायदा? यानी भूमिका ही नहीं है, यह तो एक प्रकार का काल्पनिक फिगर है सिर्फ। कल्पना खड़ी की

हुई है यह तो। जो सुख नहीं ढूँढे उसके साथ तो किसी प्रकार की परेशानी नहीं आती न?

प्रश्नकर्ता : आती ही नहीं।

दादाश्री : महंगे अच्छे आम आते हैं, कई चीज़ें आती हैं, कैसी-कैसी मिठाइयाँ होती हैं सब! देखने की कैसी-कैसी चीज़ें होती हैं! जबकि यह तो जूठन में सुख खोजता है। पूरे गाँव की जूठन कहलाती है। और फिर वह भी सुख ढूँढ रही होती है। आप उसमें सुख ढूँढो और वह आपमें सुख ढूँढे, तो वहाँ दोनों का मेल कैसे बैठेगा? आपको क्रिकेट देखने जाना हो और वह कहे कि सिनेमा देखने जाना है, तो आपका झगड़ा कब खत्म होगा?

प्रश्नकर्ता : नहीं होगा।

दादाश्री : ऐसा है, यदि आपको सुखी होना हो तो इस जगत् में सभी चीज़ें भोगना। क्या? जिसे बदले में भोगने की इच्छा नहीं हो, वह खुद भोगने की इच्छावाला नहीं हो, उसे भोगना। जलेबी में भोगने की इच्छा होती है, जलेबी में?

प्रश्नकर्ता : नहीं।

दादाश्री : तो आप जलेबी खाओ न! अन्य सभी चीज़ें खाने की छूट है। सामने इच्छावाला होगा, तब तो फिर आप मारे ही जाओगे न?

प्रश्नकर्ता : जो सुख ढूँढ रहा हो, वहाँ सुख नहीं ढूँढना चाहिए?

दादाश्री : हाँ, वहाँ सुख नहीं ढूँढना चाहिए। यानी अन्य सभी चीज़ों के अलावा एक ही, सिर्फ यह स्त्री विषय ही ऐसा है कि वह खुद सुख की इच्छा रखनेवाली है और आप भी इच्छावाले, तो फिर दोनों का मेल कब पड़ेगा?

प्रश्नकर्ता : मेल नहीं पड़ेगा।

छोड़ो सिर्फ विषय को

प्रश्नकर्ता : जबकि आज तो संसार में सर्वत्र यह छोड़ो, इसे कंट्रोल करो, यह खाना, यह मत खाना, ऐसा चल रहा है।

दादाश्री : अरे! खाने-पीने की बात तो छोड़ो! सबकुछ खाओ आराम से! लेकिन सिर्फ यही छोड़ दो न! सिर्फ इसी में हाथ मत डालना। खाने में सामनेवाले की तरफ से शिकायत नहीं है। जबकि स्त्री तो शिकायत करती है, अनंत अवातर के लिए बैर बाँध देती है। वह छोड़ती नहीं है फिर। इन चार इन्द्रियों के विषयों में से कोई परेशान नहीं करता और यह पाँचवाँ जो विषय है, स्पर्श विषय है, वह तो सामने जीवंत व्यक्ति के साथ है! वह दावा करे, ऐसी है। अत: सिर्फ इस स्त्री विषय में ही एतराज़ है। यह तो जीती-जागती 'फाइल' है। आप कहो कि, 'अब मुझे विषय बंद करना है।' तब वह कहेगी कि, 'ऐसा नहीं चलेगा। फिर शादी क्यों की थी?' यानी वह जीवित 'फाइल' तो दावा करती है और दावा करे तो वह पुसाएगा ही कैसे? अत: जीते-जागते व्यक्ति के साथ विषय करना ही मत। दावा तो दायर करती ही है लेकिन फिर धमकाती है और आपका तेल निकाल देती है। हम तो भगवान से भी दबकर नहीं रहना चाहते तो फिर क्या ऐसे पत्नी के दबाव में रह सकते हैं? क्या सुख है उसमें? और आप कितने सुखी हो गए? और कितने मोटे हो गए? बल्कि तेज नष्ट हो जाता है। इसमें से क्या पाना है? पूरा *पुद्गल* का सार खत्म हो जाता है! वह सार शरीर में रहे तब दिमाग़ खिलेगा, वाणी कैसी निकलेगी! जागृति कैसी रहेगी! उसकी तो बात ही अलग है न? उस सार को फिर खो देता है न, तो फिर क्या होगा? कैसी जागृति रहेगी!

विषय से बनें क़रार

इन झगड़ों की वजह से सब दावा करते हैं। पति का पूरा होने लगे तब तक तो पत्नी दावा करती है, फिर पति दावा करता है।

यही एक विषय ऐसा है कि स्त्री का और पुरुष का जो विषय है, उसमें यदि आप कहो कि, 'नहीं भाई, अब मेरी इच्छा नहीं रही।' तब

कहेगी, 'नहीं चलेगा।' वहाँ तो दावा करेगी। यही एक ऐसी चीज़ है कि सामनेवाला दावा करता है। अत: यहाँ सँभालकर काम निकाल लेना है। आपकी समझ में आया, यह दावा करना, वह? उसी से ये सारी उलझनें पैदा हुई हैं। अत: यही एक भोग ऐसा है कि जो बहुत दु:खदायी है।

यह जीता-जागता परिग्रह है। इसलिए इसमें दावा करते हैं, बैर भी बाँधते हैं। कई पुरुषों ने स्त्रियों को जला डाला है। कई स्त्रियाँ भी पुरुषों को ज़हर दे देती हैं। इन सभी से बैर बँधता है।

प्रश्नकर्ता : क्रमिक मार्ग में बाहर सभी जगह विषयों के त्याग को प्रथम स्थान क्यों दिया है?

दादाश्री : सिर्फ इन विषयों का ही झंझट है, अन्य सब चीज़ों का बहुत झंझट नहीं है। उसका क्या कारण है? हमने चाहे कितनी ही महँगी पकौड़ियाँ ली हों, लेकिन उसके बाद हमें जितनी खानी हों, उतनी खाते हैं। बाकी जो नहीं खानी हों और किसी को दे दें तो वे पकौड़ियाँ हम पर दावा नहीं करेंगी! वे दावा करेंगी?

प्रश्नकर्ता : नहीं करेंगी।

दादाश्री : यह इत्र का फाहा ऐसे कान में डालें और फिर हम किसी को दे दें तो क्या वह इत्र दावा करेगा? फिल्म देखने गए हों, तो वहाँ जितनी देखनी हो उतनी देखी और फिर ज़रा नींद आए और सो गए, तो क्या वह फिल्म दावा करेगी आप पर कि, 'तूने क्यों मुझे नहीं देखा? टिकट लिया है तो अब तुझे मुझे देखना ही पड़ेगा,' कोई ऐसा दावा नहीं करता।

ठंड पड़े तो त्वचा को ठंड लगती है तब ओढ़कर बैठ जाएँ तो ठंड कोई दावा नहीं करती और सिर्फ इस विषय में ही सामने चेतन है, इसलिए दावा करता है। आप कहो कि 'अब मुझे इसका त्याग करना है' तो वह कहेगी कि 'यह नहीं चलेगा, शादी क्यों की थी?' यानी यह पकौड़ी जैसा नहीं है। बहुत बड़ा जोखिम है! यदि पकौड़ी जैसा होता तो हम आपको छूट दे देते कि, भाई, तुझे ऐसे जो भी विषय करने हों वे करना, लेकिन इस स्त्री विषय में ज़रा सावधान रहना। क्योंकि वह दावा तो ऐसा

दायर करेगी, कि जहाँ उसकी गति होगी वहीं पर आपको भी ले जाएगी। क्योंकि उसके साथ क़रारनामा हो गया फिर क्या हो सकता है? केरलवालों के यहाँ गए हों और वहाँ से पाँच-सौ रुपये उधार लिए हों और फिर वापस नहीं लौटाओ तो उसका दावा वह कहाँ दायर करेगा? अरे! वह तो फिर केरल की भाग-दौड़ में, किराए में ही पाँच-सौ रुपये खर्च हो जाएँगे! और वापस वहाँ जाकर चुकाने पड़ेंगे, वह अलग। अतः यदि दावा करे तो वह जहाँ हो आपको वापस वहीं पर जाना पड़ेगा, ऐसा है।

अतः ऐसे दावा नहीं हो, यह देखना। बहुत जोखिमदारी है! और जितनी फाइलें हों उनका झट-पट निकाल कर देना और नई फाइल खड़ी मत करना। आसान है या मुश्किल है यह?

प्रश्नकर्ता : प्रतिक्रमण करते रहें तो क्या आसान हो जाएगा?

दादाश्री : हाँ, आसान हो जाएगा। हमने आपको मोक्ष हाथों में दिया है। अब आपको जितना मोक्ष भोगना आए, उतना आपका। इसमें दावा करे ऐसी 'फाइल' है, इसलिए क्रमिक मार्ग में इसके लिए बहुत सख्ती से कहा गया है और हम भी यहाँ पर इसके बारे में सख्ती रखने को कहते ही हैं कि इसमें सावधान रहना।

'मिश्रचेतन' तो दावा करेगा ही

स्त्री तो मिश्रचेतन है। चेतन से शादी करना, जबकि ये तो मिश्रचेतन से शादी करते हैं। माता-पिता को मालूम ही नहीं है न, ध्यान ही नहीं रखते कि बेटा कौन से मील पर खड़ा है और उसे क्या बेचैनी है? माता-पिता अपने दुःख में और बेटा अपने दुःख में! यह मिश्रचेतन तो दावा करता है! उन्हें सिनेमा देखने जाना हो और आपको पसंद नहीं हो, फिर भी वह कहेगी कि, 'आपको आना पड़ेगा।' तो आपको जाना पड़ेगा! इतना ही नहीं, लेकिन 'आपको बच्चे को भी उठाना पड़ेगा।' ऐसा भी कहेगी। अरे! बच्चा भी उठवाया मुझसे? हाँ। लेकिन क्या हो सकता है? यदि बेवकूफ बनना हो तो शादी करना इस काल में!

प्रश्नकर्ता : लेकिन जिसने शादी कर ली है, अब वह क्या करे?

दादाश्री : अपनी इच्छानुसार थोड़े ही होता है? 'व्यवस्थित' की जो फिल्म है, वह छोड़ती नहीं न उसे?

पहले तो इतना अच्छा था कि चाहे कैसी भी बीवी लेने जाए, फिर भी बहुत हुआ तो बीवी की दो-तीन शर्तें होती थीं। 'पानी की मटकी कबूल?' तब वह कहता, 'कबूल।' 'लकड़ी का गट्ठर कबूल?' तब पति कहता, 'कबूल।' निकाह पढ़ते समय इतनी शर्तें कबूल करवाती थी। 'जो पानी भरकर लाए, जंगल में से लकड़ियाँ ले आए, वह अच्छा है।' लेकिन आज की पत्नियाँ तो क्या कहेंगी? 'इस समय सिनेमा में आना पड़ेगा, वर्ना आपके दोस्त के साथ कभी जाते देख लिया तो आपकी खैर नहीं!' 'अरे! मैंने तुझसे शादी की है या तूने मुझसे शादी की है?' इसमें किस ने किस से शादी की? लेकिन यह तो मिश्रचेतन है। और फिर ये तो पढ़ी-लिखी हैं और यदि उनसे कह दिया कि 'तू नहीं समझेगी' तो आपका तेल निकाल देगी! इसमें सुख है ही नहीं, इससे तो 'फाइल' बढ़ती है। इन 'फाइलों' के साथ फिर क्लेश होता है, फिर घर की हो या बाहर की! अत: मिश्रचेतन के साथ हिसाब शुरू मत करना, वर्ना वह क्लेम करेगी!

यदि बिस्तर पर नहीं सोए और पत्थर पर सो जाएँ तो क्या बिछौना दावा करेगा कि क्यों मुझे छोड़कर पत्थर पर सो रहे हो? और मिश्रचेतन तो दावा करता है कि आज क्यों अलग हो गए? छोड़ती नहीं। अलग करने जाएँ तो बल्कि पास आएगी! अत: मिश्रचेतन के साथ झंझट में मत पड़ना! आलू के साथ अनबन हो और आलू नहीं लाएँ तो आलू शोर नहीं मचाएँगे और उन्हें नहीं खाएँ फिर भी कुछ नहीं बोलेंगे! लेकिन मिश्रचेतन तो ऐसी लपेट में लेता है कि अनंत जन्मों तक भी वह छूट नहीं पाता। इसलिए भगवान ने कहा है कि मिश्रचेतन से दूर रहना! स्त्री से दूर रहना! वर्ना मिश्रचेतन तो मोक्ष में जाने से रोके, ऐसा है!

ये पान-बीड़ी भी लफड़ा ही कहलाते हैं। लेकिन इन लफड़ों से तो, ऐसा मानो न, कि किसी दिन छूट सकेंगे, लेकिन वे लफड़े तो नहीं छूटेंगे। जीवित लफड़े हैं न! हम जीवित को लफड़ा कहते हैं। उन लफड़ों को तो चला सकते हैं। वे तो निर्जीव ही हैं न? सिर्फ अपनी ही शिकायत

है न? हम शिकायत करते हैं तभी तक न? बाकी उनकी किसी तरह की शिकायत नहीं है न! उन्हें छोड़ दें तो ज़बरदस्ती है कुछ? और जीवित लफड़ों के साथ तो कोई परेशानी हुई तो दावा करती है। आप दावा छोड़ दो, फिर वह दावा करती है। वही बहुत मुसीबत है!

दो मन, कभी नहीं हो सकते एक

दो मन एकाकार हो ही नहीं सकते। इसलिए दावे शुरू हो ही जाते हैं। इस विषय के अलावा अन्य सभी विषयों में सिर्फ एक मन है, एक ही पक्ष है। इसलिए वह दावा नहीं करता! जबकि मनवालों के साथ तो जोखिम है। एक ही बार जिसके साथ विषय भोग किया हो तो उसकी कोख से जन्म लेना पड़ेगा, वर्ना वह जहाँ जाए, वहाँ जाना पड़ेगा! मिश्रचेतन के साथ शादी कर ली तो फिर क्या हो सकता है? मिश्रचेतन के दावों की तो बड़ी मुसीबतें हैं! हमें बिल्कुल परवश कर देता है। इसलिए मिश्रचेतन का खाता रखने जैसा ही नहीं है। फिर भी यदि हो उसे क्या करना है? फिर उस खाते का समभाव से निकाल कर डालना है। खाता थोड़े ही फाड़ सकते हो? फेंक देने पर तो और ज़्यादा चिपकेगा। अत: निरंतर जागृत रहकर उसका निकाल कर देना है।

शादी करने में हर्ज नहीं है। लेकिन हमेशा दोनों का मन अलग ही होता है और वहीं पर व्यापार करने जाएँ, तो द्वेष हुए बगैर नहीं रहता। फिर भले ही कोई भी व्यापार करो न! फिर वहाँ चाहे कितना भी पुरुषार्थ करो फिर भी भेद पड़े बगैर नहीं रहता न! अलग मनवालों में एकता कैसे संभव है? वह तो व्यापार का स्वाद जितने समय हो, उतने से समय तक के लिए ही दोनों के मनों की एकता रहती है! लेकिन यदि उस स्वाद में संतोष नहीं मिले तो फिर तूफ़ान खड़ा हो जाता है। अत: भेद पड़े बगैर रहता नहीं न! क्योंकि वह 'फाइल' है इसलिए दावा कर सकती है। यदि आप कहो, 'मुझे त्याग लेना है।' तब वह कहेगी, 'नहीं, नहीं जाने दूँगी।'

यह पूरा जगत् मिश्रचेतन की लपेट में ही है। यदि मिश्रचेतन समझ में आ जाए, तब तो यह जगत् लपेट में नहीं है। ये अन्य सभी शौक लपेट

में लें ऐसे नहीं होते। इस मिश्रचेतन में तो आमने-सामने दावे दायर होते हैं। एक बार जाल में आने के बाद निकलना मुश्किल है। उस झंझट में फँसने के बाद, उसमें से कोई निकल नहीं पाया है। हमारा यह विज्ञान ऐसा है कि दोनों को ज्ञान दे दें तो दोनों समभाव से निकाल करना सीख जाते हैं और हल आ जाता है। वर्ना लाखों जन्मों तक भी नहीं छोड़े। आपको छोड़ने की इच्छा हो, तब वह आपको नहीं छोड़ता और उसे छोड़ने की इच्छा हो तब आप उसे नहीं छोड़ते। इस तरह कभी भी दोनों का टाइमिंग मिल नहीं पाता और इंजन मोक्ष की ओर जा नहीं पाता, ऐसा है यह मिश्रचेतन! खाने-पीने में परेशानी नहीं है। चार पूरणपूरी खाकर सो जाना। 'दादा' का नाम लेकर वह भोग भोगना, लेकिन यह मिश्रचेतन तो महा जोखिम है! यही संसार का बीज है। एक राजा को जीत लिया तो उसकी सेना अपने काबू में आ गई। उसका राज्य भी अपने काबू में आ गया। कृपालुदेव ने तंग आकर यह कहा है। जो संसार में लटकानेवाला है, उस पर उन्होंने बहुत भार दिया है कि क्या ऐसी हालत? वे खुद कहते थे कि, 'संसार से तो बहुत समय से, कई जन्मों से तंग आ चुका था।' लेकिन आखिर उन्होंने काट डाला। यहाँ से काटा, वहाँ से काटा और तेज़ी से खत्म कर दिया। ग़ज़ब के पुरुष थे, ज्ञानीपुरुष थे! वे तो चाहे सो करें! विषय तो जीवित जोखिम है। अन्य सभी जोखिम तो मृत कहलाते हैं। वे तो बहुत पुण्यशाली पुरुष थे इसलिए सभी जोखिम खत्म हो गए और खुद पार उतर गए और बैर नहीं बँधे।

दो तरफा सुख, करें दावा

विषय सुख दो तरफा है। अन्य इन्द्रिय सुख एक तरफा हैं। और यह दो तरफावाला तो दावा करेगा। वह कहे कि, 'सिनेमा देखने चलिए।' और तब आप कहो कि, 'नहीं, आज मुझे ज़रूरी काम है।' तब वह दावा करेगी। होता है या नहीं होता ऐसा?

प्रश्नकर्ता : ऐसा ही होता है। इसीलिए ऐसा होता है न?

दादाश्री : अब यदि पत्नी पहले से ही जानती हो कि उनके कर्म

के उदय की वजह से मना किया है तो समझदारी से चलेगी। लेकिन ऐसा भान नहीं है। वह तो कहेगी 'इन्होंने ही नहीं किया।'

प्रश्नकर्ता : मोह घेर लेता है।

दादाश्री : मोह घेर लेता है। और कौन कर रहा है, यह खुद को मालूम नहीं है। वह तो ऐसा ही समझती है, कि 'ये ही कर रहे हैं। नहीं, वे ही नहीं आ रहे हैं। इनकी ही इच्छा है, नहीं आने की।'

प्रश्नकर्ता : ये पिक्चर, नाटक, साड़ी, घर, फर्नीचर वगैरह का मोह है, उसमें हर्ज नहीं है न?

दादाश्री : ऐसा कुछ नहीं है, बहुत हुआ तो उसके लिए आपको मार पड़ेगी। 'इस' सुख को नहीं आने देंगे, लेकिन ये सामने दावा नहीं करेंगे न? जबकि वे तो 'क्लेम' करेंगे, इसलिए सावधान हो जाओ!

भोगे राग से, चुकाए द्वेष से

प्रश्नकर्ता : विषय राग से भोगते हैं या द्वेष से?

दादाश्री : राग से। उस राग में से द्वेष उत्पन्न होता है। यह मिश्रचेतन तो 'फाइल' कहलाती है, लेकिन पूर्वजन्म का हिसाब बंध चुका है, 'देखतभूली' का हिसाब हो चुका है, इसलिए उससे बच ही नहीं सकता न? उसकी इच्छा नहीं हो, आज तय किया हो, फिर भी शाम को जा पहुँचता है, बच ही नहीं सकता। वह आकर्षण से खिंच जाता है। अंदर से वह आकर्षण होता है और खुद यह समझता है कि 'मैं गया।' नहीं जाना हो फिर भी चला जाता है। इसका क्या कारण है? कि वह आकर्षण से खिंच जाता है।

प्रश्नकर्ता : जो मिश्रचेतन से संबंधित फाइल होती है, उसमें एक ओर जागृति भी रहती है, एक ओर मन में मिठास भी लगती है, दूसरी ओर वह अच्छा नहीं लगता। ज्ञान मना करता है कि यह सब योग्य नहीं है। इसलिए द्विधा होती रहती है।

दादाश्री : वह पसंद नहीं है, उसका मतलब कि वह छूट रहा है!

पसंद नहीं हो फिर भी वह क़रार पूरा करना चाहिए न? जो पसंद नहीं हो वह फिर चिपकता ही नहीं है। अंदर ज़रा पसंद हो तभी चिपकता है। जो पसंद नहीं हो, वह चिपकता भी नहीं और ज़्यादा दिन टिकता भी नहीं है। एक-दो साल में, पाँच सालों में फिर हल आ जाता है। इसलिए हर्ज नहीं है। यदि जागृति रही तो फिर क्या चाहिए आपको? यह पसंद नहीं है, यह बात निश्चित हो गई।

यह तो क़रारी मामला है, कुदरत के क़रार आपकी सहमति से हुए है। अब उस क़रार का भंग करें, तो चलेगा ही नहीं न! पुलिसवाला पकड़कर ले जाए, वैसा लगता है?

प्रश्नकर्ता : हाँ।

दादाश्री : पुलिसवाला पकड़कर ले जाए तो उसमें आपका ज़रा सा भी गुनाह नहीं है। राज़ी-खुशी के सौदे में भूल मानी जाएगी। जब तक स्वरूप का ज्ञान नहीं है, तब तक पुलिसवाला पकड़कर ले जाए, वह भी गुनाह है। उसे जो कर्म पसंद नहीं है, वहाँ उसे 'नापसंदगी' का कर्म बँधता है और यदि कर्म पसंद है तो वहाँ 'पसंदगी' का कर्म बँधता है। 'नापसंद' में द्वेष का कर्म बँधता है, द्वेष के परिणाम होते हैं। जिसे यह 'ज्ञान' नहीं हो, तो उसे क्या होगा?

प्रश्नकर्ता : द्वेष के परिणाम होने से बल्कि कर्म ज़्यादा बँधेंगे न?

दादाश्री : निरा बैर ही बाँधता है। अत: जिसे ज्ञान नहीं है, उसे यदि कुछ पसंद नहीं हो तो भी कर्म बँधता है और पसंद हो तो भी कर्म बँधता है। और 'ज्ञान' हो, तो उसे किसी प्रकार का कर्म नहीं बँधता।

'काम' निकाल लो

अत: जहाँ-जहाँ, जिस-जिस दुकान में आपका मन उलझे, उस दुकान के अंदर जो शुद्धात्मा है, वे ही आपको छुड़वा सकते हैं। इसलिए उनसे माँग करना कि 'मुझे इस अब्रह्मचर्य विषय में से मुक्त कीजिए।' मुक्त होने के लिए यों ही और सभी जगह प्रयत्न करोगे तो वह नहीं चलेगा। उसी दुकान के शुद्धात्मा आपको इस विषय में से छुड़वाएँगे।

अब ऐसी आपकी बहुत दुकानें नहीं होतीं, थोड़ी ही दुकानें होती हैं। जिसकी बहुत दुकानें हों, उसे ज़्यादा पुरुषार्थ करना पड़ेगा। बाकी, जिसकी थोड़ी सी हों, उसे तो चोखा करके 'एक्ज़ेक्टली' कर लेना चाहिए। खाने-पीने में कोई हर्ज नहीं है। लेकिन इस विषय में हर्ज है। स्त्री विषय और पुरुष विषय, ये दोनों बैर खड़ा करनेवाले कारखाने हैं। इसलिए जैसे-तैसे करके निबेड़ा लाओ।

प्रश्नकर्ता : इसी को आप काम निकाल लेना कहते हैं?

दादाश्री : और नहीं तो क्या? ये जो सब रोग हैं, उन्हें निकाल देना है।

इनमें से मैं आपको कुछ भी करने को नहीं कहता हूँ। सिर्फ जानने को ही कहता हूँ। यह 'ज्ञान' जानने योग्य है, करने योग्य नहीं है। जिस ज्ञान को जाना, वह परिणाम में आए बगैर रहेगा ही नहीं। अत: आपको कुछ भी नहीं करना है। भगवान महावीर ने कहा था कि, 'वीतराग धर्म में करोमि, करोसि और करोति नहीं होता।'

विषय से बढ़े बैर

मिश्रचेतन के साथ व्यवहार करने जैसा है ही नहीं और करना पड़े तो अनिवार्य रूप से करना पड़ेगा। उससे तो बच ही नहीं सकते। जो संसारी है उसे तो अनिवार्य रूप से व्यवहार करना ही पड़ेगा। जैसे जेल में गया हुआ आदमी जेल में खुद की जगह साफ करके लीप रहा हो तो हम समझते हैं कि उसे जेल का शौक होगा, इसलिए लीप रहा होगा? नहीं, उसे जेल अच्छी तो नहीं लगती, लेकिन यहाँ पर आ गया है, अब फँस चुका है, तो यहाँ अब सोने के लिए साधन तो चाहिए न? लेकिन उसे जेल में रुचि नहीं होती। वह जगह लीपता ज़रूर है, लेकिन वहाँ उसकी इच्छा नहीं है। वहाँ उसे जेल का शौक नहीं है। उसी प्रकार इस विषय का शौक बहुत सोचकर खत्म कर देने जैसा है। विषय सबसे बड़ा रोग है। पूरा जगत् इसी कारण लटका है। सिर्फ विषय से ही बैर खड़े होते हैं और बैर से संसार चलता रहता है। सभी बैर आसक्ति में से खड़े होते हैं।

प्रश्नकर्ता : यानी ऐसा ही हुआ न कि विषय से ही यह सारा संसार खड़ा हो जाता है?

दादाश्री : विषय आसक्ति से उत्पन्न होते हैं, और फिर उनमें से विकर्षण होता है। जब विकर्षण होता है तब बैर बँधता है और बैर के 'फाउन्डेशन' पर यह जगत् खड़ा है। आम के साथ बैर नहीं है और आलू के साथ भी बैर नहीं है। आलू में जीव हैं, बहुत सारे जीव हैं, लेकिन वे बैर नहीं रखते हैं। उनसे केवल नुकसान क्या होता है कि आपको दिमाग़ से ज़रा दिखना कम हो जाता है, आवरण बढ़ाता है। अन्य किसी तरह का बैर नहीं रखते। बैर तो मनुष्य में आया हुआ जीव रखता है।

इस मनुष्य जाति में ही बैर बंधा हुआ है। यहाँ से जाकर, वहाँ साँप बनता है और फिर काटता है। बिच्छू बनकर काटता है। बैर बाँधे बगैर कभी भी ऐसा कुछ नहीं हो सकता।

प्रश्नकर्ता : आज देखने में कोई संबंध नहीं है, लेकिन एक-दूसरे के बीच कोई बैर खड़ा हो, तो क्या वह पहले कोई विषय संबंध हुआ ही होगा?

दादाश्री : बैर सिर्फ पूर्वभव के उदय की वजह से ही होता है।

प्रश्नकर्ता : लेकिन वह विषय के कारण या बिना विषय के भी हो सकता है?

दादाश्री : हाँ, विषय के बिना भी हो सकता है। अन्य अनेक कारण हो सकते हैं। लक्ष्मी के कारण बैर बँधता है, अहंकार के कारण बैर बँधता है, लेकिन यह विषय का बैर बहुत ज़हरीला होता है। सबसे ज़्यादा ज़हरीला, इस विषय का बैर। पैसों का, लक्ष्मी का, अहंकार से बैर बँधा हुआ हो, तो वह भी बहुत ज़हरीला होता है।

प्रश्नकर्ता : कितने जन्मों तक चलता है?

दादाश्री : अनंत जन्म तक भटकता रहेगा। बीज में से बीज डलता

है, बीज में से बीज डलता है, बीज में से बीज डलता है। वह सेंकना नहीं जानता है न? कैसे सेंका जाए, ऐसा जानता नहीं है न?

प्रश्नकर्ता : जब तक सेंकना नहीं जानता, तब तक चलता ही रहेगा?

दादाश्री : हाँ, बस बीज पड़ते ही रहते हैं।

प्रश्नकर्ता : आपने ऐसा भी कहा है कि कुछ चारित्रमोह ऐसे प्रकार के भी होते है कि जो ज्ञान को भी उड़ा दें। तो वह किस प्रकार का चारित्रमोह?

दादाश्री : वह विषय में से खड़ा होनेवाला चारित्रमोह है। वह फिर ज्ञान को और सबको उड़ा देता है। अभी तक विषय से ही यह सब रुका हुआ है। मूल विषय है और उसमें से इस लक्ष्मी पर राग हुआ, और उसका अहंकार है। अत: यदि मूल विषय चला जाए, तो सब चला जाएगा।

विषय बीज सिकता है ऐसे

प्रश्नकर्ता : यानी बीज को सेंकना आना चाहिए, लेकिन उसे कैसे सेंकना है?

दादाश्री : वह तो अपने इस प्रतिक्रमण से। आलोचना-प्रतिक्रमण-प्रत्याख्यान से।

प्रश्नकर्ता : वही? दूसरा कोई उपाय नहीं है?

दादाश्री : दूसरा कोई उपाय नहीं है। तप करने से तो पुण्य बँधता है, समझ में आया न? और बीज को सेंकने से निबेड़ा आ जाता है।

यह संसार अब्रह्मचर्य से खड़ा है और ऐसा न जाने कितने ही समय तक चलता रहेगा। जो निकाचित दु:ख हैं, वे अब्रह्मचर्य के हैं। निकाचित दु:ख यानी सहन करने पर भी हटते नहीं। चाहे कितने भी उपाय करें तो भी हटते नहीं। अन्य सभी दु:ख तो आसानी से चले जाते हैं। जबकि निकाचित में तो दूसरे व्यक्ति का क्लेम रहता है। अन्य चीज़ें क्लेम नहीं करतीं, लेकिन

इस विषय में तो आप 'प्रसंग' छोड़ दो, फिर भी वह दावा करती है, या फिर आपके साथ बैर बाँधती है। उससे फिर क्लेम ही खड़े होते हैं!

प्रश्नकर्ता : एक पत्नी के अलावा जो विषय होता है वह?

दादाश्री : नहीं, एक पत्नी के साथ हो, फिर भी एक ही विषय सुख में दो पार्टनर होते हैं न? उसमें अगर आप कहो कि 'उकता गया', तब वह कहेगी, 'मैं नहीं उकताई', तब क्या होगा?

यह 'समभाव से निकाल' करने का नियम क्या कहता है, तू किसी भी प्रकार से ऐसा कर कि उसके साथ बैर नहीं बँधे, बैर से मुक्त हो जा।

बैर का कारखाना

हमें यहाँ एक ही चीज़ करनी है कि बैर नहीं बढ़े और बैर बढ़ाने का मुख्य कारखाना कौन सा है? यह स्त्रीविषय और पुरुषविषय!

प्रश्नकर्ता : उसमें बैर कैसे बँधता है? अनंतकाल के लिए बैर बीज पड़ता है, वह कैसे?

दादाश्री : ऐसा है न कि कोई मृत पुरुष या मृत स्त्री हो और ऐसा मान लो कि उसमें कोई दवाई भरकर और पुरुष, पुरुष जैसा ही रहे और स्त्री, स्त्री जैसी ही रहे तो हर्ज नहीं है। उसके साथ बैर नहीं बँधेगा, क्योंकि वह जीवित नहीं है, जबकि यह तो जीवित है, यहाँ बैर बँधता है।

प्रश्नकर्ता : वह क्यों बँधता है?

दादाश्री : अभिप्राय में 'डिफरेन्स' है, इसलिए। आप कहो कि, 'मुझे अभी सिनेमा देखने जाना है।' तब वह कहेगी कि, 'नहीं, आज तो मुझे नाटक देखने जाना है।' यानी टाइमिंग मेल नहीं खाता। यदि एक्ज़ेक्ट टाइमिंग से टाइमिंग मिले तभी शादी करना।

प्रश्नकर्ता : फिर भी कुछ ऐसे होते हैं कि उनके कहे अनुसार होता भी है।

दादाश्री : वह तो कोई ग़ज़ब के पुण्यशाली हों, तब जाकर उनकी

स्त्री निरंतर उनके अधीन रहती है। फिर उस स्त्री का खुद का और कुछ भी नहीं होता। खुद का अभिप्राय ही नहीं होता, वह निरंतर अधीन ही रहती है।

नहीं मिलती, अधीनता में रहे ऐसी

ऐसा है, इन संसारियों को ज्ञान दिया है। साधु बनने को मैंने नहीं कहा है, लेकिन जो 'फाइलें' हैं, उनका 'समभाव से निकाल' करना, ऐसा कहा है! और प्रतिक्रमण करना। ये दो उपाय बताए हैं। ये दो करोगे तो आपकी दशा को उलझानेवाला कोई है नहीं। उपाय नहीं बताए होते तो किनारे पर खड़े ही नहीं रह पाते न? किनारे पर जोखिम है।

आपका वाइफ के साथ मतभेद होता था, तब राग होता था या द्वेष?

प्रश्नकर्ता : वह तो, बारी-बारी से दोनों होते हैं, मुझे 'सूटेबल' हो तो राग होता है और 'ओपोज़िट' हो तो द्वेष होता है।

दादाश्री : यानी यह सब राग-द्वेष के अधीन है। अभिप्राय एकाकार नहीं होते हैं न? कोई ही ऐसा पुण्यशाली होता है कि जिसकी स्त्री कहे, 'मैं आपके अधीन रहूँगी। भले ही कहीं भी जाओ, चिता में जाओ फिर भी अधीन रहूँगी।' वह तो धन्यभाग्य ही कहलाएँगे न! लेकिन ऐसा किसी-किसी को ही मिलता है। यानी इसमें मज़ा नहीं है। हमें नया संसार खड़ा नहीं करना है। अब मोक्ष में ही जाना है, जैसे-तैसे करके। नफ़ा-नुकसान के सभी खातों का निकाल करके लेना-देना खारिज करके हल निकाल देना है।

यह वास्तव में मोक्ष का मार्ग है। किसी काल में कोई नाम तक नहीं दे, ऐसा यह ज्ञान दिया है, लेकिन यदि आप जान-बूझकर उल्टा करोगे तो फिर बिगड़ेगा। फिर भी कुछ समय में तो हल निकाल ही लेगा। अत: एकबार यह जो प्राप्त हो गया है, इसे छोड़ने जैसा नहीं है।

विषय सुख, 'री पे' करना पड़ेगा

केवलज्ञान यानी 'ऐब्सल्यूट'। इसे गुजराती में कहना हो तो निरालंब कह सकते हैं। हमें किसी प्रकार के अवलंबन की ज़रूरत नहीं है, अत:

हमें कोई चीज़ स्पर्श नहीं करती। वह हमारा स्वरूप! आपको, 'मैं शुद्धात्मा हूँ' का भान हुआ यानी मोक्ष का 'वीज़ा' मिल गया और आपकी गाड़ी चल पड़ी, लेकिन वह शब्द रूप में भान हुआ है। जब वह अंत में निरालंब तक पहुँचेगा, तब वह केवलज्ञान कहलाता है।

प्रश्नकर्ता : तो हमारे जो अवलंबन हैं, व्यवहार के, चीज़ों के और मन के भाव उन सभी को छोड़ना है?

दादाश्री : वे तो अपने आप ही छूट जाएँगे।

प्रश्नकर्ता : फिर भी हमारे भाव में से नहीं छूटता है। ऐसा लगता रहता है कि यह अच्छा है, यह बुरा है। फिर उसमें सुख उत्पन्न होता है। ऐसा लगता है कि अवलंबन का मूल कारण यही है। मतलब हमारे ये अवलंबन जाते नहीं हैं।

दादाश्री : ऐसा है न, इन अवलंबनों का जितना सुख आपने लिया है, वह सब उधार पर लिया हुआ सुख है, 'लोन' पर। और 'लोन' यानी जो 'री पे' करना पड़ता है। जब 'लोन' 'री पे' हो जाए, फिर आपको कोई झंझट नहीं रहेगा। आपको जो चीज़ें मिलती हैं, उन चीज़ों में से सुख नहीं मिलता। आप उनमें से जो सुख लेते हो, वह 'लोन' लेने के बराबर है। वह 'लोन' आपको 'री पे' करना पड़ेगा।

प्रश्नकर्ता : लेकिन यह पूरा व्यवहार तो एक-दूसरे के अवलंबन से ही चलता है न?

दादाश्री : हाँ, वह तो सब ऐसे ही चलता है। फिर जैसे-तैसे करके धकेलते रहते हैं, ऐसा व्यवहार है सारा।

प्रश्नकर्ता : तो इन अवलंबनों को छोड़ने के लिए क्या पुरुषार्थ करना चाहिए?

दादाश्री : कुछ भी नहीं छोड़ना है। इस दुनिया में कुछ भी छोड़ा जाता होगा? छोड़ना तो, सिर्फ 'रोंग बिलीफ' ही छोड़नी हैं। लेकिन वह आपसे, अपने आप से नहीं छूटेगी। क्योंकि आपने 'रोंग बिलीफ' खड़ी

की हैं। जैसे-जैसे उन्हें छोड़ने जाओगे, वैसे-वैसे और ज़्यादा 'रोंग बिलीफ' खड़ी होती जाएँगी। वह तो जब 'ज्ञानीपुरुष' 'राइट बिलीफ' बिठा देते हैं, तब 'रोंग बिलीफ' छूट जाती हैं।

आत्मा का सुख नहीं भोगते और *पुद्गल* से सुख माँगा आपने! आत्मा का सुख होता, तो हर्ज ही नहीं था लेकिन *पुद्गल* से भीख माँगी है तो वह लौटानी पड़ेगी। वह 'लोन' है। जितनी मिठास आती है, उतनी ही उसमें से कड़वाहट भुगतनी पड़ेगी। क्योंकि *पुद्गल* से 'लोन' लिया है। उसे 'री पे' करते समय उतनी ही कड़वाहट आएगी। *पुद्गल* से लिया है इसलिए *पुद्गल* को ही 'री पे' करना पड़ेगा।

प्रश्नकर्ता : हमने रुपये लिए होंगे तो वापस रुपये ही देने पड़ेंगे न? तो फिर हमने उससे मिठास ली तो हम मिठास ही वापस क्यों नहीं लौटाते? ऐसा संबंध क्यों नहीं आता? कड़वाहट ही क्यों आती है?

दादाश्री : ऐसा कहीं होता होगा? जो 'लोन' लिया, उसे वापस करना है। रुपये लिए तो वे रुपये वापस करने हैं। अब मिठास, उसे देना नहीं कहते। ऐसा है न, जब सोना लिया उस समय अच्छा लगता है, लेकिन सोना 'री पे' करने जाओ तो कड़वाहट ही लगती है। लिया हुआ कुछ भी वापस करते हो, तब उस समय कड़वाहट बर्तती है, ऐसा नियम है और वापस किए बिना चारा भी नहीं है न!

प्रश्नकर्ता : लेकिन क्या लोग प्रेम से वापस नहीं देते?

दादाश्री : जिसने जो चीज़ ली है, उसे छोड़नी पड़े तो वह उसे खुद को अच्छा नहीं लगता। अतः प्रत्येक चीज़ को 'री पे' करने में भयंकर दुःख होता है।

प्रश्नकर्ता : इसमें सुख लिया उसके परिणाम स्वरूप ही ये झगड़े और क्लेश है?

दादाश्री : इसीमें से खड़ा हुआ है यह सब। और सुख कुछ भी नहीं है। ऊपर से सुबह-सुबह अरंडी का तेल पीया हो, ऐसा चेहरा हो

जाता हैं, मानो अरंडी का तेल पीया हो! उसे तो, सोचते ही घिन आती है!

प्रश्नकर्ता : वर्ना फिर भी यदि लोगों के दुःखों के परिणाम इतने अधिक विचित्र हैं तो वे कब छूट पाएँगे? इतने सारे दुःख सहन करते हैं ये लोग, इतने से सुख के लिए।

दादाश्री : वही, इसीका लालच और कितने दुःख भुगतने पड़ते हैं।

प्रश्नकर्ता : पूरी लाइफ खत्म कर देता है उसमें। पूरा जीवन प्रतिदिन वही हैमरिंग। वही का वही टकराव।

प्रश्नकर्ता : री पे करते समय जो दुःख होता है, वह तो इस पर आधारित है न कि आपकी कितनी आसक्ति या लोभ है।

दादाश्री : वह तो जितनी ज़्यादा आसक्ति उतना अधिक दुःख। कम आसक्ति रही तो कम दुःख होता है। वह सब तो आसक्ति पर आधारित है न?

आपको कभी दाद हुआ है? उसे जितना खुजलाओ, उतना ज़्यादा मज़ा आता है न? अब वह सुख आप किस से लेते हैं? *पुद्‌गल* से। दोनों को 'रबिंग' करके घिस-घिस कर, 'इचिंग' करके, सुख ढूँढते हो। और जैसे ही हाथ रुका कि तुरंत जलन शुरू हो जाती है। देखो, *पुद्‌गल* उसे तुरंत ही दुःख देता है न? *पुद्‌गल* क्या कहता है कि मुझ में से क्या सुख ढूँढ रहे हो? आपके पास तो सुख है न? यहाँ हम से सुख लोगे तो आपको 'री पे' करना पड़ेगा।' दाद का अनुभव नहीं हुआ है आपको? मतलब ये सभी 'री पे' करने की चीज़ें हैं। इस दाद में बड़ा मज़ा आता है न? जब वह खुजलाता है, उस समय उसके चेहरे पर कितना आनंद होता है न? तब देखनेवाले को ऐसा लगता है कि, 'हे भगवान, मुझे भी दाद देना।' लोग ऐसा करते हैं या नहीं?

प्रश्नकर्ता : ऐसे खुजलाने में आनंद कहाँ से होगा?

दादाश्री : नहीं-नहीं, खुजलाते समय उसके मुँह पर बहुत आनंद

होता है। इससे सामनेवाले व्यक्ति के मन में ऐसा होता है कि ये लोग तो आनंद भोग रहे हैं और हम रह गए। वे भगवान से माँगते हैं कि मुझे भी कुछ दीजिएगा।

प्रश्नकर्ता : ऐसा कोई थोड़े ही माँगता है ? बल्कि ऐसा ही सोचता है कि यह तो गंदगी है।

दादाश्री : यह विषय भी वैसा ही है। खुजली जैसा ही है यह। सिर्फ घर्षण है। उस घर्षण से 'इलेक्ट्रिसिटी' उत्पन्न होती है, फिर वह जब वापस आता है, 'बेक' मारता है, तो वह जोड़ों को तोड़ देता है। उसमें कहीं सुख होता होगा ? उसमें आत्मा नहीं होता। उसमें चेतन भी नहीं होता। चेतन तो सिर्फ उसका निरीक्षक ही है। यानी यह तो विपरीत दशा को खुद सुख मान लेता है।

यह ज्ञान तो बहुत अच्छा है, लेकिन अब उस चेतक को मज़बूत कर लेना है। जब लगे कि विषय में सुख है, तो वहाँ पर 'चेतक' बैठाने की ज़रूरत है। विषय का आराधन तो इस तरह से होना चाहिए कि जैसे पुलिसवाला ज़बरदस्ती करवा रहा हो। यह चेतक हमने आपमें बैठा दिया है। लेकिन इस चेतक को इतना मज़बूत कर लेना है कि पुलिसवाले का भी विरोध करे। लेकिन यदि आप उस चेतक की नहीं सुनोगे तो चेतक निर्माल्य हो जाएगा। आप यदि उस चेतक का सम्मान करोगे, उसे खुराक दोगे तो उसे पुष्टि मिलेगी! आप उस चेतक के ज्ञाता-दृष्टा हो और चेतक 'चंदूभाई' को चेतावनी देता रहेगा, 'चंदूभाई' चेतक की सुनते हैं या नहीं, वह आपको देखना है।

सुख की 'बिलीफ' तो स्वरूप में ही रहनी चाहिए। विषय में सुख है, ऐसा 'बिलीफ' में रहना ही नहीं चाहिए। वह तो, केवलदर्शन की तरह स्वरूप में ही सुख है, ऐसा 'बिलीफ' में रहना चाहिए। इस तरह यदि चेतक मज़बूत कर लिया तो फिर हर्ज नहीं।

[४]

विषय भोग, नहीं हैं निकाली

विषय भोग को 'निकाली बात' कौन कह सकता है?

'यह' ज्ञान लेने के बाद विषय के अलावा अन्य कोई चीज़ बाधक नहीं है और जो अहंकार बाधक है, वह अहंकार हमने ले लिया है। अब इसमें सिर्फ विषय ही एक ऐसी चीज़ है कि जो कभी-कभार मार खिला दे। विषय तो जलन शांत करने का एक तरह का साधन है। आपमें तो निराकुलता उत्पन्न हो गई है, अतः इस सुख की ज़रूरत ही कहाँ रही? आपने तो अब आत्मा प्राप्त कर लिया है। लेकिन अभी तक मन में घुसा नहीं है, जोखिम मालूम ही नहीं है न? हिसाब ही नहीं लगाया है न? वर्ना ऐसी हिंसा कौन करे? भगवान यदि कभी विषय से होनेवाली हिंसा का वर्णन करें तो मनुष्य मर जाए। लोग समझते हैं कि इसमें क्या हिंसा है? हम किसी को ड़ाँट नहीं रहे हैं। लेकिन भगवान की दृष्टि से देखें तो इसमें हिंसा और आसक्ति दोनों साथ में हैं, इसलिए पाँचों महाव्रत टूटते हैं। और उससे बहुत दोष लगते हैं, एक ही बार के विषय से लाखों जीव मर जाते हैं। उसका दोष लगता है। यानी इच्छा नहीं होने के बावजूद भी इसमें भयंकर हिंसा है। अतः रौद्र स्वरूप हो जाता है। वर्ना यह ज्ञान प्राप्त होने के बाद तो निरंतर समाधि रहे, ऐसा है यह ज्ञान। अतः जब तक संसारीपन है, स्त्री विषय है, तब तक वह अहिंसा का घातक ही है।

इस देह के संग विषय हैं, इसलिए पुरुषार्थ में कच्चा पड़ जाता है। वर्ना, जिस दिन ज्ञान देता हूँ, तब वास्तविक आनंद का अनुभव करता है। लेकिन दूसरे दिन फिर अँगीठी में हाथ डाल देता है। क्योंकि अनादि का

परिचय है न? अँगीठी में हाथ डाले उसमें भी हर्ज नहीं है, लेकिन नई फिल्म बनाता है, उसमें हर्ज है।

प्रश्नकर्ता : तो फिर यह विषय-विकार क्यों हो जाता है?

दादाश्री : वह तो हो जाता है और आपकी बात अलग है। आप तो शादीशुदा हो। आपको तो 'समभाव से निकाल' करना है। यदि शादी कर लें तो इन्हें भी 'समभाव से निकाल' करना पड़ेगा, वर्ना पत्नी को दुःख पहुँचेगा। लेकिन अपना ज्ञान ऐसा है कि जिसे ब्रह्मचर्यव्रत लेना हो, वह उसमें रह सकता है। 'मैं शुद्धात्मा हूँ' ऐसा निरंतर, जिसके लक्ष्य में रहता है, वही सबसे बड़ा ब्रह्मचर्य। लेकिन जिसे व्यवहार में 'चारित्र' लेने की इच्छा है, उसे बाहरी ब्रह्मचर्य की ज़रूरत है।

यह ज्ञान ऐसा है कि एकावतारी बना दे, लेकिन सतर्क रहना चाहिए और मन में ज़रा सा भी दग़ा नहीं रखना चाहिए। यह विषय शौक की चीज़ नहीं है, निकाल करने जैसी चीज़ है।

उसे मिले एकावतारी बॉन्ड

प्रश्नकर्ता : लेकिन दादा, एक जन्म में ही मोक्ष पाना हो, तो क्या करना चाहिए? वह बताइए न! आज हम वही तय कर लें।

दादाश्री : एक जैन हो, उसे पुलिसवाला पकड़कर तीन दिन भूखा रखे और फिर माँस खाने को दे और कहे कि तुझे यही खाना पड़ेगा और फिर वह उसे खाए, तो वह बंधन में नहीं आता। ऐसा पुलिसवाले के दबाव से है, उसकी खुदकी इच्छापूर्वक नहीं है। मनुष्य अगर उसी तरह विषय भोगेगा तो वह एकावतारी बनेगा, उसका दूसरा जन्म नहीं होगा। विषय स्वाधीन नहीं होना चाहिए। पुलिसवाले के अधीन, भूख के अधीन होकर माँसाहार करो तो आप गुनहगार नहीं हो। वैसा ही यदि विषय में रहेगा, तो वह अवश्य ही एकावतारी बनेगा।

प्रश्नकर्ता : आपकी इस आज्ञा का पालन करेंगे। अब एकावतारी पद लिख दीजिए।

दादाश्री : यदि हमारी इतनी सी बात का पालन करे तो हम एकावतारी बॉन्ड लिख देंगे। एकावतारी बनना हो तो यही एक चीज़ सँभालनी है। बाकी अन्य व्यापार-धंधे में हर्ज नहीं।

ब्रह्मनिष्ठा बिठाएँ ज्ञानी

विषयों का स्वभाव कैसा है? आज से दस दिन के लिए विषय बंद, ऐसा तय करें तो उस अनुसार चलता रहेगा और तीसरे दिन से ही आनंद बढ़ने लगेगा, लेकिन यदि विषय में पड़ा तो फँसा। फिर बाहर नहीं निकल पाएगा। विषय के बारे में निर्णयात्मक होना चाहिए। निष्ठा अपने आप नहीं बैठती, वह तो ज्ञानीपुरुष ही बैठा सकते हैं। जगत् पर से निष्ठा उठाने के लिए और ब्रह्म में निष्ठा बैठाने के लिए हमें ज्ञान देना पड़ता है।

प्रश्नकर्ता : आप ब्रह्म की निष्ठा बैठाते हैं तो ब्रह्मचर्य की निष्ठा क्यों नहीं बैठाते?

दादाश्री : यदि शादीशुदा है, तो क्या उसमें मैं हस्तक्षेप करूँगा? वह तो, यदि यहाँ आकर माँग करे तो हम देते हैं। यह ज्ञान हो, फिर भी एक्ज़ेक्ट ब्रह्मचर्य के बिना आत्मानुभव तो नहीं हो सकता। वास्तविक आनंद और हमारे जैसा पद, यह सब चाहिए तो संपूर्ण ब्रह्मचर्य होना चाहिए और ठेठ अंत में तो विषय के प्रति चिढ़ भी नहीं और राग भी नहीं रहे, ऐसा हो जाए तब वास्तविक अनुभव होता है। लेकिन पहले तो विषयों के प्रति चिढ़ उत्पन्न होनी चाहिए। ताकि फिर चित्त और अधिक शोध करे और ऐसा करते-करते चित्त छूटता जाएगा, फिर अंत में चिढ़ भी नहीं रहेगी।

उदयकर्म के नाम पर पोल

प्रश्नकर्ता : हमारे जैसे शादीशुदा हों, जिन्हें कभी विषय में पड़ना पड़े, लेकिन अंदर बिल्कुल भी अच्छा नहीं लगे, तब भी आत्मा का अनुभव नहीं होगा?

दादाश्री : कुछ अंशों तक हो सकेगा, लेकिन हमारे जैसा नहीं हो सकेगा।

प्रश्नकर्ता : मेरी इच्छा नहीं हो और 'फाइल नंबर टू' की इच्छा से गड्ढे में गिरना पड़े, तो क्या करना चाहिए? फाइल का समभाव से निकाल करना चाहिए?

दादाश्री : फाइल का समभाव से निकाल करना ही पड़ेगा न! जब तक नो-ऑब्जेक्शन सर्टिफिकेट नहीं मिलता, तब तक क्या हो सकता है? जब मजबूरन करना पड़े, तब प्रकृति का नाश होता है। पहले शादी में जाते थे, तब राज़ी-खुशी से जाते थे, और अब मजबूरन शादी में जाना पड़े, तब वहाँ जाने से पहलेवाली प्रकृति का नाश होता है।

अतः इस प्रकार विषय का हर तरह से पृथक्करण करने के बाद ऐसी स्टेज आती है कि इस विज्ञान से थोड़ी-थोड़ी जागृति उत्पन्न होती है। फिर, विज्ञन यानी धुँधले विज्ञन से, उसे विषय रहता है, लेकिन खुद को पसंद नहीं होता। जैसे भूख लगी हो और खाना पड़े, नहीं भाए फिर भी खाए, इस प्रकार तंग आकर भोगना पड़ता है। जबकि दूसरा जो राज़ी-खुशीवाला *भोगवटा* (सुख या दुःख का असर) होता है, वह *भोगवटा* तो बहुत मूर्छापूर्वक होता है। इस तरह के *भोगवटे* के बाद अनेकों स्टेप्स गुज़रने के बाद अंतिम *भोगवटा* होता है जिसमें उसे पूर्ण अरुचि होती है। *भोगवटा* भी दो प्रकार का होता है। एक इच्छापूर्वक और एक इच्छा नहीं होने के बावजूद कर्म के उदय से। उदयकर्म पूरा नहीं हुआ हो, तब क्या हो सकता है? उदयकर्म पूरा हो जाए तभी छूट सकता है, लेकिन तब तक उसे भुगतना तो पड़ेगा। तब क्या होता है? अरुचि उत्पन्न होती रहती है।

सिर्फ इस विषय में ही हम मर्यादा रखते हैं। मर्यादा नहीं रखें तो उदयकर्म के नाम पर दुरुपयोग करेगा। 'मुझे उदयकर्म बाधक है' ऐसे कहता फिरता है। वास्तव में उदयकर्म किसे कहते हैं? उदय के अधीन। खुद की इच्छा ही नहीं होती!

प्रश्नकर्ता : पहले का चार्ज करके लाया हो और समझकर समभाव से निकाल करे तो?

दादाश्री : समझकर ही समभाव से निकाल करते हैं, फिर भी अभी

अंदर उसे ऐसा अभिप्राय रहता है कि 'इसमें सुख है'। यह तो खुद ही वकील, खुद ही जज और खुद ही अभियुक्त। इसलिए फिर जजमेन्ट अपनी ओर खींच ले जाता है। हम अभिप्राय-ब्रह्मचर्य को ब्रह्मचर्य कहते हैं।

निर्विषयी होना ही पड़ेगा

निर्विषयी होना पड़ेगा। ब्रह्मचय के बारे में कोई बात ही नहीं करता न? क्योंकि लोग व्यापारी हो गए हैं। ब्रह्मचर्य की बात करनी चाहिए। कषायों की बात करनी चाहिए। विषय कषाय की वजह से ही मोक्ष में नहीं जा रहा। जिन के पास क्रोध-मान-माया-लोभ की पूँजी है, तब तक वह इन्हें निकालने की बात कर ही नहीं सकता न। जब तक खुद के पास इतनी सारी पूँजी हो, तब तक अन्य किसी को कहेगा ही नहीं। जब खुद के पास पूँजी नहीं रहे, तभी सामनेवाले से इस बारे में बात की जा सकती है।

प्रश्नकर्ता : विषय से संबंधित ऐसी बातें अन्यत्र कहीं हुई ही नहीं हैं।

दादाश्री : विषय को लोग ढँकना चाहते हैं। खुद गुनहगार हैं, इसलिए ढँकते हैं। कृपालुदेव खुद कहते थे कि, 'यह विषय पसंद नहीं है, फिर भी मैं भोग रहा हूँ।' और तब उन्होंने कितना सुंदर भक्तिपद लिखा! अब उस भक्तिपद में ऐसा सब पढ़ें तब लोगों के मन में ऐसा हो जाता है कि यह तो बीवी-बच्चे छोड़ देने की बात है। इसलिए लोग परेशान हो जाते हैं। तब फिर लोग पढ़ा हुआ, एक तरफ रख देते हैं और कहते हैं कि यह उन्होंने लिखा है। वे तो भले ही लिखते रहें। इसके बावजूद उनकी बेटियाँ थीं। यानी वस्तुस्थिति में ऐसा है। लोग बाहर का देखते हैं कि, 'कृपालुदेव तो शादीशुदा थे, और उनकी बेटियाँ थीं।' इसके बावजूद भी उन्होंने खुद ही कहा है कि, 'यह गलत है, फिर भी मैं भोग रहा हूँ।'

प्रश्नकर्ता : जिन-जिन भूलों के होने की वजह से वह हो गया, वह फिर से नहीं आनेवाला, लेकिन अब तो ऐसा रहता है कि यह कैसी भूल हो गई? यह तो बहुत गलत है।

दादाश्री : क्योंकि जब तक किसी हितकारी ज्ञानीपुरुष ने बात नहीं समझाई है, तब तक ऐसा उल्टा चलता रहेगा, लेकिन जब समझ में आए तब खुद को विश्वास हो जाता है कि सही बात तो यही है और हमने जो किया, वह गलत किया है।

प्रश्नकर्ता : कोई भी साधु-संत हों, वे भजन-कीर्तन सिखाते तो हैं, लेकिन भौतिक सुख की ओर ही ले जाते हैं न?

दादाश्री : वह तो उनकी नीयत ही ऐसी होती है, तो फिर क्या हो? हमेशा ही, जो जितना साफ होगा, वह उतना ही साफ बोल पाएगा। अब चरित्र से संबंधित, विषय से संबंधित क्यों नहीं बोलते? तब क्यों चुप? क्योंकि वह खुद जितना साफ है, उतना ही साफ बोल सकता है।

नहीं चलेगी पोल, भीतर में

एक महाराज थे, वे व्याख्यान में विषय पर बहुत कुछ बोलते थे, लेकिन जब लोभ की बात आए, तब कुछ नहीं बोलते थे। कोई विचक्षण समझ गया कि ये कभी लोभ की बात क्यों नहीं करते? सभी तरह की बातें करते हैं, विषय पर भी बातें करते हैं। फिर वह महाराज के यहाँ गया और अकेले में उनकी गठरी खोलकर देखी। तो पुस्तक के बीच सोने की एक गिन्नी रखी हुई थी, जो उसने निकाल ली और लेकर चला गया। फिर महाराज ने जब गठरी खोली तो गिन्नी नहीं मिली। बहुत खोजने पर भी गिन्नी नहीं मिली। दूसरे दिन महाराज ने व्याख्यान में लोभ पर बात करनी शुरू कर दी कि लोभ नहीं करना चाहिए। जब तक गिन्नी थी, तब तक लोभ की बात नहीं हो पाती थी। खुद के मन में इतना कपट है, इसलिए फिर लोभ की बात बोली ही नहीं जा सकती न? उस आदमी ने खोज निकाला। उसे कोई ऐसा होशियार मिल गया और महाराज का लोभ तुरंत निकल गया। उसने भाँप लिया कि इसके पीछे कोई कपट है।

अब आप यदि विषय की लाइन पर बोलना शुरू कर दो तो यदि आपकी वह लाइन होगी तो भी टूट जाएगी। क्योंकि आप मन के विरोधी बन गए। मन का वोटिंग अलग और आपकी वोटिंग अलग हो गई। मन

समझ जाता है कि, 'ये तो हमारे विरोधी हो गए हैं, अब मेरा वोट नहीं चलेगा।' लेकिन भीतर कपट है, इसलिए लोग नहीं बोलते और ऐसा बोलना उतना आसान भी नहीं है न! पब्लिक को यदि सही सिखाया जाए तो पब्लिक तो सबकुछ समझ जाए, क्योंकि भीतर आत्मा है न? इसलिए देर नहीं लगती। लेकिन कोई कहता नहीं है न? लेकिन वह कहे कैसे? क्योंकि उनके भीतर भी पोल रहती है न? मैं बीड़ी पीऊँ और आपसे ऐसा कहूँ कि बीड़ी नहीं पीनी चाहिए तो मेरा प्रभाव कैसे पड़ेगा? मेरा बिल्कुल स्ट्रोंग होगा, साफ होगा तभी मेरा प्रभाव पड़ेगा। यदि एक ही मनुष्य प्योर हो तो कितने ही मनुष्यों का काम हो जाए। अत: खुद की प्योरिटी चाहिए। आप चाहे संसारी हों या त्यागी हों, भगवान को कुछ लेना-देना नहीं है, वहाँ तो प्योरिटी चाहिए। इम्प्योर गोल्ड वहाँ काम नहीं आएगा। भगवा हों या सफेद हों, लेकिन जब तक इम्प्योर होगा, तब तक काम नहीं आएगा। आपका प्रभाव ही नहीं पड़ेगा न? शीलवान बनना चाहिए।

चार्ज-डिस्चार्ज की भेदरेखा

अपना यह विज्ञान ऐसा है कि काम कर दे! लेकिन यदि उसके प्रति सिन्सियर रहे और हमारे कहे अनुसार रहे तो विषय की निवृत्ति हो जाए, वर्ना विषय का स्वभाव ही ऐसा है कि यदि एक ही बार विषय भोग किया हो तो वह व्यक्ति तीन दिनों तक किसी भी प्रकार का ध्यान नहीं कर सकता! एक ही बार के विषय से तीन दिनों तक किसी भी प्रकार से ध्यान नहीं हो पाता, ध्यान हो ही नहीं पाता न! स्थिर ही नहीं हो पाता न! फिर इन्सान क्या करे? कितना करे? इसीलिए ये जैन आचार्य त्याग लेकर बैठे हैं न! यह वीतरागों का धर्म विलासियों का धर्म नहीं है! विषय हो तो समझ से छूट जाना चाहिए। विषय अच्छा कैसे लगता है? मुझे तो यही आश्चर्य होता है! विषय पसंद है, उसका मतलब यही है कि समझ ही नहीं है।

प्रश्नकर्ता : विषय-कषाय की जलन होती है न?

दादाश्री : जलन तो लाखों मन भारी हो सकती है। उससे मतलब नहीं है। जलन तो *पुद्गल* को होती है।

प्रश्नकर्ता : विषय-कषाय की जलन का वर्णन, मरण से भी ज़्यादा कहा गया है। यानी उसके बजाय मनुष्य मरना पसंद करेगा।

दादाश्री : नहीं। उसने तो मृत्यु की क़ीमत ही नहीं रखी। उसने तो अनंत जन्मों से यही किया है, पाशवता ही की है, अन्य कुछ भी नहीं किया। लेकिन मृत्यु तो बेहतर है। मृत्यु तो स्वाभाविक चीज़ है और यह तो विभाविक चीज़ है। समझदार को विषय शोभा नहीं देता। एक ओर लाख रुपये मिल रहे हों और उसके सामने विषय का संयोग हो तो लाख को जाने दे, लेकिन विषय का सेवन नहीं करे। विषय ही संसार का मूल कारण है, जगत् का कॉज़ यही है न? हमने तो यह विषय की छूट इसलिए दे रखी है कि नहीं तो इस मार्ग को कोई प्राप्त ही नहीं कर पाता। इसलिए हमने यह अक्रम विज्ञान डिस्चार्ज और चार्ज के रूप में समझाया है। यह विषय डिस्चार्ज है, ऐसा समझने की शक्ति नहीं है न सभी में? इनका सामर्थ्य क्या? वर्ना हमारा जो शब्द है न, 'डिस्चार्ज', यह विषय डिस्चार्ज स्वरूप ही है। लेकिन यह बात समझने का उतना सामर्थ्य ही नहीं है न? क्योंकि ये सब रात-दिन विषय की जलनवाले हैं। वर्ना यह चार्ज और डिस्चार्ज हमने जो रखा है वह एक्ज़ेक्टली वैसा ही है। यह तो बहुत ऊँचा मार्ग बताया है, वर्ना इनमें से कोई धर्म प्राप्त कर ही नहीं पाता न? ये बीवी-बच्चोंवाले धर्म कैसे प्राप्त कर पाते?

प्रश्नकर्ता : कई लोग ऐसा समझते हैं कि 'अक्रम' में ब्रह्मचर्य का कोई महत्व ही नहीं है। वह तो डिस्चार्ज ही है न!

दादाश्री : अक्रम का अर्थ ऐसा है ही नहीं। ऐसा अर्थ करनेवाला 'अक्रम मार्ग' को समझा ही नहीं है। यदि समझा होता तो मुझे उसे विषय के संबंध में फिर से कहना ही नहीं पड़ता। अक्रम मार्ग यानी क्या कि डिस्चार्ज को डिस्चार्ज माना जाता है। लेकिन इन लोगों के लिए डिस्चार्ज है ही नहीं। यह तो, अभी लालच है अंदर! ये सब तो राज़ी-खुशी से करते हैं। डिस्चार्ज को किसी ने समझा है? वर्ना हमने जो मार्ग दिया है, उसमें फिर ब्रह्मचर्य के संबंधित कुछ कहने को रहता ही नहीं! यह तो, खुद की भाषा में मनचाहा अर्थ करेंगे बाद में!

जो व्यक्ति खाना खा चुका हो, उसे यदि फिर से खाने के लिए बैठाएँ तो वह बहुत शर्माएगा, लेकिन फिर वह खाएगा ज़रूर। लेकिन वह क्या करेगा? क्या वह सचमुच खाएगा? इसी तरह से विषय में होना चाहिए। विषय-विकार तो देखना भी अच्छा नहीं लगे, सोचते ही कँपकँपी आ जाए, सोचते ही उल्टी होने लगे, ऐसा होना चाहिए।

'डिस्चार्ज' किस भाग को कहते हैं, इसे लोग समझते नहीं हैं और 'डिस्चार्ज' का अर्थ अपनी भाषा में करते हैं।

प्रश्नकर्ता : 'डिस्चार्ज' किस भाग को कहते हैं?

दादाश्री : चलती गाड़ी से कितनी बार गिर जाते हो? तुम चलती गाड़ी से गिर जाओ तो वह 'डिस्चार्ज' कहलाएगा। वहाँ तुम गुनहगार नहीं हो, लेकिन क्या कोई जान-बूझकर गिरता है क्या? वहाँ उसकी ज़रा सी भी इच्छा होती है? आपको यह बात समझ में आई? बात समझने योग्य है न?

प्रश्नकर्ता : बिल्कुल। पक्का समझ में आ गया।

दादाश्री : कान पकड़कर कह रहे हो क्या? वर्ना 'डिस्चार्ज' की बात में तो भीतर पोल मारता है। सिर्फ इस विषय के बारे में ही पोल नहीं मारनी है।

प्रश्नकर्ता : पोल कैसे मारते हैं?

दादाश्री : जैसे चलती गाड़ी से गिर जाए, उसे हम 'डिस्चार्ज' कहते हैं। उसी तरह खुद के घर में भी नियम तो होना चाहिए न? यह तो ऐसा है न, कि खुद के हक की स्त्री के साथ का विषय, वह अनुचित नहीं है। लेकिन फिर भी साथ-साथ इतना समझना चाहिए कि उसमें अनेकों 'जर्म्स' मर जाते हैं। अत: अकारण तो ऐसा होना ही नहीं चाहिए न? कारण हो तो बात अलग है। वीर्य में 'जर्म्स' ही होते हैं और वे मानवबीज के होते हैं। अत: जब तक हो सके, तब तक इसमें सावधान रहना। यह हम आपको संक्षेप में बता रहे हैं, बाकी इसका तो अंत ही नहीं है न!

जलन का मारा खोजे, विषय को

यह तो जिसे किसी भी प्रकार का आत्मिक सुख नहीं आए, उसे तो इस संसार में विषय के अलावा और क्या हो सकता है? क्योंकि इतनी जलन, जलन.... सत्युग में, द्वापर में भी ऐसे विकार नहीं थे। यह तो कलियुग की जलन के कारण बेचारे विषय में पड़ते हैं, क्या करें? और पूरा दिन जलते रहते हैं, 'ऐसे घाटा हुआ, उसने गालियाँ दी, उसने ऐसा किया।' ऐसी सब जलन होती हैं, किसी तरफ से सुख नहीं मिलता, इसलिए बेचारा मजबूरन इस गड्ढे में गिरता है।

अब यह आत्मा का सुख मिलने के बाद, यह विषय उसे पसंद ही कैसे आएगा? जब तक आत्मा का सुख नहीं आए, तब तक हम उसे ऐसा तो नहीं कह सकते कि, 'भाई, आप ऐसा क्यों कर रहे हो?' वे कहाँ जाएँगे बेचारे? यदि पशु होते तो वे नियम में होते, इन मनुष्यों में तो बुद्धि है, पशुओं को तो लाचारी है, उनके लिए यह 'डिस्चार्ज' है!

'चार्ज-डिस्चार्ज' का भेद समझना चाहिए या नहीं? यह तो भेद समझे बगैर कुछ भी कहते रहते हैं। यह ज्ञान यदि पूरी तरह से समझ जाए और यह 'डिस्चार्ज' पूरी तरह से समझ जाए तो मुझसे फिर से पूछने आए ही नहीं! 'डिस्चार्ज' जो है, वह चरित्र-मोहनीय है और चरित्र मोहनीय को जो देखता है, वह सम्यक् चरित्र है!

अहंकार की मान्यता का सुख

विषय के विरोध में तो मैं कितना बोलता रहता हूँ, फिर भी लोगों की समझ में नहीं आता तो फिर हम क्या करें? पंप लगा-लगाकर माल भरकर लाए हैं, ज़रा सा भी 'स्कोप' नहीं दिया, अवकाश ही नहीं दिया न? मानो यदि विषय नहीं होगा तो जी ही नहीं पाएगा, ऐसे मानकर आए हैं!

जो विषय को जीत ले, उस पर तीन लोक के नाथ राज़ी होते हैं। इसमें कुछ है ही नहीं, लेकिन लोगों ने ऐसी रोंग मान्यता बना दी है! बाकी

इसमें कोई सुख है ही नहीं। जलेबी में सुख है, पेड़े में सुख है, चिवड़े में सुख है, लेकिन इसमें सुख नहीं है। जलेबी में से बहुत सुगंध आती है, स्पर्श अच्छा लगता है, स्वाद भी आता है, आँखों से देखना भी अच्छा लगता है। खाते समय मुँह में कड़कड़ आवाज़ आती है, कानों से वह सुनना भी अच्छा लगता है। यह ताज़ी-ताज़ी जलेबी खाने में पाँचों इन्द्रियों को अच्छा लगता है। जबकि विषय में तो यदि सभी इन्द्रियों से काम लेने जाएँ तो वे पीछे हट जाएँगी। आँखों से देखने जाएँ तो घबराहट हो जाए। नाक से सूँघने जाए तो भी घबराहट हो जाए, जीभ से चखने जाए तो भी घबराहट हो जाए!

प्रश्नकर्ता : इसमें 'एक्चुअली' जो आनंद लेता है, वह अहंकार ही लेता है न?

दादाश्री : सुख माना है, इसलिए! उसमें रोंग बिलीफ है, सिर्फ! तुझे कभी दाद हुई है? दाद को खुजलाने जैसा है, यह! और फिर कोई बैठा हुआ हो तो मन में घबराता है कि खुजली करूँगा तो खराब दिखेगा। उस समय फिर तू नहीं करता और कोई नहीं होता तब तू खुजलाता है, उसमें मिठास आती है तुझे! कृपालुदेव ने विषय के सुख को दाद की खुजली जैसा सुख कहा है।

प्रश्नकर्ता : विषय सुख से दूर रहने के लिए जो प्रयत्न किए जाते हैं, उन्हें पुरुषार्थ कहते हैं?

दादाश्री : हाँ। लेकिन वह सुख है ही नहीं, वह केवल मान्यता ही है। 'रोंग बिलीफें' ही हैं। व्यवहार में लोगों से यह बात नहीं कह सकते, संसार व्यवहार के लिए यह काम का है ही नहीं। यह बात संसार व्यवहारवाले लोगों से कहें तो उन्हें दु:ख होगा। क्योंकि सिर्फ इसी एक सुख का अवलंबन है, वह भी उन बेचारों का हमने ले लिया! यह बात तो जिन्हें ज्ञान हो, उनसे की जा सकती है, वर्ना बात भी नहीं की जा सकती। हाँ, किसी के सुख के लिए नहीं, लेकिन यदि विषय संतान प्राप्ति के लिए हो तो बात अलग है। पुत्रेष्णा के शमन हेतु हो तो ठीक है। लेकिन यह

तो निरर्थक, 'यूज़लेस' होता है, जो कुत्ते-कुतिया को भी शोभा नहीं दे, ऐसा!

इस ज्ञान को जान लो

ज्ञान ऐसी चीज़ है, जिसे जान लेने की ज़रूरत है। ज्ञान को जान लेना। ज्ञान जानना है और वह जाना हुआ जब दर्शन में आता है, 'बिलीफ' में आता है, तब सभी विषय गायब हो जाते हैं।

यह तो हम विषय से संबंधित बहुत गहरी चर्चा नहीं करते, उसका कारण यह है कि ये लोग बाह्य दृष्टि छोड़ दें, तो भी बहुत बड़ी बात है। बाह्य दृष्टि यानी, बाहर जो 'देखतभूली' होती है, यदि वह नहीं हो, तो भी बहुत हो गया। इसलिए हमने कहा है कि बाहर दृष्टि बिगड़े तो तुरंत ही प्रतिक्रमण कर लेना। उसे खुद के हक का विषय छोड़ने को नहीं कहते। क्योंकि यदि उसे हक का विषय छोड़ने को कहेंगे, तो फिर बाहर उसका बिगड़ जाएगा।

अक्रम विज्ञान ने दी छूट....

प्रश्नकर्ता : लेकिन जो लोग विषय सुख भोगते हैं, उन्हें उतना नुकसान तो होगा न?

दादाश्री : जितना-जितना 'चार्ज' हुआ है, उसमें तो हमें एतराज़ नहीं है।

प्रश्नकर्ता : लेकिन वह 'चार्ज' हुआ है, ऐसा कह ही कैसे सकते हैं? वह तो घर में पत्नी के साथ रह रहे हों तो यह विषय तो साधारण हो चुका होता है और कई बार हो जाता है तो भी वह 'चार्ज' हुआ कहलाएगा?

दादाश्री : जो 'चार्ज' हो चुका है, उससे ज़्यादा नहीं हो पाएगा। जो 'चार्ज' हो चुका है, उससे ज़्यादा हो जाए, ऐसा नहीं हो सकता। इसीलिए तो हम विषयों के लिए ऐसे छूट देते हैं न! वर्ना क्या छूट देते? वह तो ज़िम्मेदारी है और किसी ने ऐसी छूट दी भी नहीं है न?

प्रश्नकर्ता : किसी ने भी छूट नहीं दी है। इसमें तो बहुत 'स्ट्रिक्ट' हैं।

दादाश्री : इसमें 'स्ट्रिक्ट' हैं, इसलिए लोग प्राप्ति नहीं कर पाते। सत्य हकीकत नहीं जानने की वजह से इसमें 'स्ट्रिक्ट' रहते हैं। इसलिए लोग प्राप्ति नहीं कर पाते। संसारी तो ऐसा ही कहते हैं कि, 'भाई, हम तो संसारी हैं, हमारा कल्याण तो हो ही नहीं सकेगा न?' खुद के बारे में ये लोग ऐसा मानकर बैठ गए हैं। अतः यह 'स्ट्रिक्ट' होना गलत है। 'हम' ज्ञान द्वारा अलग तरह का देखते हैं!

प्रश्नकर्ता : जितने समय तक 'डिस्चार्ज' होता है, तो उतना आवरण नहीं बढ़ता?

दादाश्री : अपने 'ज्ञान' वालों में आवरण नहीं बढ़ता, हमारी आज्ञा है न! हमने हक के विषय के लिए मना किया ही नहीं है न! मना किया होता तो इन सबके घर में क्या होता?

प्रश्नकर्ता : आपने यदि उस के लिए मना किया होता तो बहुत बड़ा तूफ़ान हो जाता!

दादाश्री : लेकिन हम ऐसा कहें ही नहीं। किसी को भी दुःख हो ऐसा वर्णन ही नहीं करते न!

प्रश्नकर्ता : अभी तक मैं इसी द्वंद्व में था। मुझे ऐसा लगता था कि विषय से आवरण आता है।

दादाश्री : लेकिन दुनिया ने जो देखा होगा, मैंने उससे कुछ नई ही तरह का देखा है। तभी मैं ऐसी आज्ञा दे सकता हूँ, वर्ना देता ही नहीं न! यह तो जोखिमदारी है! मैंने ऐसा विज्ञान देखा है, तभी मैंने आपको छूट दी है, वर्ना छूट नहीं दी जा सकती। मैंने आपको किस तरह की छूट दी है? हमने हक के विषय की छूट दी है, ताकि फिर बाहर दृष्टि नहीं बिगड़े। अगर बिगड़ गई हो तो सुधार लेना। लेकिन हक की जगह का एक ही स्थान तय हो गया, इसलिए फिर आपको 'अलाउ' करते हैं। लेकिन यह क्या सिर्फ आत्मसुख है या दूसरा कोई सुख है, इतना जानने

के लिए आपसे कहते हैं कि छः महीनों के लिए विषय छोड़कर तो देखो! सिर्फ पता लगाने के लिए कि यह सुख आत्मा में से आया या विषय में से आया?

प्रश्नकर्ता : इतना तो पता चलता है कि विषय की वजह से सच्चे सुख का पता नहीं चलता, फिर भी वह हो जाता है।

दादाश्री : हो जाए, उसमें हर्ज नहीं है। यह 'अक्रमविज्ञान' है, बहुत अलग तरह का विज्ञान है। वर्ना वहाँ क्रमिक में तो एक भी 'डिस्चार्ज' नहीं चलने देते। हमने तो पूरी ज़िंदगी के 'डिस्चार्ज' चला लिए हैं। यह तो 'अक्रमविज्ञान' है! विज्ञान यानी क्या, कि कोई उसकी बराबरी नहीं कर सके।

भगवान के ताबे में या स्त्री के?

तभी हमने कहा है न, कि भाई, पूरी दुनिया ने जिसके लिए ऐसा कहा है कि विषय, वह विष है। हम उसके लिए कहते हैं कि विषय, वह विष नहीं है। साधु समझते हैं कि हम पार उतर गए और ये संसारी डूब गए। अरे, कोई बाप भी पार नहीं उतरा है और तू डूबा भी नहीं है। तू क्यों घबराता है? पत्नी यदि डुबोती तो भगवान शादी ही नहीं करते न! पत्नी नहीं डुबोती, तेरी नासमझी डुबोती है। तुझे आराधना कैसे करनी चाहिए, निकाल कैसे करना चाहिए, वह तू नहीं जानता।

महावीर भगवान तीस साल तक पत्नी के साथ रहे थे और बेटी भी हुई थी और आखिर महावीर भगवान को भी अलग होना पड़ा था। आखिरी बयालीस साल स्त्री के बगैर ऐसे ही रहे थे। आपके तो आखिरी पंद्रह साल स्त्री के बिना गुज़रें, मन-वचन-काया से यह छूट जाए तो भी बहुत हो गया, ऐसा कहते हैं। वर्ना अंतिम दस साल निकले तो भी बहुत हो गया। और कुछ नहीं, तो अंत में ऐसा ब्रह्मचर्य होना चाहिए। अब वह उदय कब आएगा? जब इससे संबंधित ज्ञान सुनोगे तब उदय आएगा। सुने बगैर ज्ञान कभी भी दर्शन में नहीं आता और जब तक दर्शन में नहीं आए, तब तक 'रोंग बिलीफ' नहीं टूटती।

ब्रह्मचर्य तो बहुत उत्तम चीज़ है, लेकिन यदि वह उदय में आ जाए

तो उसके जैसा और कोई पद है ही नहीं! ये 'फाइलें' तो परवशता लाती हैं। क्योंकि दोनों के द्रव्य-क्षेत्र-काल और भाव अलग ही होते हैं न? एक पति मुझसे कह रहा था कि, 'मेरी बीवी मुझसे ऐसा कह रही थी कि आप मुझे पसंद नहीं हैं। आप मुझे छूना नहीं।' इसका क्या करें? यह गाड़ी किस गाँव पहुँचेगी अब? उसकी तुलना में इन ब्रह्मचारियों को कोई परेशानी ही नहीं है न! उनका किसी से क़रार ही नहीं है न और वे कहते हैं कि हमें क़रार करना भी नहीं है। और जिन्होंने क़रार किए हैं, उनसे कहता हूँ कि पूरा करो।

प्रश्नकर्ता : जो ऐसा कहते हैं कि 'क़रार नहीं करने हैं', वे रोक नहीं रहे हैं?

दादाश्री : जान-बूझकर कोई गड्ढे में गिरता है? खुला गड्ढा दिखाई दे, फिर उसमें कौन गिरेगा? अब हमें ऐसी गरमी नहीं लगती। गरमी लगे तो ठंडक खोजने कीचड़ के गड्ढे में गिर। इन ब्रह्मचारियों की 'फाइलें' नहीं है, इसलिए यथार्थ सुख बर्तता है! 'फाइल' तो हमें कहेगी कि, 'अब इस समय आप मित्र के यहाँ मत जाना।' तो वहाँ आपका क्या हाल होगा? अरे! भगवान के ताबे की बजाय तेरे ताबे में रहने का वक्त आ गया मेरा?

प्रश्नकर्ता : क़रार किए हैं।

दादाश्री : हाँ, क़रार किए हैं। यानी उसमें कोई हर्ज नहीं है। दृष्टि मत बिगाड़ना। बाहर देखने में बहुत जोखिमदारी है। वह हरहाया पशु कहलाता है। मैं तो कहता हूँ कि 'हरहाया पशु बनने के बजाय शादी कर ले। मेरे सामने शादी कर, मैं तुझे अशीर्वाद दूँगा!' क्या मैं गलत कह रहा हूँ? ऐसी छूट किसी ने दी है? इतनी छूट दी है? और इसके बिना इन्सान बेचारा मोक्षमार्ग पर कैसे जा पाएगा? जो इस रोग से ग्रस्त है, वह कैसे जा पाएगा? यह तो विज्ञान है, इसलिए 'सेफसाइड' कर देता है!

अक्रम विज्ञान क्या कहता है?

पुद्गल का ज़ोर कम हो, ऐसे संयोग हैं ही कहाँ अभी? जब

ज्ञानीपुरुष यह ज्ञान देते हैं, आत्मा में लक्ष्य बिठा देते हैं, तब *पुद्गल* का ज़ोर एकदम कम कर देते हैं। लक्ष्य बिठा देते हैं। उसके बाद वापस *पुद्गल* का ज़ोर बढ़ता है। लेकिन एकबार लक्ष्य बैठ गया तो फिर वह छूटता नहीं है और लक्ष्य बैठने के बाद *पुद्गल* तेज़ी से खत्म हो जाता है। पहले तो रोज़ *पुद्गल* की कमाई थी और रोज़ का खर्च था। अब वह कमाई बंद हो गई और सिर्फ खर्च ही रहा। इसलिए अब *पुद्गल* का ज़ोर बहुत मंद हो जाएगा।

अब इस 'ज्ञान' के बाद कोई भी *पुद्गल* बाधक नहीं है। यदि देखने जाएँ तो इसमें कोई क्रिया बाधक नहीं है। लेकिन कुछ-कुछ क्रियाएँ बहुत 'फोर्स' वाली हैं, इसलिए बाधक होती हैं। उसमें सबसे ज़्यादा 'फोर्स' वाला कुछ हो तो वह चरित्र है। दुश्चरित्र तो फिर उससे भी ज़्यादा 'फोर्स' वाला है और सुचरित्र कम 'फोर्स' वाला है। लेकिन 'फोर्स' वाले तो दोनों ही हैं। अन्य कुछ भी, यह खाने-पीने का, आपको जो खाना हो, खाना। वह बाधक नहीं है। बाल जैसे कटवाने हों, वैसे कटवाना, तेल डालना हो तो डालना, सेन्ट लगाना हो तो लगाना, सिनेमा देखने जाना। उसमें मुझे कोई एतराज़ नहीं है। वह *पुद्गल* ज़्यादा नुकसानदेह नहीं है। वह 'फोर्स' वाला नहीं है, लेकिन दुश्चरित्र तो बहुत ही फोर्सवाला है। सुचरित्र भी फोर्सवाला है, लेकिन उस सुचरित्र का भी धीरे-धीरे निकाल तो करना ही पड़ेगा न? निकाल किसे कहते हैं कि काम ऊपर से आ पड़े। यों बाज़ार में ढूँढने नहीं जाना पड़े, उसे निकाल कहते हैं। बच ही नहीं सकें, ऐसा होता है। जिसमें अपनी इच्छा ही नहीं हो, उसे आ पड़ा काम कहते हैं।

यानी आत्मा जुदा ही है, लेकिन 'जुदा है', ऐसा अनुभव में क्यों नहीं आता? *पुद्गल* का फोर्स ज़बरदस्त है, इतना अधिक फोर्स है कि उसके कारण आत्मा हाथ में आ ही नहीं पाता। लोग यह भी नहीं जानते कि आत्मा कैसा है। वह तो जब ज्ञानीपुरुष आत्मज्ञान देते हैं तब, आत्मा ऐसा है और ऐसा नहीं है, ऐसे दो विभाजन कर देते हैं, तब लक्ष्य बैठता है, वर्ना आत्मा का लक्ष्य ही नहीं बैठ सकता न!

प्रश्नकर्ता : सुचरित्र और दुश्चरित्र की ठीक से परिभाषा बताइए न?

दादाश्री : सुचरित्र यानी खुद के हक का भोगना। हक का चरित्र भोगना। और कुचरित्र यानी *अणहक्क* का भोगना। *अणहक्क* का तो मुंबई में इस्तेमाल ही नहीं होता न?

प्रश्नकर्ता : बगैर *अणहक्क* वाला तो कोई रास्ता ही नहीं दिखाई देता

दादाश्री : काफी कुछ माल ऐसा ही भरा हुआ है। कोई आदमी खुद होटल में जाकर माँसाहार करे और दूसरे एक आदमी को पुलिसवाला पकड़कर ले जाए और उसे मारपीटकर कहे कि माँसाहार करना ही पड़ेगा तब फिर उसे खाना पड़े तो इन दोनों में थोड़ा-बहुत अंतर है न? इस पर भगवान ने कहा कि जैसे पुलिसवाले द्वारा पकड़ा गया हो, उस प्रकार से विषय का आराधन करेगा तो हमें उसमें एतराज़ नहीं है। चरित्र वही का वही, लेकिन पुलिसवाले द्वारा पकड़ा गया हो, ऐसा हो तो भगवान उसमें बिल्कुल भी एतराज़ नहीं करते।

विषय, दूर कराए आत्मानुभव

मैंने आपको आत्मा तो दिया है, लेकिन कौन सी चीज़ आप पर उसका असर नहीं होने देती? विषय! यह विषय कहीं रोज़-रोज़ नहीं होता। कभी-कभी होता है। लेकिन उसके बाद उसका असर बहुत परेशान करता है और विषय का अभिप्राय बहुत मार खिलाता है। ब्रह्मचर्य का भंग हुआ, इसलिए जंतु का असर हुआ न? यदि ऐसा भंग हो ही नहीं, तब तो कितना अच्छा रहे? इन जंतुओं का सूक्ष्म असर इतना अधिक खराब पड़ता है कि घड़ीभर भी चैन से नहीं बैठने देता।

प्रश्नकर्ता : शुद्धात्मा पद में रहने के लिए मुख्य चीज़ कौन सी चाहिए?

दादाश्री : यदि विषय में से मुक्त हो जाए तो फिर शुद्धात्मा में रह पाएगा। शादीशुदा हो तो उसमें हमें एतराज़ नहीं है, लेकिन हरहाया में एतराज़ है। पत्नी के साथ पाँच महाव्रतों में से, एक महाव्रत का, ब्रह्मचर्य का भंग होता है और इस कलियुग में तो एक-दूसरे में ऐसे जंतु होते हैं

कि फिर दोनों को चैन से बैठने ही नहीं देते। क्योंकि इन बाहर भटकनेवालों को 'जर्म्स' बहुत ही नुकसान करते हैं। जिसका खुद को पता नहीं चलता। इसलिए मैं कहता हूँ न कि एक से शादी कर। क्योंकि यह तेरी नेसेसरी चीज़ है। खुद ने पूर्वजन्म में ब्रह्मचर्य के भाव नहीं किए होते इसलिए शादी करनी पड़ती है।

खुद की स्त्री के साथ के विषय में भी नियम होना चाहिए। कृपालुदेव ने कहा है कि महीने में दो दिन, पाँच दिन या सात दिन के लिए तू ज्ञानीपुरुष की उपस्थिति में तय कर, तब फिर वे ज्ञानीपुरुष यह ज़िम्मेदारी खुद के सिर ले लेते हैं। और फिर हम विधि कर देते हैं। हमारी आज्ञा हो जाए तो हर्ज नहीं है। हमारी आज्ञानुसार हो, उसे कोई बाधा नहीं आएगी।

प्रश्नकर्ता : इस ज्ञान के बगैर वह लक्ष्य बैठना बहुत मुश्किल है।

दादाश्री : इस ज्ञान के बगैर फिट ही नहीं होगा न? फिर भी ये साधु हैं, उन्हें फिट हो जाता है। उसका क्या कारण है? पिछले जन्मों में उन्होंने ऐसी भावना की होती है कि 'विषय नहीं भोगना है,' आज उसका फल आया है। और उन्हें वह मिलता भी नहीं है। उन्हें वह अच्छा भी नहीं लगता।

[५]

संसारवृक्ष की जड़, विषय

कॉमनसेन्स से टलें टकराव

अनंत जन्मों से शादी करता आया है, फिर भी क्या स्त्री का मोह चला जाता है? हर जन्म में बच्चे पैदा किए, फिर भी बच्चों का मोह चला जाता है? अरे, किस जन्म में बच्चे नहीं हुए?

प्रश्नकर्ता : ये जो टकराव और कषाय होते हैं, उनकी जड़ विषय ही है न?

दादाश्री : हाँ, सबकुछ विषय के कारण ही है। वह विषय में एक्सपर्ट हो जाता है। विषय में 'टेस्टफुल' हो जाता है, इसलिए अंदर स्वार्थ रहता है और स्वार्थ के कारण टकराव होते हैं। जहाँ स्वार्थमय परिणाम होते हैं, वहाँ कभी कुछ भी दिखाई नहीं देता। स्वार्थी हमेशा अंधा होता है। स्वार्थी, लोभी और लालची, सभी अंधे होते हैं। इस दुनिया का पूरा आधार पाँच विषयों पर ही है। जिन में विषय नहीं है, उन में टकराव नहीं होते।

प्रश्नकर्ता : खुद में विषय नहीं है, लेकिन उसके कारण क्या किसी और को टकराव हो सकता है?

दादाश्री : किसी को क्यों होगा? हाँ, किसी को यदि होता है, तो वह उसकी भूल है। जो न्यायपूर्वक होगा, उसे दु:ख नहीं होगा, लेकिन फिर अपने आप मानकर दु:ख मोल लेता है, उसका क्या हो सकता है? हो सके तब तक उसे समझौता करना आए तो अच्छा होगा।

प्रश्नकर्ता : साथ में ज्ञान हो तो तुरंत 'ब्रेक' लगाया जा सकता है?

दादाश्री : कुछ भी कहा नहीं जा सकता, वापस फिसल भी सकता है। ज्ञानवाले भी स्लिप हो जाते हैं। यदि कोई कॉमनसेन्सवाला हो, कॉमनसेन्स यानी क्या कि एवरीव्हेर एप्लिकेबल, ऐसा कोई हो तो वह मार्ग निकाल लेगा। सभी ताले खोलकर मार्ग निकाल लेगा। टकराव में से रास्ता निकाल लेगा, लेकिन वह एक्सपर्ट नहीं होता।

प्रश्नकर्ता : उसे, कॉमनसेन्सवाले को जलन रहती है?

दादाश्री : नहीं, यदि जलन रहेगी तो कॉमनसेन्स उत्पन्न होगा ही नहीं। जलन विषयवालों को होती है। जब तक जलन है, तब तक विषय रहेगा और जब तक विषय है, तब तक जलन रहेगी।

फर्क, विषय और कषाय में

प्रश्नकर्ता : विषय और कषाय, इन दोनों मे मूलभूत फर्क क्या है?

दादाश्री : कषाय अगले जन्म का कारण है और विषय पिछले जन्म का परिणाम है। इन दोनों में बहुत फर्क है।

प्रश्नकर्ता : इसे ज़रा विस्तार से समझाइए।

दादाश्री : ये जितने भी विषय हैं, वे पिछले जन्म के परिणाम हैं। इसलिए हम डाँटते नहीं हैं कि आपको मोक्ष चाहिए तो जाओ, अकेले पड़े रहो। आपको घर से बाहर नहीं हाँक देते। लेकिन हमने हमारे ज्ञान से देखा है कि विषय पिछले जन्म का परिणाम है। इसलिए कहा है कि जाओ, घर जाकर सो जाओ, आराम से फाइलों का निकाल करो। हम अगले जन्म का कारण तोड़ देते हैं और जो पिछले जन्म का परिणाम है, उसका छेदन हम से नहीं हो सकता। किसी से भी छेदन नहीं हो सकता। महावीर भगवान से भी छेदन नहीं हो सकेगा। क्योंकि भगवान को भी तीस साल तक संसार में रहना पड़ा था और बेटी हुई थी। विषय और कषाय का सही मतलब ऐसा होता है, लेकिन इस बारे में लोगों को कुछ पता ही नहीं चलता न? वह तो सिर्फ भगवान महावीर ही जानते थे कि इसका अर्थ क्या होता हैं।

प्रश्नकर्ता : लेकिन विषय आए, तभी कषाय उत्पन्न होते हैं न?

दादाश्री : नहीं। सभी विषय, विषय ही हैं, लेकिन जब विषय में अज्ञानता होती है, तब कषाय खड़े होते हैं और ज्ञान हो तो कषाय नहीं होते। कषाय कहाँ से जन्मे? तब कहे, विषय में से। अत: ये जितने भी कषाय खड़े हुए हैं, वे सब विषय में से खड़े हुए हैं। लेकिन इसमें विषय का दोष नहीं है, अज्ञानता का दोष है। रूट कॉज़ क्या है? अज्ञानता। क्रमिक मार्ग में पहले विषय बंद करने पड़ते हैं, तभी कषाय बंद होते हैं। इसीलिए तो सभी विषयों का त्याग कर-करके ढक्कन लगाना पड़ता है न! वे भी ऐसे पेचवाले ढक्कन कि जो अपने आप खुल न जाएँ। ऐसे ढक्कन नहीं होंगे तो ढक्कन ढीले पड़ जाएँगे। भोजन में सबकुछ एक साथ मिलाकर खाते हैं ताकि जीभ का विषय नहीं चिपके। उसी प्रकार आँख का विषय नहीं चिपके, कान का विषय नहीं चिपके, नाक का विषय नहीं चिपके, स्पर्श का विषय नहीं चिपके, ऐसे पेचवाले ढक्कन लगाने पड़ते हैं।

दोष है अज्ञानता का

प्रश्नकर्ता : जो-जो विषय चिपकें और उन विषयों में साथ में ज्ञान भी रहे कि इसका परिणाम यह आएगा, तो उसे नहीं चिपकेगा न?

दादाश्री : 'ऐसा परिणाम आएगा' वह नहीं देखना है। वह तो सब चिपकेगा ही। विषय के आराधन का मतलब ही है चिपकना। अज्ञानता से वह चिपक जाता है। यह हमारा साइन्स एक नई ही खोज है, अद्‌भुत खोज है! क्रमिक मार्ग में पाँचों इन्द्रियों को ढक्कन लगाते-लगाते करोड़ों जन्म बीत जाते हैं। अरे, एक ढक्कन लगाने में ही करोड़ों जन्म बीत जाते हैं न!

आप यदि समकित में रहो तो आपको विषय बाधक नहीं होगा। क्योंकि विषय, पिछले जन्म का परिणाम है, इस जन्म का नहीं है वह। समकित में रहना और कषाय, वे दोनों एक साथ नहीं हो सकते। कषाय तो परभव का कारण है। इस तरह यदि कषाय और विषय को जुदा किया होता तो लोग विषय से इतने भयभीत नहीं होते, लेकिन वे तो कहेंगे कि ऐसा तो हो ही नहीं सकता न! विषय तो होना ही नहीं चाहिए न?

यदि दोष विषय का होता तो इन सभी जानवरों में भी कषाय खड़े हो जाते। अत: दोष अज्ञानता का है। इन जानवरों की अज्ञानता गई नहीं है। उनमें अज्ञानता है लेकिन उनके विषय लिमिटेड हैं। इसलिए कषाय होते ही नहीं, कषाय बढ़ते ही नहीं। जबकि लोगों के कषाय तो अन्‌लिमिटेड होते हैं।

क्रमिक में विचारों द्वारा प्रगति

प्रश्नकर्ता : एकावतार में कर्म खपा देने हों तो वे कैसे खप सकते हैं?

दादाश्री : ज्ञानीपुरुष तो कुछ भी कर सकते हैं, अक्रम विज्ञानी जो चाहें सो करें! क्रमिक के ज्ञानी नहीं खपा सकते। वे तो खुद का भी नहीं खपा सकते और सामनेवाले का भी नहीं खपा सकते। खुद का तो सिर्फ कितना खपा सकते हैं? कि विचारों द्वारा जितने कर्म खपाए जा सकते हैं, उतने कर्म खपा देते हैं। क्योंकि उनके विचार ज्ञानान्‌क्षेपकवंत होते हैं। यानी लगभग उसके जैसा, संपूर्ण नहीं, लेकिन विचारधारा निरंतर चलती रहती है। लेकिन वह आत्मा नहीं है। आत्मा तो, विचारधारा से आगे का निर्विचार पद है और निर्विचारपद से भी आगे का स्टेशन आत्मा है। विचारधारा, वह आत्मा नहीं है, लेकिन 'क्रमिक मार्ग' में आत्मा प्राप्त करने का वही एक साधन है, अन्य कोई साधन नहीं है।

प्रश्नकर्ता : '*कर विचार तो पाम*' ऐसा कहते हैं न!

दादाश्री : हाँ, उतना ही साधन है।

हम कहते हैं कि 'ये लोग संसार में स्त्री के साथ रहते हैं, फिर भी इनके आर्तध्यान और रौद्रध्यान बंद हो गए हैं।' ऐसी बात क्रमिक मार्गवाले कैसे 'एक्सेप्ट' करेंगे?

प्रश्नकर्ता : ऐसा क्यों?

दादाश्री : उनकी जानकारी ऐसी हो गई है कि विषय में से ही कषाय उत्पन्न होते हैं, इसलिए विषय बंद हो जाने चाहिए। वे लोग तो

देखते हैं कि यदि विषय बंद हो गए हैं, तो इनकी बात सही है और यदि विषय बंद नहीं हुए हैं तो, 'रहने दो। आप की बात गप्प है।' ऐसा कहेंगे।

आप संसार में रह रहे हों और आप ऐसा कहो कि आपके आर्तध्यान और रौद्रध्यान बंद हो चुके हैं तो उनके मन में होगा कि, 'यह ज़रा ज़्यादा ही अक्लमंद है। आर्तध्यान-रौद्रध्यान बंद हो जाएँ, ऐसा तो हो ही नहीं सकता न! यह तो नासमझी की बात कर रहा है।' लेकिन वह यह नहीं जानता कि यह कौन सा विज्ञान है! वर्ल्ड का आश्चर्य है! ग्यारहवाँ आश्चर्य है! जो मुझसे मिला, उसका कल्याण हो जाएगा, लेकिन मिलना चाहिए।

किस अपेक्षा से विषय बंधन स्वरूप?

प्रश्नकर्ता : कामवासना को नो-कषाय में क्यों रखा गया है?

दादाश्री : तो उसे किस में रखें फिर? कषाय में रखे तो रखनेवाला मार खाएगा, शास्त्र गलत साबित होंगे। उसमें क्रोध-मान-माया-लोभ नहीं है, लेकिन वे ज्ञानी में नहीं है, जबकि अज्ञानी में हैं। इसलिए उसे नो-कषाय में रखा है। वह कषाय नहीं है। तू टेढ़ा है तो यह टेढ़ा होगा, तू सीधा हो जाएगा तो यह सीधा ही है।

प्रश्नकर्ता : फिर भी ब्रह्मचर्य को महाव्रत में रखा गया है और विषय को नो-कषाय में रखा है, ऐसा क्यों?

दादाश्री : ब्रह्मचर्य को तो महाव्रत में रखना पड़ता है और विषय को नो-कषाय में रखना पड़ता है। क्योंकि इसमें क्रोध-मान-माया-लोभ नहीं हैं। लेकिन यदि क्रोधी या मानी हो, तो उस पर वैसा ही असर होगा।

प्रश्नकर्ता : लेकिन कामवासना, वह राग तो है न?

दादाश्री : हाँ, लेकिन उसे ज्ञानी की स्थिति में चारित्रमोह कहा जाता है। और संसार के लोगों के लिए तो यह सब राग ही है न! इसलिए भगवान ने कैसा मानने को कहा है? संसारी के लिए ऐसा मान सकते हैं और ज्ञानी के लिए ऐसा मान सकते हैं।

प्रश्नकर्ता : तो क्या उसे ऐसा कहेंगे कि यह कषाय नहीं है?

दादाश्री : नो-कषाय यानी नहीं के बराबर कषाय अर्थात् नहींवत्। क्योंकि मनुष्य को उसमें मजबूरन पड़ना पड़ता है। जैसे चलती गाड़ी से कोई गिर जाता है, ऐसे करना पड़ता है। चलती गाड़ी से जान-बूझकर कोई गिरता होगा?

भय है न, उसे भी नो-कषाय कहा है, क्योंकि भय लगने से शरीर काँप उठता है। लेकिन वह संगीचेतना का भय है, आत्मा का भय नहीं है। उसी प्रकार विषय भी संगीचेतना का है। ज्ञानियों के लिए वह सब अलग तरह का है, वह *निर्जरा* (आत्म प्रदेश में से कर्मों का अलग होना) का कारण है। अज्ञानी के लिए विषय, बंध का कारण है और ज्ञानी के लिए विषय, *निर्जरा* का कारण है। इसलिए उसे नो-कषाय में रखना होगा।

प्रश्नकर्ता : यह बात तो ज्ञानी के लिए ही है न? ज्ञानी के अलावा अन्य किसी के लिए नहीं है न?

दादाश्री : ज्ञानी कौन? जिन्हें यह ज्ञान प्राप्त हुआ है, वे भी ज्ञानी कहलाते हैं और उनके अलावा अन्य किसी को तो नो-कषाय जैसा होता ही नहीं है। उनमें तो पच्चीसों प्रकार के कषाय हैं, वहाँ तो पूरी दुकान ही बड़ी है न! इस ज्ञान के बाद आपमें तो क्रोध-मान-माया-लोभ नहीं रहे, ऐसा कहना हो तो कह सकते हैं।

विषय को कहा, नो-कषाय

वास्तव में देखा जाए तो इन्सान को विषय की ज़रूरत है ही नहीं। सब लोग जो कहते हैं, वह तो अज्ञानी की अपेक्षा(के नज़रिये) से हैं। बाकी ज्ञान की अपेक्षा(के नज़रिये) से मनुष्य को विषय की ज़रूरत है ही नहीं। और अज्ञान की अपेक्षा से विषय के बिना चले ऐसा नहीं है। लेकिन जब तक वह उसे सही तरीके से सेट करना नहीं आएगा, तो तब तक सब कच्चा पड़ जाएगा। ज्ञानी की चरित्र मोहनीय ऐसी होती है इसलिए, वर्ना ज्ञानी को तो विषय की ज़रूरत ही नहीं है। नौ प्रकार के नो-कषाय बताए गए हैं मतलब नहीं के बराबर और अन्य सोलह कषाय, वे तो बहुत 'स्ट्रोंग' कहे जाते हैं।

प्रश्नकर्ता : हास्य को भी नो-कषाय कहा गया है। हास्य तो आता है, लेकिन कभी न कभी अंत में तो उसे निकालना ही पड़ेगा न?

दादाश्री : किसी को भी नहीं निकालना है, अपने आप *निर्जरा* हो जाएगी। 'यह' ज्ञान प्राप्त होने के बाद, अब आप कर्ता नहीं हो, इसलिए निकालने का रहा ही नहीं न? कर्ता होता तो निकालना होता। अपने यहाँ तो अपने आप *निर्जरा* होती ही रहती है। हास्य, विषय, सभी की *निर्जरा* होती रहती है और शायद थोड़ी-बहुत चारित्र मोहनीय बची होगी तो वह अगले एक जन्म में खाली हो जाएगी।

कोई विषय का दुरुपयोग नहीं करे इसलिए शास्त्रकारों ने कहा है कि जो विषय अज्ञानी के लिए बंध का कारण है, वही विषय ज्ञानी के लिए *निर्जरा* का कारण है। लेकिन यदि उसका उल्टा अर्थ नहीं निकाले तो! फिर यदि ऐसा समझ ले कि, 'चलो, यह तो हम पर मुहर लगा दी, इसलिए अब इसमें हर्ज नहीं है।' तो वैसा नहीं चलेगा। इसका दुरुपयोग नहीं कर सकते। इसलिए यह बात ज़ाहिर नहीं कर सकते न? ऐसा ज़ाहिर नहीं करना चाहिए लेकिन फिर भी बात निकली, तो ज़ाहिर हो जाता है न?

जो शरीर से रिसते हैं न, वे सभी नो-कषाय हैं। शरीर से रिसता है, मन से रिसता है, वाणी से रिसता है, वे तीनों वास्तव में तो नो-कषाय ही हैं। और यह शरीर तो पूरा ही नो-कषाय है, नो-कर्म ही कहा जाएगा इसे!

बड़ा दोष, विषय की तुलना में कषाय का

प्रश्नकर्ता : विषय दोष ही बड़ा दोष माना जा सकता है या नहीं?

दादाश्री : यदि आप इस समय 'चंदूलाल' हो, तो दोष माना जाएगा और 'शुद्धात्मा' हो तो मत मानना। फिर कहाँ तक बैठे रहेंगे उसके पास? हम अपना काम करेंगे या फिर दोष को सिलते रहेंगे? दोषित दोष करता रहेगा और आप अपना काम करते रहना। जैसे खानेवाला खाता है और दोषित दोष करता रहता है।

प्रश्नकर्ता : लेकिन कौन सा दोष बड़ा हैं, वह 'चंदूलाल' को समझना तो पड़ेगा न?

दादाश्री : हाँ, 'चंदूलाल' को समझना पड़ेगा, 'चंदूलाल' से कहना कि, 'समझो, ऐसा नहीं चलेगा। हाँ, वर्ना दादाजी को बता दूँगा।' ऐसा कहना।

प्रश्नकर्ता : और यह बात सही है या नहीं कि विषय दोष, कषाय से भी बड़े होते हैं?

दादाश्री : नहीं, विषय दोष होते हैं, लेकिन विषय ऐसी चीज़ है कि विषय, वह इफेक्टिव है। कषाय, वे कॉज़ेज़ हैं। यानी इफेक्ट तो उसका सारा इफेक्ट देकर चला जाएगा। ये जितने विषय हैं न, वे मात्र इफेक्टिव हैं और कषाय कॉज़ है। इसलिए कषाय ही दुःखदायी हैं और कषाय से ही संसार खड़ा है। लेकिन यह समझने की ज़रूरत है कि वह किस तरह से इफेक्टिव हैं। अतः उसे बहुत महत्व मत देना। उसके लिए चंदूभाई से कहना, 'ऐसा नहीं हो तो अच्छा!' ऐसा कहना कभी दो-तीन दिनों में एकबार, कहने के लिए ही थोड़ा कहना, वह भी फ्रेन्डली टोन में!

प्रश्नकर्ता : ज़्यादा कहने की ज़रूरत ही नहीं पड़ेगी?

दादाश्री : बिना वज़ह क्यों बेचारे को। अपने साथ रहते हैं, पड़ोस में। अब उसका कोई आधार भी नहीं रहा। जो आधार था, वह भी निराधार हो गया, बेसहारा हो गए। अतः यदि कभी चिढ़ जाए और डिप्रेस हो जाए तो आईने के सामने ले जाकर कँधा थपथपाना और कहना कि, 'हम हैं तेरे साथ, घबराना मत, भाई।' फिर कहना, लेकिन फ्रेन्डली टोन में कहना कि, 'ऐसा किसलिए? अब किसलिए? क्या फायदा है? और दादाजी जानेंगे तो अच्छा लगेगा?' ऐसा कहना।

प्रश्नकर्ता : लेकिन यदि वे गाँठें जल्दी नहीं जाएँ तो कभी कुछ करना नहीं पड़ेगा?

दादाश्री : उस झंझट में मत पड़ना, राग-द्वेष नहीं हों, वही देखना, बस। और विषय यानी क्या? थाली भी विषय है। खाना आया, क्या वह विषय नहीं है? अब आपने कल पूरा दिन उपवास किया हो और अब भूख लगी हो और आपको भोजन परोसा। अब ग्यारह बजे खाना परोसा, मज़ेदार आम आदि सब परोसा हो और तुरंत ही थाली उठाकर ले जाएँ। अब खाना खाया तक नहीं, उससे पहले तो थाली उठाकर ले जाते हैं। अब उस समय अंदर परिणाम नहीं बदलें, तो समझना कि अब इसमें हर्ज नहीं है। और विषय में तो इस हद तक परेशानी है कि विषय की याचकता नहीं होनी चाहिए। लाचारी या याचकता नहीं होनी चाहिए। आप शुद्धात्मा हो गए हैं, अब! याचकता शब्द समझ में आता है न?

प्रश्नकर्ता : हाँ।

दादाश्री : 'यह आपको बाउन्ड्री बता रहा हूँ।' किसी भी चीज़ की याचकता यानी क्या कि जलेबी नहीं मिलेगी तो, 'जलेबी लाओ न! थोड़ी जलेबी लाओ' कहता है! छोड़ न भाई! अनंत जन्मों से जलेबियाँ खाई हैं, फिर भी अभी तक याचकता रखते हो? जिसकी लालसा होती है न, उसकी याचकता होती है मनुष्य को! ऐसी याचकता नहीं होनी चाहिए। अन्य सबकुछ खाना-पीना सब करना, लेकिन याचकता नहीं होनी चाहिए। याचकता, वह लाचारी है एक तरह की!

विषय, वह है इफेक्ट

प्रश्नकर्ता : यह ज़रा विस्तार से समझाइए कि ये सारे विषय इफेक्ट हैं।

दादाश्री : विषय, वे इफेक्ट ही हैं। हमेशा वे इफेक्ट ही हैं। लेकिन जब तक कॉज़ेज़ समझ में नहीं आते, तब तक विषय भी कॉज़ेज़ स्वरूप ही हैं। ऐसा है न, यह बात बाहर ज़ाहिर में नहीं कह सकते कि विषय कॉज़ेज़ नहीं हैं, सिर्फ इफेक्ट ही हैं। जो कॉज़ेज़ को कॉज़ेज़ समझते हैं, उनके लिए विषय इफेक्ट है।

प्रश्नकर्ता : दादा, आप से 'ज्ञान' मिलने के बाद हमें यह समझकर रखना होगा।

दादाश्री : हाँ, रखना है कि यह इफेक्ट ही है।

प्रश्नकर्ता : ऐसे सभी स्पष्टीकरण मिलें इसीलिए यहाँ आकर बैठते हैं और पूछते हैं।

दादाश्री : इसीलिए यहाँ आकर बैठना और स्पष्ट रूप से देख लेना। सारी बातें, ऐसा बताते हैं न! कोई कानों में इत्र के दो फाहे डालकर आए और लोग मुझसे कहें कि, 'देखिए, यह कितने मौज-मज़े करता है?' तब मैं कहूँगा कि, 'भाई, करने दो न, वे मोक्ष में बाधक नहीं हैं। उसके फाहे यदि कोई निकाल ले और उसके प्रति उसे द्वेष हो जाए तो वह द्वेष मोक्ष में जाने में बाधक है।'

है कुदरती, लेकिन लिमिट में होना चाहिए

प्रश्नकर्ता : यह विषय तो कुदरती अवस्था है न।

दादाश्री : लेकिन उसमें हम ऐसा कर सकते हैं कि कुदरती अवस्था में भी उसकी एक प्रकार की कोई लिमिट होती है! इसलिए हम यदि चाहें तो उतना पुरुषार्थ कर सकते हैं। आत्मा, वह पुरुष हुआ और पुरुषार्थ करे तो परिवर्तन ला सकता है, वह हल निकाल सकता है! खाने बैठे इसका मतलब क्या यह है कि खाते ही रहो?

प्रश्नकर्ता : नहीं, बिल्कुल भी नहीं।

दादाश्री : आप साथ में रहते हो, लेकिन आप कहना कि, 'चंदूभाई क्या-क्या लेंगे?' तब वह कहे, 'सब्ज़ी, रोटी और थोड़ा सा चावल!' इस पर आप कहें, 'नहीं, आज ये तीन ही लो न! आज दादाजी के पास सत्संग में जाना है न?' ऐसा करके, समझा-बुझाकर काम लेना। वे फिर वैसे ही लेंगे, उन्हें ऐसा कुछ नहीं है! उन्हें तो कहनेवाला चाहिए। सलाह देनेवाला चाहिए। और आपको हर्ज भी क्या है? कौन सा नुकसान है? कब नहीं

खाया होगा? जब से दुनिया में आए तभी से खा ही रहे हो न! और यह क्या नया शुरू किया है कुछ?!

अब से सावधान

प्रश्नकर्ता : पहले से अब्रह्मचर्य का माल भरकर लाया है न? तो फिर इस जन्म में क्या करे वह?

दादाश्री : उसे इस जन्म में नये सिरे से समझना चाहिए कि पहले ब्रह्मचर्य का माल नहीं भरा था। अब नये सिरे से यह भरना चाहिए। पिछला जो *गलन* हो रहा है, वह फिर से खड़ा नहीं होना चाहिए।

ज्ञान मिलने के बाद, ये सारी व्यावहारिक चिंताएँ करने के बजाय मूल स्वभाव का भान रखना। व्यवहार से संबंधित झंझट कहाँ करने जाएँ?

प्रश्नकर्ता : स्वभाव का भान रखना यानी?

दादाश्री : 'मैं शुद्धात्मा हूँ' और इन पाँच वाक्यों में ध्यान रखना। और व्यावहारिक में वह सब जो नुकसान होगा, जो होना होगा सो होगा, उसका जो दंड मिलेगा, उसे देख लेंगे, दंड भुगत लेंगे। उसकी चिंता में पड़े तो यह मूल चीज़ रह जाएगी। जिसे यह नहीं मिला हो, उसे सभी चिंताएँ करनी हैं। पाँच आज्ञा में रहे तो उसमें सबकुछ आ गया।

[६]

आत्मा अकर्ता - अभोक्ता

विज्ञान की दृष्टि से विषय का भोक्ता कौन?

खाओ-पीओ, विषय भोगो, लेकिन सब लिमिट में होना चाहिए। नॉर्मेलिटी से सभी में रहो न? विषय भोगने के लिए भगवान ने मना नहीं किया है। विषय के साथ भगवान का झगड़ा नहीं था। भगवान भी तीस साल तक घर पर रहे थे। यानी यदि विषय के साथ ही झगड़ा होता तो पहले से ही क्यों नहीं छोड़ दिया? ऐसा नहीं है। विषय का और आत्मा का लेना-देना नहीं है। आत्मा कभी-भी विषयी हुआ ही नहीं है और यदि विषयी हुआ होता तो उसका रूपांतर अलग ही तरह का हो गया होता! उसके गुणधर्म ही बदल गए होते! वह तो परमात्मा का परमात्मा ही रहा है! इतनी सारी योनियों में जाने के बावजूद खुद का परमात्मापन नहीं छोड़ा, यह भी आश्चर्य है न! खुद के गुणधर्म नहीं बदले। आत्मा और अनात्मा कम्पाउन्ड के रूप में नहीं हैं। आत्मा-अनात्मा, दोनों तेल और पानी के मिक्सचर जैसे रूप में हैं। ज्ञानीपुरुष उसका ऐसा रास्ता निकाल देते हैं कि तेल-तेल अलग हो जाए और सारा पानी भी अलग हो जाए। क्योंकि ज्ञानी आत्मा को पहचानते हैं, इसीलिए यह कर सकते हैं। तेल और पानी में तो दो ही चीज़ें हैं। जबकि इसमें तो आत्मा और अन्य पाँच चीज़ें हैं।

'आत्मा का क्रियावादपना अज्ञानता की वजह से है।' जबकि लोग कहते हैं कि आत्मा ने यह किया, आत्मा ने वह किया। लेकिन आत्मा अत्यंत सूक्ष्मतम वस्तु है। विषय एकदम स्थूल हैं। आँखों से देखे जा सकें, ऐसे विषय हैं, स्पर्श से अनुभव हों, ऐसे विषय हैं। अब विषय, वे एकदम स्थूल हैं। छोटे बच्चे भी समझ जाएँ कि इस विषय में मुझे आनंद आया।

अरे, स्थूल का और सूक्ष्मतम का मेल कैसे पड़े? उन दोनों में कभी मेल हो ही नहीं सकता और मेल हुआ भी नहीं है। विषय का स्वभाव अलग है और आत्मा का स्वभाव अलग। आत्मा ने पाँच इन्द्रियों के कोई भी विषय कभी-भी भोगे ही नहीं। जबकि लोग कहते हैं कि मेरे आत्मा ने विषय भोगा! अरे, आत्मा कभी विषय भोगता होगा? इसलिए कृष्ण भगवान ने कहा है कि, 'विषय, विषय में बर्तते हैं।' ऐसा कहा फिर भी लोगों की समझ में नहीं आया। और यह तो कहता है कि, 'मैं ही भोग रहा हूँ।' वर्ना लोग तो कहते कि, 'विषय, विषय में बर्तते हैं, आत्मा तो सूक्ष्म है, इसलिए भोगो।' इस प्रकार उसका भी दुरुपयोग कर लेते। यदि इन शब्दों का दुरुपयोग करे तब तो मार ही डालेगा। इसलिए इन लोगों ने बाड़ बनाई ताकि कोई दुरुपयोग नहीं करे।

आत्मा ने कभी भी विषय भोगा ही नहीं है। मुझसे लोग कहते हैं कि, 'ऐसा कहकर आप पूरे शास्त्र उड़ा रहे हैं?' तब मैंने कहा, 'नहीं, शास्त्र नहीं उड़ा रहा हूँ।' आप जो कहते हैं कि 'मैंने विषय भोगा।' वह आपकी रोंग बिलीफ है, वह रोंग बिलीफ ही आपको परेशान करती है। बाकी, आत्मा ने कभी विषय भोगा ही नहीं। लेकिन आपको जो 'मैंने विषय भोगा' ऐसा अंदर खटकता है, वह दुःख मिटाने के लिए ज्ञानीपुरुष आपकी रोंग बिलीफ फ्रैक्चर कर देते हैं। अन्य कुछ है ही नहीं।

प्रश्नकर्ता : 'मैंने भोगा' वह भी इगोइज़म है न?

दादाश्री : हाँ, केवल इगोइज़म है। 'मैंने ऐसा किया और मैंने नहीं किया', वह सब इगोइज़म है।

प्रश्नकर्ता : अब इस बात का दुरुपयोग हो सकता है न? मानो लाइसेन्स मिल गया हो, ऐसे दुरुपयोग कर लेते हैं।

दादाश्री : ऐसा है न, यह बात तो कैसी है? सोने की कटार होती है न, उसे कैसे इस्तेमाल करना, उसका एक नियम ही होता है। अब उसका कोई दुरुपयोग करे और पेट में मार दे तो उसे कैसे मना कर सकते हैं? क्योंकि जो सुल्टा काम करे, वह उल्टा काम भी कर सकता है। लेकिन

मैं तो साइन्स बता रहा हूँ, जो विज्ञान है वह बता रहा हूँ कि आत्मा ने कभी-भी विषय भोगा ही नहीं। सिर्फ इगोइज़म ही है कि 'मैंने यह किया'। वह कर्ताभाव मैं छुड़वा देता हूँ कि, भाई, तू कर्ता नहीं है। यह तो 'व्यवस्थित' कर्ता है। आपको समझ में आ जाए, मैं ऐसे एक्ज़ेक्ट समझ देता हूँ कि 'व्यवस्थित' ही कर्ता है। वास्तव में 'व्यवस्थित' ही क्रिया करता है। यह तो आपने आरोपण किया है कि 'मैंने किया' और इगोइज़म के तौर पर आपको उसका फल मिलता है।

प्रश्नकर्ता : आरोपण करते हैं इसीलिए आवरण आता है न? आरोपण भाव, वही आवरण है?

दादाश्री : और कौन सा आवरण? वही आवरण है और वही अगले जन्म का बीज! यदि आरोपण नहीं है, तो अगले जन्म का बीज ही नहीं रहेगा, फिर तो आप मुक्त ही हो। मुक्तता की परिभाषा समझनी पड़ेगी। आप मुक्त ही हो, इस समय भी आप मुक्त हो। लेकिन 'उसने' जो बिलीफ में माना हुआ है कि 'मैं बंधा हुआ हूँ', इसलिए बंधन महसूस होता है। वह बंधनवाली बिलीफ फ्रैक्चर हो जाए और 'किस प्रकार से मैं मुक्त हूँ' यह भान हो जाए, तो आप मुक्त ही हो!

इसलिए पहली बार हमने पुस्तक में लिखा है कि विषय, विष नहीं हैं लेकिन विषयों में निडरता, वह विष है। निडरता यानी क्या कि कुछ लोग कहते हैं कि, 'दादा ने मुझे ज्ञान दिया है, तो अब मुझे कोई विषय बाधक नहीं है। मुझे तो भोगने में कोई हर्ज ही नहीं है न?' तो खत्म हो गया। इसलिए बात को समझो।

इतने सारे जन्म हुए, लेकिन आत्मा ने एक भी विषय भोगा ही नहीं। उसने यदि विषय भोगा होता तो आज तक तो वह कब का ऊब चुका होता। उसे तो आप जब कभी देखो तब फुरसत में और सिर्फ फुरसत में ही दिखाई देगा। जिसने भोगा हो उसे झंझट है न? और इस गंदगी में वह हाथ डालेगा ही नहीं न? आत्मा को कुछ छू ही नहीं सकता, इसलिए उसे निर्लेप कहा है।

'ज्ञानीपुरुष' ने आत्मा देखा हुआ होता है, अनुभव किया होता है, इसलिए फिर 'ज्ञानीपुरुष' जहाँ से भी वाणी बोलें, वह शुद्ध ही होता है सारा!

आत्मा को जानने के लिए यह सबकुछ है न! आत्मा जान लिया यानी अपना काम पूरा हो गया। इसलिए कभी न कभी आत्मा जाने बगैर चारा ही नहीं है। जबकि लोग तो कहते हैं, 'हम आज हैं, तो भोग लें।' अरे! लेकिन तू कुछ भोगता ही नहीं है। तू उल्टा मानकर बैठा है कि 'यह मैंने भोगा।' तू अहंकार ही कर रहा है। वे लोग, 'मैंने यह नहीं भोगा', ऐसा अहंकार करते हैं। सिर्फ अहंकार ही करते हैं, और कुछ नहीं करते। क्योंकि आत्मा सूक्ष्मातिसूक्ष्म है, यानी सूक्ष्मतम कहें तो चलेगा और ये विषय सूक्ष्मतर हैं, सूक्ष्म हैं, स्थूल हैं। उन दोनों का मेल कैसे हो सकता है? यानी आत्मा ने ऐसा कुछ भोगा ही नहीं। ये विषय तो, बहुत गहराई में जाओ न, तो वे सूक्ष्म होते हैं, फिर सूक्ष्मतर बनते हैं। सूक्ष्मतर सभी अनंग होते हैं।

प्रश्नकर्ता : इस हद तक के तो सभी देख लिए।

दादाश्री : वे सब तो स्थूल कहलाते हैं।

प्रश्नकर्ता : तो आप किसे सूक्ष्मतर कहते हैं?

दादाश्री : वे तो तरह-तरह के अनंग विषय होते हैं। स्थूल विषय तो यों प्रत्यक्ष दिखाई देते हैं। सूक्ष्म का वेदन होता है और सूक्ष्मतर में अंदर वे सभी अनंग भाव होते हैं। लेकिन वे आत्मा को स्पर्श नहीं कर सकते। फिर आप माथापच्ची करो या कुछ भी करो। मैंने जो आत्मा दिया है, उसे विषय स्पर्श नहीं कर सकते। लेकिन आपकी जागृति नहीं होने के कारण आप के लिए यह बंधन रखते हैं। आप संपूर्ण शुद्ध उपयोग में रह पाओ ऐसा नहीं है और इन पाँच आज्ञाओं में भी रह सको, ऐसा नहीं है। इसलिए आप पर ये बंधन रखने पड़ते हैं, सावधान करना पड़ता है। वर्ना सावधान नहीं करना पड़ता, एक अक्षर भी नहीं कहना पड़ता। यह विज्ञान तो बहुत अलग तरह का है।

'सूक्ष्मतम', 'स्थूल' को भोग सकता है?

दादाश्री : नया नहीं, यह 'एक्ज़ेक्ट' ऐसा ही है। यदि भोग रहा होता तब तो अहंकार अघा जाता, लेकिन यह तो भूखा का भूखा ही रहता है। वह क्या कहलाता है? अहम्-कार। किसी ने किया और उसे 'मैंने किया' ऐसा खुद कहता है, वही अहंकार है। 'दु:ख भी मैंने भुगता', अहंकार ऐसा कहता है। अरे! दु:ख भी इन्द्रियाँ भुगतती हैं, तू कहाँ भुगतता है? अहंकार भी सूक्ष्म है। अहंकार कोई ऐसी-वैसी चीज़ नहीं है। यद्यपि स्थूल अहंकार तो शरीर में है ही, लेकिन खुद मूल स्वरूप में सूक्ष्म है और सूक्ष्म में से स्थूल बनता है और वह स्थूल, 'उस' भोगने में तैयार होता है। साथ में स्थूल तैयार होता है, लेकिन मूल स्वभाव सूक्ष्म है और इसलिए खुद स्थूल को भोग ही नहीं सकता। आत्मा तो इसमें सिर्फ जानता है, उतना ही है। यह तो 'आत्मा विषय भोगता है', ऐसी भूल घुस गई। भूल घुस गई है, वह करोड़ों जन्मों की भूल मिटती ही नहीं! यह भी आश्चर्य है न!

देखो न, बिना वज़ह मार खाता है न? कौन भोग रहा है? उसे आपने ढूँढ निकाला न! कौन भोग रहा है? वह अहंकार भोग रहा है। रोज़ भोगे और एक दिन नहीं भोगे न, फिर भी कहता है, 'मैंने भोग लिया है।' तभी उसे ऐसी तृप्ति होती है न? यानी नहीं भोगने पर भी कहता है कि 'मैंने भोग लिया' तो उसे तृप्ति होती है। क्योंकि अहंकार ही करता रहता है, अन्य कुछ नहीं करता। अब साथ-साथ फिर वह 'खुद' कहता भी है कि 'मैंने भोग लिया' ऐसा आरोपण करता है। उससे फिर नई मुसीबत खड़ी होती है, फिर भी वह मानता है कि 'मैंने भोग लिया'। इसलिए उसे संतोष भी होता है क्योंकि उसकी इच्छा थी न! बाकी, वह खुद भोगता ही नहीं।

आत्मा तो शुद्ध ही है और विषय, विषयों में बर्तते हैं। यह तो बिना वजह 'इगोइज़म' करता है। अब जब तक 'इगोइज़म' नहीं जाता, तब तक 'इगोइज़म' किए बगैर रहेगा नहीं न! 'इगोइज़म' कब जाएगा? उसका आधार चला जाएगा तब। उसका आधार क्या है? अज्ञान! अज्ञान कब जाएगा? 'ज्ञानी विद्यमान होंगे तब।'

ज्ञानी के शब्द सोने की कटार

यह तो 'बिलीफ' ही 'रोंग' थी, वर्ना आत्मा रागी भी नहीं था और द्वेषी भी नहीं था। राग-द्वेष आत्मा में हैं ही नहीं। आत्मा में वे गुण हैं ही नहीं। ये सभी आरोपित भाव हैं। आरोपित भाव कैसे हैं? व्यवहार के हैं। यानी कि सिर्फ आपकी 'बिलीफ' ही रोंग है कि 'मुझे राग हो रहा है, और मुझे द्वेष हो रहा है।' जो उस 'रोंग बिलीफ' को उखाड़ दे, वह 'ज्ञानी'। वह 'बिलीफ' उखड़ सके ऐसी नहीं है। आपकी वह 'रोंग बिलीफ' हमने उखाड़ दी है।

प्रश्नकर्ता : इसे ज़रा विस्तार से समझाइए न कि 'बिलीफ रोंग' है और 'ज्ञानीपुरुष' बिलीफ को उखाड़ देते हैं।

दादाश्री : हम क्या कहते हैं कि आत्मा अगुरु-लघु स्वभाव का है और राग-द्वेष गुरु-लघु स्वभाव के हैं। इसलिए उन दोनों में संबंध भी नहीं था और साझेदारी भी नहीं थी। ये जो आरोपित भाव हैं कि आत्मा को राग होता है और द्वेष होता है, वे व्यवहार के भाव हैं। लोग ऐसा कहते हैं कि मुझे इसके प्रति राग है। अब वास्तव में आपको पौद्गलिक आकर्षण है! क्योंकि आपको मैंने ज्ञान दिया है इसलिए आपका आत्मा अलग हो गया है, तो अब क्या रहा? पौद्गलिक आकर्षण रहा। *पुद्गल* में आकर्षण नामक गुण है और विकर्षण नामक गुण है। अब लोग उस आकर्षण को राग कहते हैं और विकर्षण को द्वेष कहते हैं। आपका पैर गंदगी में पड़े और घिन आए, तो उससे ज्ञान चला नहीं गया! शायद कभी ज्ञानी के चेहरे पर भी असर दिखाई दे, इसका मतलब ज्ञान चला नहीं गया। ज्ञान, ज्ञान ही है। इस *पुद्गल* में विकर्षण नामक गुण है, जिससे घिन आई और चेहरे पर असर हो गया!

नहीं है लेना-देना आत्मा को इससे

प्रश्नकर्ता : क्या वह आत्मा को स्पर्श नहीं करता? क्या वह *पुद्गल* तक ही सीमित रहता है?

दादाश्री : आत्मा को कोई लेना-देना है ही नहीं। हम आपको

जो आत्मा देते हैं वह निर्लेप और असंग ही देते हैं। कोई कहे कि स्त्रियों के साथ रहते हुए आत्मा कैसे असंग रह सकता हैं? तब हम कहते हैं कि 'आत्मा बिल्कुल सूक्ष्म है! और ये जो विषय है, वे स्थूल स्वभाव के हैं! दोनों का कभी-भी मेल हुआ ही नहीं।' यह बात ज्ञानीपुरुष जानते हैं और तीर्थंकर भी जानते हैं। लेकिन तीर्थंकर स्पष्ट रूप से बताते नहीं हैं। क्योंकि तीर्थंकर यदि स्पष्ट कह दें तो लोग उसका दुरुपयोग करेंगे। तीर्थंकर विवरण नहीं करते। हम विवरण कर लेते हैं, वह भी गुप्त रूप से, कुछ ही लोगों के लिए, वर्ना फिर उसका दुरुपयोग होने लगेगा कि आत्मा तो सूक्ष्म स्वभाव का है और विषय का और आत्मा का कोई लेना-देना है ही नहीं, इसलिए अब कोई हर्ज नहीं है। और हर्ज नहीं है कहा कि भूत घुस जाएगा!

कर्मों के दबाव से यह क्रिया होती रहती है। उसमें भी यह क्रिया स्थूल है, आप सूक्ष्म हो। लेकिन यदि यह ज्ञान आपके मन में रहे कि आत्मा को तो कुछ छूता ही नहीं है, तो हर्ज नहीं है। तो वह उल्टा कर देगा। इसलिए हम ऐसा बताते ही नहीं कि आत्मा सूक्ष्म-स्वभावी है। हम तो ऐसा कहते हैं कि विषयों से डरो। विषय, वे विष नहीं हैं लेकिन विषय में निडरता वही विष है। निडरता यानी क्या कि अब मुझे कोई हर्ज नहीं है। लेकिन संपूर्ण ज्ञानी होने के बाद और संपूर्ण अनुभवज्ञान होने के बाद ही ऐसा कह सकते हैं कि आत्मा को कुछ स्पर्श नहीं करता। यह अन्य सबकुछ तो हम आपको स्पष्ट करने के लिए समझाते हैं।

सावधान! न हो जाए कहीं दुरुपयोग

प्रश्नकर्ता : यदि निडरता आ जाए तो फिर स्वच्छंदता आ जाती है न?

दादाश्री : स्वच्छंदता आए, उसी क्षण मार खिला देती है। इसीलिए हम यह बताते नहीं हैं। वर्ना इन जवान लड़कों में उल्टा हो जाएगा। यह तो आप जैसे जो कि किनारे पर आ गए हैं, उनसे यह बात करते हैं। जवान लोग तो वापस कुछ उल्टा पकाएँगे! लेकिन वे यदि 'यथार्थ ज्ञान' समझें

और उस ज्ञान में रहें तो कुछ स्पर्श नहीं कर सकेगा, लेकिन यह ज्ञान उतना नहीं रह पाता न? इन्सान की इतनी शक्ति नहीं है न? अनुभव हुए बिना काम का नहीं है। जब तक अनुभव नहीं होता, तब तक आज्ञा में रहना।

यह तो किसी के मन में ऐसी शंका होती हो कि, 'संसार में रहते हैं और विषय तो हैं, तो यह कैसे संभव है?' आपको शंका नहीं रहे इसलिए हम यह बात कर रहे हैं। वर्ना लोग तो दुरुपयोग करेंगे। आज कल के लोगों को तो यह पसंद ही है इसलिए दुरुपयोग कर लेंगे। क्योंकि विपरीत बुद्धि अंदर तैयार ही रहती है। फिर भी यह जो ज्ञान दिया है, वह और ही तरह का विज्ञान है! हर तरह से रक्षण करे ऐसा है, लेकिन यदि कोई जान-बूझकर बिगड़ना चाहे तो बिगड़ जाएगा, सब खत्म कर डालेगा! इसलिए हमने कहा है कि हमारी इन आज्ञाओं में रहना। हम आपको इतनी ऊँचाई पर ले गए हैं कि यहाँ से, ऊपर से यदि आप लुढ़के तो फिर हड्डियाँ भी नहीं मिल पाएँगी। इसलिए सीधे चलना और ज़रा सा भी स्वच्छंद मत करना। स्वच्छंद तो इसमें चलेगा ही नहीं!

'मुझे दादा का ज्ञान मिला है, अब मुझे कोई रुकावट नहीं है।' वह तो भयंकर रोग है। तब तो यह विष समान हो जाएगा। बाकी, विषय, विष नहीं है, विषयों में निडरता वही विष है। यह ज्ञान दुरुपयोग करने जैसा नहीं है!

प्रश्नकर्ता : इसमें एक बात तो सीधी है कि आपने कहा कि भगवान के लिए तो यह सही है और यह गलत, ऐसा है ही नहीं। इसलिए क्या अच्छा और क्या गलत, फिर यह प्रश्न ही उत्पन्न नहीं होता, वह प्रश्न तो गौण हो जाता है न?

दादाश्री : नहीं, लेकिन वह भगवान की दृष्टि में है और जब तक हम भगवान नहीं हो जाते, तब तक हम गुनहगार हैं! अत: यदि गलत हुआ हो तो उसका खेद होना चाहिए! यह मैं जो कह रहा हूँ, वे शब्द दुरुपयोग करने के लिए नहीं कह रहा हूँ। आपको बोदरेशन नहीं रहे, इसलिए कह रहा हूँ। किसी के मन में ऐसा नहीं लगे कि मुझे कर्म बंधन हो रहा होगा

इसलिए खुलकर कह रहा हूँ। वर्ना छान-छानकर नहीं बोलता कि, 'भाई, कर्म तो बंधेगा, यदि आप कभी ऐसा करोगे तो।' लेकिन मैं तो आपको निर्भय बना देता हूँ, निर्भय नहीं बनाता?

विषय में कपट भी विष है

प्रश्नकर्ता : आप तो बिल्कुल निर्भय बना ही देते हैं। जब सभी निर्भय हो जाते हैं तो फिर उसका दुरुपयोग हो जाता हैं। उसीकी तो बात है न? मुख्य मुद्दा वहीं पर है न?

दादाश्री : ऐसा है न, मेरा क्या कहना है? सिर्फ इस विषय के बारे में ही सभी जागृत रहना। खुद की स्त्री या फिर खुद का पुरुष, सिर्फ उसी विषय की आपको छूट दे रखी है। उतनी मैंने छूट दी है। लेकिन यदि दूसरी कोई हो तो हमसे कहकर, हमसे मंजूरी ले लेना और हम तुझे मंजूरी देंगे भी सही। इसलिए हिचकिचाहट मत रखना। लेकिन उसे सावधान भी करेंगे कि इस रास्ते पर इस तरह चलना है। मंजूरी नहीं देंगे तो चलेगा ही नहीं न! लेकिन यदि सिर्फ खुद के एक 'स्त्री-पुरुष' का हो, तो हमारी मंजूरी लेने की ज़रूरत नहीं है!

अपने 'ज्ञान' से दो-चार जन्म में कभी न कभी, आगे-पीछे लेकिन मोक्ष में जाएगा, पंद्रह जन्मों में भी मोक्ष में जाए तो उसमें हर्ज नहीं है, लेकिन इसमें से जो लटक जाए वह तो अस्सी हज़ार सालों तक लटकता रहेगा फिर भी ठिकाने नहीं लगेगा! अस्सी हज़ार सालों तक बहुत ही परेशानीवाला काल आनेवाला है। इसलिए इसमें से कोई लटके नहीं इतना हमें देखना है।

प्रश्नकर्ता : दादा, किस में से नहीं लटके? इसमें से यानी किस में से?

दादाश्री : इस 'ज्ञान' में से। यह 'ज्ञान' लेने के बाद जान-बूझकर उल्टा करे तो फिर क्या होगा?

प्रश्नकर्ता : 'ज्ञान' लेने के बाद कोई उल्टा कर सकता है क्या?

दादाश्री : हाँ, कर सकता है न! आपके घर के सामने पौधे लगाए

हों, बगीचा आपने खुद लगाया हो, और आपको उखाड़ देना हो तो कोई मना करेगा?

प्रश्नकर्ता : लेकिन दादा, ज्ञान लेने के बाद उसे ऐसा करने का विचार तक आ सकता है क्या?

दादाश्री : कोई-कोई ऐसा होता है, सभी ऐसे नहीं होते। उसे हम चेतावनी दें तो शायद वापस लौटे! यह असावधान रहने जैसी चीज़ नहीं है! असावधानी तो मार डालेगी!

इसलिए हम कहते हैं न कि विषय विष नहीं है, विषयों में निडरता वही विष है। विषय में कपट करना, अन्य कुछ भी करना, वह सब विष कहलाता है। वही मार डालता है और ऐसा होता हो तो निरा खेद, खेद और खेद होना चाहिए। निरंतर खेद किए बगैर अच्छा नहीं लगे तो समझना कि यह रोग चला जाएगा। वर्ना उखाड़ फेंकने की सत्ता तो खुद की है ही न? बिल्कुल सत्ता विहीन हो जाए, ऐसा कभी होता नहीं है। सत्ता तो, ठेठ 'केवलज्ञान' होने तक उसकी सत्ता रहती है। फिर उल्टा करने की या सीधा करने की, लेकिन सत्ता तो रहती है!

ज्ञानीपुरुष से मिलने पर भी यदि भूल खत्म नहीं हो तो

जो वास्तविकता वाला जगत् लोगों के लक्ष्य में आया ही नहीं है, कभी भी लक्ष्य में आया ही नहीं है, वह जब ऐसे ज्ञानी हुए थे, तब लक्ष्य में आया था। लेकिन वह भी ज्ञानियों के लक्ष्य में आया था। ज्ञानियों ने लोगों को जो बताया, वह उन लोगों के लक्ष्य में नहीं आया। कुछ लोग जो मोक्ष में गए हैं, वे ज्ञानी की कृपा से मोक्ष में गए, लेकिन बात समझ में नहीं आई थी। यह कुदरत की गहन पहेली है, इसमें से कोई छूट नहीं पाया। जो छूट गए, वे कहने को रहे नहीं। सिर्फ मैं ही मुक्त होने के बाद कहने को रहा हूँ। नापास हुआ, इसलिए मैं कहने को रह गया, इसलिए संभालकर काम निकाल लो। हम तो आपका काम करवाने के लिए बैठे हैं।

यह ज्ञान ही आपको ऐसा दिया है कि किसी चीज़ की ज़रूरत ही नहीं पड़े। दादा के पास बैठकर दादा जैसे नहीं बन पाओ तो वह आपका

ही दोष है न? यह ज्ञान तो क्रियाकारी है। निरंतर अंदर काम करता रहता है। आपको अंदर कुछ करना पड़ता है क्या?

प्रश्नकर्ता : अपने आप ही होता रहता है।

दादाश्री : अब, ऐसा क्रियाकारी ज्ञान प्राप्त होने के बाद भी यदि मोक्ष नहीं हो तो अपनी ही भूल है न? मोक्ष तो यहीं अनुभव में आना चाहिए। मोक्ष लेने नहीं जाना है। मोक्ष यानी अपना मुक्तभाव। यह सबकुछ होने के बावजूद भी आप मुक्त हो और यह सबकुछ नहीं हो, ऐसा कभी भी होनेवाला नहीं है, इसलिए पहले से सावधान हो जाओ। इन सब के रहते हुए भी मुक्त होना पड़ेगा। बंधन होगा तभी मुक्तभाव का अनुभव कर सकोगे न? बंधन नहीं होगा तो मुक्तभाव का अनुभव कैसे कर सकोगे? मुक्तभाव का अनुभव किसे करना है? जो बंधन में है, उसे अनुभव करना है।

यहाँ आपकी आँखों पर पट्टी बाँधकर खम्भे के साथ रस्सी से ज़ोर से बाँध दिया हो, फिर छाती के आगेवाली रस्सी की एक लपेट मैं ब्लेड से काट डालूँ तो आपको अंदर पता चल जाएगा न? यहाँ से रस्सी छूट गई, ऐसा आपको खुद को अनुभव होगा। एक बार वह समझ जाए कि मैं मुक्त हो गया, तो काम हो जाएगा।

उसी तरह, मनुष्य को मुक्तता का भान होना चाहिए। वह मोक्ष भाव कहलाता है। मुझे निरंतर मुक्तता का भान रहता है, 'एनी व्हेर', 'एनी टाइम'। द्रव्य-क्षेत्र-काल-भाव कुछ भी मुझे प्रतिबंधित नहीं कर सकता। चीज़ प्रतिबंधित नहीं कर सकती। यह तो भैंसे की भूल का दंड चरवाहे को देता रहता है।

प्रश्नकर्ता : तो फिर कौन प्रतिबंधित करता है?

दादाश्री : 'स्वरूप का अज्ञान' प्रतिबंधित करता है। मैं यही कहना चाहता हूँ कि आप इन विकारों में निर्विकार रह सकते हो। ये विकार, विकार नहीं हैं। यह तो दृष्टि में फर्क है। यह प्रतिबद्ध करनेवाली चीज़ है ही नहीं। आपकी दृष्टि टेढ़ी होगी, तभी प्रतिबद्ध करेगी।

❖❖❖❖❖

[७] आकर्षण-विकर्षण का सिद्धांत

आकर्षण क्या है? वह समझ में आए तो सावधान रह सकेंगे

आकर्षण से ही यह पूरा जगत् खड़ा है। इसमें भगवान को कुछ करने की ज़रूरत नहीं पड़ी, मात्र आकर्षण ही है! यह स्त्री-पुरुष का जो है न, वह भी मात्र आकर्षण ही है। पिन और लोहचुंबक में जैसा आकर्षण है, वैसा ही यह स्त्री-पुरुष के बीच का आकर्षण है। सभी स्त्रियों के प्रति आकर्षण नहीं होता। समान परमाणु मिलते आएँ, तब उस स्त्री के प्रति आकर्षण होता है। आकर्षण होने के बाद खुद ने तय किया हो कि मुझे नहीं खिंचना है तो भी खिंच जाता है। वहाँ पर क्या सोचना नहीं चाहिए कि मुझे आकर्षित नहीं होना है? फिर भी आकर्षण क्यों उत्पन्न होता है? इसलिए 'देयर आर सम कॉज़ेज़', वे 'मैग्नेटिक कॉज़ेज़' हैं!

प्रश्नकर्ता : वह पूर्वजन्म के हो सकते हैं?

दादाश्री : वह आकर्षण, हमारी इच्छा नहीं है फिर भी होता है, उसका मतलब ही पूर्वजन्म का है। इसे भी मैग्नेटिक हो चुका है और स्त्री को भी मैग्नेटिक हो चुका है। पूर्वजन्म में सूक्ष्म रूप में होता है और यहाँ स्थूल रूप में होता है। अत: फिर स्वाभाविक रूप से आकर्षण होता ही है। अब आकर्षण होता है, तब आपको मन में ऐसा लगता है कि 'मैं खिंच गया।' लेकिन जब आप अपना स्वरूप जान जाओगे, उसके बाद आपको ऐसा लगेगा कि 'चंदूभाई' आकर्षित हो गए।

प्रश्नकर्ता : यह जो आकर्षण होता है, वह कर्म के अधीन है या नहीं?

दादाश्री : कर्म के अधीन तो पूरा ही जगत् है, लेकिन सामनेवाले

के परमाणु और अपने परमाणु एक जैसे होंगे तभी आकर्षण होता है।

प्रश्नकर्ता : लेकिन उसमें कर्म का उदय तो है ही न?

दादाश्री : कर्म के उदय से तो यह पूरा जगत् है। उस एक फेक्टर में तो सभी कुछ आ गया, लेकिन उसे डिवाइड करो तो इस प्रकार से अलग है कि अपने परमाणु के साथ सामनेवाले के परमाणु मेल खाएँ तभी आकर्षित होता है, वर्ना आकर्षित नहीं होता। एक आदमी ने मोटी और दागवाली बीवी पसंद की, तब मैंने सोचा कि इस आदमी ने ऐसी बीवी कैसे पास की होगी! वे एक जैसे परमाणु मिलते ही तुरंत आकर्षण हो जाता है। लोग कहते हैं कि, 'मैं लड़की को ऐसे देखूँगा, वैसे देखूँगा। ऐसे घूमो, वैसे घूमो।' लेकिन जब भीतर परमाणु खिंचेंगे तभी हिसाब बैठेगा, वर्ना बैठेगा ही नहीं।

प्रश्नकर्ता : वह पूर्व का ऋणानुबंध हुआ न?

दादाश्री : यदि ऋणानुबंध कहें न, तो पूरा जगत् ऋणानुबंध ही कहलाएगा। लेकिन आकर्षण होना, यह चीज़ ऐसी है न कि उनके परमाणुओं का आमने-सामने हिसाब है, इसलिए खिंचते हैं! अभी जो राग उत्पन्न होता है, वह वास्तव में राग नहीं है। ये जो लोहचुंबक और पिन होते हैं, तो उस लोहचुंबक को ऐसे घुमाने से पिन इधर-उधर होती है। उन दोनों में कहीं जीव नहीं है, फिर भी लोहचुंबक के गुणों के कारण दोनों में केवल आकर्षण रहता है। उसी प्रकार जब समान परमाणु होते हैं न, तब इस देह को उसीके प्रति आकर्षण होता है। उसमें लोहचुंबक है। इसमें इलेक्ट्रिकल बॉडी है! लेकिन जिस प्रकार लोहचुंबक लोहे को खींचता है, अन्य किसी धातु को नहीं खींचता। उसी प्रकार खुद की धातुवाला हो, तभी आकर्षित होता है, उसी प्रकार आपके अंदर सारा खिंचाव और आकर्षण होता है। लेकिन वहाँ पर जागृति रहनी चाहिए, वर्ना मार खा जाएगा।

यदि सिर्फ आकर्षण ही हो तो उसे पसंद करते हैं, लेकिन फिर से विकर्षण होगा। थोड़ी देर अच्छा लगता है, फिर वापस कड़वा लगता

है। पुरुष, कितना भी सुंदर हो, लेकिन स्त्री को यदि दो शब्द उल्टे बोल दिए, कि, 'तू बेअक़्ल है' तो फिर स्त्री को ऐसा होता है कि, 'मुझे बेअक़्ल कहा?' तब फिर कड़वा लगता है। यानी सिर्फ आकर्षण ही नहीं है इस जगत् में। आकर्षण और विकर्षण दोनों ही हैं, यह द्वंद्वरूपी है! यह जगत् द्वंद्वरूपी ही है। इसलिए सिर्फ आकर्षण ही नहीं होता। विकर्षण भी है ही। विकर्षण नहीं होगा तो फिर से आकर्षण होगा ही नहीं और यदि सिर्फ आकर्षण ही होगा, तब भी लोग ऊब जाएँगे।

परमाणु में भर गया पावर

प्रश्नकर्ता : यह सब चेतन में कहाँ से घुस गया? ऐसा क्यों शुरू हो गया?

दादाश्री : उसे ऐसा भान हुआ कि 'यह तो, मैं खिंच रहा हूँ' और इतना समझ ले कि यह पुतला उस पुतले के साथ, उन दोनों में इलेक्ट्रिसिटी की वजह से दोनों खिंच रहे हैं, उसे 'मैं जाननेवाला हूँ'। लेकिन ऐसा भान नहीं रहा उसे। इलेक्ट्रिकल ऐडजस्टमेन्ट की वजह से लोहचुंबकत्व उत्पन्न होता है। इसलिए मुझे नहीं खिंचना है फिर भी खिंच जाता हूँ। इसलिए समझ में ऐसा आता है कि यह खुद नहीं खिंच रहा है। तय किया हो कि 'बिस्तर पर से इधर-उधर नहीं होना है।' लेकिन वापस आधे घंटे बाद उठ जाता है! तब मन में ऐसा होता है कि, 'मैं ही कच्चा हूँ।' 'तय किया था न? फिर तू कैसे ढीला पड़ गया? यह तो भीतर दूसरा भूत घुस गया है।' इस पर लोगों ने मुझसे फिर पूछा, मुझे कहते हैं कि, 'यह क्या हो रहा है?' मैंने कहा, 'यह तो इलेक्ट्रिकल ऐडजस्टमेन्ट की वजह से लोहचुंबकत्व रहता है। यानी लोहचुंबक पिन को हिलाता है, उस वजह से दोनों में रिश्ता है? यह लोहचुंबकत्व है।' जबकि यह तो कहेगा, 'मैं गया, मैं निर्बल हो गया हूँ।' वह फिर निर्बल ही होता जाता है। 'मैं' गया ही नहीं, 'मैं' कैसे जा सकता है? मेरा निश्चय है फिर 'मैं' गया कैसे? लेकिन कहेगा, 'मैं ही कच्चा हूँ। यह मैं ही हूँ', ऐसा मान बैठा है न। यानी इस प्रकार से उल्टा मान बैठा है। लेकिन किसने सिखाया यह उल्टा? वह यह है कि उसके फादर ने कहा, 'तू ही है, तू ही चंदू है' फिर पत्नी ने

कहा कि, 'आप मेरे पति हैं।' और फिर चलती बने। तब, फिर उसे पति क्यों कहती है? लेकिन फिर सुनाती है!

बात अच्छी लग रही है या ज़रा कठिन है?

प्रश्नकर्ता : बहुत अच्छी लग रही है। पूरा निकाल कर देना है इसलिए सब जानना है, अभी तो बहुत कुछ जानना है।

दादाश्री : लेकिन लोग क्या समझते हैं, 'मैं खिंच गया, इच्छा नहीं थी, फिर भी। मुझसे व्रत का पालन नहीं हो सका। मेरा व्रत भंग हो गया।' अरे! भंग नहीं हुआ है। तुझे भ्रम है एक तरह का। इस विज्ञान को तो समझ कि 'कौन खींच रहा है?' तुझे नहीं खिंचना है, फिर भी कौन तुझे खींच ले गया? और कौन मालिक है बीच में, जो खींच ले गया? तब कहता है, 'मैं खिंच गया, मेरा मन बिगड़ गया। मन निर्बल हो गया।' अरे! तेरा मन तुझे क्यों खींचने लगा? मन से तेरा क्या लेना-देना है? वह मिकेनिकल ऐडजस्टमेन्ट अलग है और तू अलग। अब बोलो, पूरी दुनिया मार खा जाती है न!

यह तो इलेक्ट्रिसिटी की वजह से सभी परमाणु पावरवाले हो जाते हैं और इसलिए परमाणु खिंचते हैं। जैसे, पिन और लोहचुंबक के बीच क्या कोई आ गया है? पिन को हमने सिखाया था कि तू इधर-उधर होना?

प्रश्नकर्ता : उसे इलेक्ट्रिसिटी छूए ही नहीं, ऐसा नहीं हो सकता? उसे कंट्रोल नहीं किया जा सकता?

दादाश्री : कंट्रोल नहीं हो सकता। कभी भी इलेक्ट्रिकल चीज़ को कंट्रोल नहीं किया जा सकता। कंट्रोल तो, उसे ऐडजस्टमेन्ट करने से पहले कंट्रोल किया जा सकता है। बाद में, ऐडजस्टमेन्ट तय होने के बाद फिर नहीं हो सकता।

यानी यह पूरी देह तो विज्ञान है। विज्ञान से यह सब चल रहा है। अब, जब खिंचाव होता है तो उसे लोग कहते हैं कि 'मुझे राग हुआ'। अरे! आत्मा को राग तो होता होगा? आत्मा तो वीतराग है! आत्मा को

राग भी नहीं होता और द्वेष भी नहीं होता। ये दोनों तो खुद की कल्पना है। उसे भ्रांति कहते हैं। भ्रांति चली जाए तो फिर कुछ है ही नहीं।

और फिर यह एक प्रकार का आकर्षण नहीं है। बच्चों पर भी आकर्षण होता है। यानी यह एक प्रकार की इलेक्ट्रिसिटी से ये सारे परमाणु लोहचुंबक जैसे हो जाते हैं, उसमें यदि सामनेवाले के मिलते-जुलते परमाणु आएँ, तो वहाँ आकर्षण होता है, अन्यत्र आकर्षण नहीं होता। लोहचुंबक का तो हमें अनुभव है न? उसमें कौन किसके प्रति राग करता है? और यहाँ तो आप राग नहीं करते हैं न, किसी से? जैसा वह लोहचुंबक स्वभाविक है, वैसा ही यह भी स्वभाविक है। लेकिन इसमें क्या कहते हैं कि, 'मैंने किया', 'मैं कर रहा हूँ' ऐसा कहा कि चिपका फिर! वर्ना कहेंगे, 'मुझसे ऐसा हो गया'। अरे! क्यों फँसता है! आकर्षण हो जाए तब फिर उसे, 'यह मेरा, इतना मेरा' करता रहता है। अरे! नहीं है तेरा। यह पूँजी भी तेरी नहीं है और यह मिल्कियत भी तेरी नहीं है। तू क्यों बेकार ही फँस रहा है? शादी की तभी से 'मेरी वाइफ, मेरी वाइफ' करता है। लेकिन जब शादी नहीं हुई थी, उस समय? तब कहेगा, 'उससे पहले तो मेरी नहीं थी!' शादी हुई तभी से डोरी से लपेटता रहता है, 'मेरी, मेरी' करता है। फिर जब पत्नी मर जाए, तब रोता है। शादी नहीं की थी तब मेरी नहीं थी तो यह 'मेरी' कैसे घुस गया? अब 'नहीं है मेरी, नहीं है मेरी' कर तो तेरा जो लपेटा हुआ है, वह छूट जाएगा! लोग क्या कहते हैं? तूने माया को पकड़ा है, उसे छोड़ दे। लेकिन छूटे कैसे? ज्ञानीपुरुष सब छुड़वा देते हैं। ज्ञानीपुरुष खुद मुक्त हुए हैं, वे सभी को मुक्त करवा देते हैं। उनके साइन्टिफिक तरीके से वे रास्ता बताते हैं कि ऐसे छूटा जा सकता है, नहीं तो छूटने का और कोई रास्ता नहीं है। यानी मोक्षमार्ग को समझना है, केवल समझते रहना है!

वहाँ तत्वदृष्टि से ही मुक्ति

अक्रम यानी क्या? कि कर्म खपाए बिना ज्ञान प्राप्त हुआ है। अभी तक किसी प्रकार के कर्म नहीं खपाए हैं। अत: बात को समझ लेना है। इसमें अन्य कुछ बाधक नहीं है! और यह विषय एक ऐसी चीज़ है कि

इस ज्ञान को उलट दे। सिर्फ यह विषय ही ऐसा है। अन्य सबकुछ भले ही रहा। जीभ के विषय वगैरह, वे सभी दावा नहीं करते। वह चेतन के साथ नहीं है। वह अचेतन है और यह तो मिश्रचेतन है। इसलिए इस विषय में तो आपकी इच्छा नहीं हो फिर भी वश में होना पड़ता है, वर्ना वह दावा कर सकती है और कभी भटका भी सकती है। अतः इसमें बहुत जागृति रखना। इस वजह से यहाँ तो कुछ लोग हमेशा के लिए व्रत ही ले लेते हैं और हम देते भी हैं। या फिर कोई सालभर के लिए ट्रायल के तौर पर ले तो ऐसा करते-करते शक्ति बहुत बढ़ जाती है। यह विषय है ही ऐसा कि भटका दे। हमने जो आत्मा दिया है, उसे भी फिकवा दे।

अवस्था दृष्टि से देखने पर ही उसका ऐसा सब असर होता है। अवस्था दृष्टि से ही आकर्षण-विकर्षण है, तत्वदृष्टि से नहीं है। अवस्था में तन्मयाकार हो जाए कि तुरंत ही अंदर लोहचुंबकत्व उत्पन्न हो जाता है और उससे फिर आकर्षण शुरू होता है।

प्रश्नकर्ता : जब लोहचुंबक और पिन दोनों आमने-सामने आते हैं, तब आकर्षण होता है। अब यह आकर्षण नाबूद कब होगा?

दादाश्री : यह तो हमेशा रहेगा ही। जब तक लोहा लोहे के भाव में है, तब तक रहेगा। यदि लोहचुंबकत्व उतर जाए तो आकर्षण चला जाएगा।

जहाँ आकर्षण, वहाँ ज़रूरी है प्रतिक्रमण

जहाँ आकर्षण, वहाँ मोह। जहाँ हमारी आँखे खिंचें, जहाँ पर अंदर बहुत ही आकर्षण होता रहे, वहाँ मोह होता ही है। इसलिए शास्त्रकारों ने बहुत सावधान किया है कि आकर्षणवाली जगह पर उपयोग रखना, शुद्ध उपयोग रखना तो वह आपको परेशान नहीं करेगी। वर्ना वह तो आकर्षणवाली जगह है। यदि फिसलनवाली जगह हो तब हम क्या करते हैं?

प्रश्नकर्ता : वहाँ सावधान रहकर चलते हैं।

दादाश्री : वहाँ आप जागृति नहीं रखते? और लोग आवाज़ें भी देते हैं, 'अरे! चंदूभाई फिसल जाओगे, जरा संभलकर चलना।' उसी प्रकार यह भी बड़ा फिसलनवाला आकर्षण है। अत: यहाँ पर बहुत ही जागृति चाहिए। यहाँ शुद्ध उपयोग रखना। जहाँ आकर्षण होता हो, वहाँ शुद्धात्मा देखकर, प्रतिक्रमण विधि आदि करके सब साफ कर देना। कहीं सभी जगह आकर्षण नहीं होता।

प्रश्नकर्ता : आकर्षण का प्रतिक्रमण करना पड़ता है?

दादाश्री : हाँ और क्या! आकर्षण-विकर्षण इस शरीर को होता हो तो आपको चंदूभाई से कहना पड़ेगा कि, 'हे चंदूभाई, यहाँ आकर्षण हो रहा है तो प्रतिक्रमण करो।' तो आकर्षण बंद हो जाएगा। आकर्षण-विकर्षण, ये दोनों ही हमें भटकाते हैं। यह *पुद्गल* क्या कहता है कि, 'आप शुद्धात्मा हो गए, उसमें मुझे हर्ज नहीं है, लेकिन आपका मोक्ष कब होगा? हम तो शुद्ध परमाणुओं के रूप में थे लेकिन आपने ही हमें बिगाड़ा है। इसलिए हमें शुद्ध बना दो। जैसे थे वैसे बना दो, तो आप छूट जाओगे। जब तक हमें शुद्ध नहीं करोगे, तब तक आप छूट नहीं पाओगे।' जब तक इस *पुद्गल* का निकाल नहीं होगा, तब तक वह छोड़ेगा नहीं। इसीलिए हमने इन सारी फाइलों का समभाव से निकाल करने को कहा है, वे परमाणु शुद्ध हो जाएँ, इसलिए कहा है।

पुद्गल की, खुद की ऐसी अलग-अलग शक्तियाँ हैं कि जो आत्मा को आकर्षित करती हैं। उन शक्तियों से ही खुद ने मार खाई है न! आत्मा, *पुद्गल* की शक्ति जानने निकला कि यह क्या है? यह कौन सी शक्ति है? अब उसमें वह खुद ही फँस गया, अब कैसे छूटे? यदि खुद के स्वरूप का भान होगा तो छूटेगा!

[८]

ब्रह्मचर्य हेतु वैज्ञानिक 'गाइड'

खुले रहस्य ब्रह्मचर्य संबंधित

दादाश्री : ब्रह्मचर्य की ज़रूरत है या नहीं?

प्रश्नकर्ता : है।

दादाश्री : कितनी ज़रूरत है?

प्रश्नकर्ता : बहुत ज़्यादा है।

दादाश्री : ब्रह्मचर्य यानी आपको एक तरीका बताता हूँ कि पूरे हिन्दुस्तान के सभी लोग ब्रह्मचारी बन जाएँ तो रहेगा क्या? हिन्दुस्तान में क्या रहेगा? बल्कि हिन्दुस्तान का बुरा किया ऐसा कहलाएगा, नहीं? हिन्दुस्तान में सभी ब्रह्मचारी हो जाएँगे तो क्या होगा? ऐसा नहीं कहना चाहता। थोड़े-बहुत ब्रह्मचारी हों और अन्य शादीशुदा हों। प्रौढ़ावस्था में, संसार अवस्था में ब्रह्मचर्य-पालन का रास्ता होना चाहिए। उसके लिए पुस्तक लिखी गई है। क्योंकि ब्रह्मचर्य के बिना इस देश की दशा तो देखो, क्या है? वर्ना ब्रह्मचर्य की शक्तिवाले की दिमाग़ी स्थिरता कितनी अच्छी होती है, मनोबल कितना अच्छा होता है!

प्रश्नकर्ता : आपने खरा ब्रह्मचारी देखा है?

दादाश्री : खरा ब्रह्मचारी कहीं इस कलियुग में होता होगा? इसी को कलियुग कहते हैं! यानी इस हिन्दुस्तान में ऋषि-मुनियों के समय में ही ब्रह्मचर्य का पालन होता था। बाद में धीरे-धीरे कम होते गए, जैसे-

जैसे युग परिवर्तन होता गया, वैसे-वैसे। बाद में फिर पुस्तकों आदि का नाश हो गया और उसके बाद ब्रह्मचर्य की कोई पुस्तक ही नहीं रही। इसलिए लोग समझे कि यह रिवाज़ तो हमेशा से था, यह विषय भोगने का रिवाज़ हमेशा से है। दूसरे नये रिवाज़ बने, लेकिन यह हमेशा का रिवाज़। इसलिए ब्रह्मचर्य की बातों पर दो पुस्तकें बनीं, उत्तरार्ध और पूर्वार्ध।

महावीर भगवान के पश्चात् पच्चीस सौ सालों में ब्रह्मचर्य से संबंधित पुस्तकें नहीं निकलीं। ब्रह्मचर्य की बात कौन करेगा इस काल में? हर कहीं मन थोड़ा-बहुत तो बिगड़ा हुआ होता ही है। जब तक खुद का बिगड़ा हुआ होगा, तब तक ब्रह्मचर्य से संबंधित बात नहीं कर पाएगा। वाणी ही नहीं निकलेगी न!

ज्ञानी के अलावा कौन निकाले विषय रोग?

लोग विषय से संबंधित उपदेश देते ही नहीं, इसका क्या कारण है?

प्रश्नकर्ता : वे लोग उपदेश दें, फिर भी असर होगा ही नहीं न?

दादाश्री : हाँ, असर होगा। यदि उनका अपना ब्रह्मचर्य से संबंधित चरित्र होगा तो। भले ही उन्हें आत्मा का ज्ञान नहीं हो फिर भी यदि उपदेश दे तो वह फलदायी होगा। चरित्र के बिना सब व्यर्थ है।

प्रश्नकर्ता : लौकिक ब्रह्मचर्य के लिए वे लोग व्रत देते हैं, वह क्या है?

दादाश्री : व्रत देने की ज़रूरत नहीं है, व्रत का पालन कैसे करें, उसका तरीका बताना चाहिए। वर्ना व्रत रखने के बावजूद भी जैसा था वैसा ही हो जाएगा!

प्रश्नकर्ता : कुछ लोग विषय को छोड़ने का उपदेश देते हैं।

दादाश्री : ऐसे उपदेश का क्या करना है? वह उपदेश ही नहीं कहलाएगा न? उपदेशक तो, ऐसे बोल बोलता है कि विषय पर वैराग आ जाए कि ऐसा है? विषय को यदि याद करे न तो वह तो जीता-जागता

नर्क है। विषय को यदि ज्ञानीपुरुष से समझ ले कि 'ओहोहो! पूरे जगत् की दुर्गंध इसमें है! पूरे जगत् का दुःख इसमें है! पूरे जगत् की तमाम परेशानियाँ इसमें है!' यह तो, लोग कुछ जानते ही नहीं, इसलिए मूर्खता के कारण यह सब उल्टा चलता रहता है।

उपदेशक दो तरह के होने चाहिए। या तो ज्ञानी होना चाहिए और यदि अज्ञानी हो, लेकिन शीलवान होगा तो चलेगा! शील नहीं होगा तब तो किसी का भला नहीं हो पाएगा। बल्कि उनसे मिलने से दुःख बढ़ जाएँगे। संपूर्ण चरित्र तो किसे कहेंगे? शील को चरित्र कहते हैं। शील यानी विषय का विचार तक नहीं आए। हमें विषय का एक भी विचार नहीं आता। हमारा जो चरित्र है, वही चरित्र कहलाता है। संयम परिणामी उसे कहेंगे कि जिसे विषय का विचार ही नहीं आए!

खरा ब्रह्मचारी ही बोले ब्रह्मचर्य पर

प्रश्नकर्ता : कुछ महापुरुषों ने ब्रह्मचर्य पर बहुत ज़ोर दिया है।

दादाश्री : ज़ोर दिया अवश्य था लेकिन पुस्तक नहीं लिखी थी, उपाय नहीं बताए थे। उपाय कैसे जानेगा? जब तक खुद ने संपूर्ण ब्रह्मचर्य पालन नहीं किया है?

प्रश्नकर्ता : वे ब्रह्मचारी ही थे।

दादाश्री : वे भले ही ब्रह्मचारी हों, फिर भी जब तक उपाय नहीं बताए, तब तक पुस्तक नहीं बन सकती। अभिप्राय दें कि ब्रह्मचर्य पालन करना चाहिए, लेकिन सिर्फ ऐसा कहने से पालन नहीं हो सकेगा। इसलिए वह यूज़फुल नहीं है। हेल्पफुल नहीं है। जो वाणी हमें ब्रह्मचर्य का पालन करवाए, पालन करने में हेल्प करे, वह काम आएगी। वह तो एक आशय हुआ कि ब्रह्मचर्य पालन करना चाहिए। वह उसे हेल्प करता है। लेकिन अब इसका पालन कैसे करे? तो उसके लिए साधन तो चाहिए न?

इन्सान अब्रह्मचर्य की ज़िम्मेदारी समझे, तब ब्रह्मचर्य पालन कर सकता है। कितना भारी जोखिम है, जब ऐसा समझ में आएगा, तब। उसे

भान ही नहीं है कि अब्रह्मचर्य क्या है? और भान दिलाए ऐसी एक भी पुस्तक हिन्दुस्तान में नहीं है कि जिसमें इस भान के बारे में बताया हो! सभी ने ऐसा कहा है कि अब्रह्मचर्य गलत है। ब्रह्मचर्य पालन करना चाहिए, लेकिन भाई, अब्रह्मचर्य कैसे बंद हो, ऐसा कोई रास्ता नहीं बताया। इस पुस्तक में सभी रास्ते हैं।

ऐसा है कि लोगों को अब्रह्मचर्य की बात में क्या नुकसान है और क्या फायदा है, यह समझ में आए इसीलिए कहा है। उसमें से यह पुस्तक बनी है! इसे पढ़कर अब लोग सोचेंगे कि 'इतना नुकसान होता है? अरे! ऐसा तो जानते ही नहीं थे!'

शादी नहीं करनी है, ऐसा नक्की किया हो तो शादी नहीं करनी है, की ओर जाना और शादी करनी है, ऐसा नक्की किया हो तो उस ओर जाना। हमें ऐसा नहीं है कि ऐसा ही करो।

प्रश्नकर्ता : बिना समझे ले, तो कहते हैं कि दूसरे जन्म में बीवी, बीवी करते हुए जन्म लेगा?

दादाश्री : नहीं, लेकिन ऐसा तो काम का भी नहीं है, हाँ। समझ में तो आना चाहिए। समझ के लिए तो हमने पुस्तकें लिखी हैं।

प्रश्नकर्ता : सही बात है।

दादाश्री : आप कैसे जानते हो यह? बुद्धि को भी समझ में आ जाए, ऐसी बात है। इसीलिए तो अपने यहाँ ब्रह्मचर्य की पुस्तक छप रही है। हिन्दुस्तान में सबसे पहली!

यानी आवरणिक दृष्टि से इसे सुख माना गया है। कैसा? इसे सुख माना गया है इसलिए मैं वह उखाड़ फेंकना चाहता हूँ। इससे कई लोगों के विचार बदल गए। सब लोग समझ गए हैं। कितने भयंकर दोष हैं इसमें, इस पर तो ज़रा सोचना शुरू करेगा न इन्सान?

प्रश्नकर्ता : लेकिन यदि इस पुस्तक को पढ़े और पढ़कर यदि थोड़ा-बहुत समझे तो इन्सान अच्छी तरह से लाइन पर आ जाए, पूरा का पूरा।

दादाश्री : ब्रह्मचर्य व्रत लेने मेरे पास आते ही हैं न। कई तो पत्नी के साथ ब्रह्मचर्य लेने आते हैं। यानी यह पहली बार विषय पर ऐसा लिखा गया है। पहली बार। और विषय का यथावत् स्वरूप बताया है।

प्रश्नकर्ता : आपने जो स्पष्टीकरण दिए हैं, ऐसे स्पष्टीकरण आज तक हुए ही नहीं है।

दादाश्री : स्पष्टीकरण कैसे देंगे लेकिन? जहाँ खुद ही बेभान है, उसी में ही पड़े हुए हैं, तभी तो ये समझ नहीं पाते कि यह विषय क्या चीज़ है?

यानी सीक्रेसी है वह, इसलिए ब्रह्मचर्य की बातें नहीं होती। इसलिए मुझे कहना पड़ता है इन साधुओं से, कि क्यों उस तरफ की सीक्रेसी नहीं खोलते? लोगों को हज़ारों साल तक यह पुस्तक काम में आएगी। ब्रह्मचर्य के बारे किसी ने कुछ कहा ही नहीं और ब्रह्मचर्य के बारे में किसी ने कुछ खुलकर बताया ही नहीं।

इस पुस्तक को पढ़कर पालन करना। पुस्तक पढ़े बगैर कोई ब्रह्मचर्य पालन करे तो अर्थहीन है। समझे बिना करे तो वह व्यर्थ है, समझसहित होना चाहिए। पढ़ो, इस पुस्तक में जो लिखा है न, उसे पढ़कर ही अपने आप ब्रह्मचर्य पालन करने का मन होता है।

नहीं की बात किसी बाप ने

तेरे बाप ने समझाया तो है न तुझे?

प्रश्नकर्ता : नहीं समझाया था इतना सब। आज कल कोई बाप या अन्य कोई ऐसी बात नहीं समझाता, ऐसी बात कोई नहीं करता!

दादाश्री : बात ही नहीं करते, नहीं? कोई पुरुष किसी स्त्री से ब्रह्मचर्य की बात ही नहीं करता। इसका कारण क्या है कि अंदर नीयत चोर है सभी की और माता-पिता क्यों बात नहीं करते? तो इसलिए कि उन्हें शर्म आती है। खुद पालन नहीं कर रहे हों तो कैसे कहेंगे? अत:

यदि ब्रह्मचर्य की बात की जाए तो इन्सान समझदार हो जाएगा! ब्रह्मचर्य शब्द सुना ही नहीं। और यहाँ पर तो ब्रह्मचर्य पर दो पुस्तकें लिखी गई हैं। तो यदि कोई व्यक्ति ब्रह्मचर्य पालन नहीं कर रहा हो तो भी पालन करने की शुरूआत कर देगा!

जिसने ब्रह्मचर्य का कभी मुँह तक नहीं देखा हो, वह भी ब्रह्मचर्य पालन शुरू कर देता है। पैंतीस साल के दोनों साथ में आए, वे मुझसे कहने लगे, 'हमें ब्रह्मचर्य व्रत लेना है।' तब मैंने पूछा, 'क्यों, इतनी छोटी उम्र में दोनों एक साथ?' तब कहने लगे, 'आपकी ब्रह्मचर्य की पुस्तक पढ़ी, इसलिए हमें जोखिम समझ में आ गया। अब हमें वह सब नहीं चाहिए।' यह पुस्तक कई लोगों में परिवर्तन लाई है। भान ही नहीं है न? सभी लोग यह करते आए हैं, पड़ोसी करते आए हैं, प्रेसिडेन्ट करते हैं, प्रधानमंत्री ऐसा करते हैं, बाकी सभी ऐसा ही करते हैं। साधु-आचार्य भी अंदर कितना कुछ उल्टा-सीधा करते रहते हैं। इसलिए फिर लोग समझे कि यही मुख्य चीज़ है, इस दुनिया में। इसलिए इस पर सोचा ही नहीं किसी ने कि इसमें सुख नहीं है। जब से यह पढ़ा तभी से पता चल गया कि ऐसा तो जानते ही नहीं थे, वर्ना शादी ही नहीं करते न! यह भी जान लिया हमने। जीवन का सबसे अच्छा समय ऐसे ही बिता दिया, शीलदर्शक के बिना। अब कहते हैं, 'मेरा काम हो गया!'

इससे तो बहुत सुख बर्तता है, कुछ लोगों को तो इतना अधिक सुख बर्तता है! यह पुस्तक पढ़ने के बाद समझ में आया कि इतना सारा जोखिम और इतना सारा पाप और इतना सारा दोष होने के बावजूद हम इसमें पड़े हुए है। इस लोकसंज्ञा की वजह से लोग इसमें पड़े हुए हैं। इसलिए इसमें पड़े हैं। जानवर पड़े, मनुष्य पड़े, कोई इन्सान बचा ही कहाँ? अन्य चार विषयों में हर्ज नहीं है, इसी विषय का झंझट है। नासमझी की वजह से यह सब उल्टा चल रहा है!

यह पुस्तक पढ़ने के बाद ऐसे अनुभव होते हैं कि 'विषय के विचार ही नहीं आते, बंद हो गए!'

'गाइड' का उपयोग करके हुए पास

एक भाई तो पुस्तक पढ़कर आए थे। बड़े दुःखी हो रहे थे। मैंने पूछा, 'क्या दुःख आ पड़े हैं?' तब कहा, 'आपकी पुस्तक पढ़ी, इसलिए यह दुःख आ पड़ा है।' 'कौन सी पुस्तक पढ़ी जो आपको दुःख हुआ?' तब कहा, 'ब्रह्मचर्य की पुस्तक पढ़ने के बाद मुझे बहुत दुःख हुआ, अरे! मैं इतना नालायक, मैं ऐसा जानवर जैसा' मैंने कहा, 'वह आपको नापना है, मुझे वह नापने से क्या मतलब है? पुस्तक आपसे क्या कहती है? पुस्तक आपको जानवर जैसा नहीं कहती।' तब कहा, 'मुझे अब बहुत दुःख हो रहा है, ऐसा क्यों हो रहा है? ये पाप कैसे धुलेंगे?' मैंने कहा, 'अभी जितना खुल कर बता दोगे तो निबेड़ा आ जाएगा, वह पुस्तक पूरी पढ़ ली?' तब कहा, 'पूरी, हर एक शब्द पढ़ लिया। भीतर चीरे पड़ गए, दरारें पड़ गईं कितनी।' मैंने पूछा, 'अब क्या करोगे फिर?' तब कहा, 'आप जो कहें!' तब मैंने कहा, 'फिर से पढ़ना।' ब्रह्मचर्य से संबंधित ज्ञान ही हिन्दुस्तान में नहीं दिया गया है न? इसलिए इस हिन्दुस्तान के ऋषि-मुनियों की संतानें पाशवता की ओर चलीं। पशुयोनि जैसे हो गए।

ये वापस पलट जाएँ न, तो बहुत काम हो जाएगा। कोई व्यक्ति सही रास्ते पर, राइट वे पर हो, तो उस साइड पर धीरे-धीरे चलता है। उसके बजाय अगर रोंग वे पर चलकर वापस आया हो न, तो बहुत स्पीडी चलता है। मन में ठान लिया होता है कि अब इस पार या उस पार। वह धीरे-धीरे चलनेवाला तो रास्ते में चाय-पानी करता हुआ जाएगा। ब्रह्मचर्य की यह पुस्तक पढ़कर आज ही हमें चिट्ठी दी है कि, 'दोनों को ब्रह्मचर्य व्रत दे दीजिए। हमें बहुत दुःख हो रहा है,' कहते हैं। क्योंकि ऐसा कहनेवाला कोई मिला ही नहीं कि इसमें ऐसे-ऐसे गुनाह हैं या ऐसे दोष हैं! जो भी कोई क्लियर है, वही लिख सकता है, वर्ना ब्रह्मचर्य पर कोई नहीं लिख सकता। यानी ऐसी कोई पूरी पुस्तक ही नहीं है, ऐसी क्लियर कोई एक भी पुस्तक नहीं है।

पुस्तक पढ़कर भी पालन कर सकते हैं ब्रह्मचर्य

ब्रह्मचर्य का विषय तो कॉलेज में रखने जैसा है। और ऐसी पुस्तक

हिन्दुस्तान में बनी ही नहीं है। हिन्दुस्तान में ब्रह्मचर्य की ऐसी पुस्तक खोजने जाओगे तो नहीं मिलेगी। क्योंकि जो खरे ब्रह्मचारी हो चुके हैं, वे कहने को नहीं रहे और जो ब्रह्मचारी नहीं हैं, वे कहने को रहे हैं पर उन्होंने कुछ लिखा नहीं है। जो ब्रह्मचारी नहीं होंगे, वे कैसे लिखेंगे? खुद में जो दोष होते हैं, उनका कोई विवेचन नहीं कर सकता। जो ब्रह्मचारी थे वे कहने को नहीं रहे, जो खरे ब्रह्मचारी थे, वे थे चौबीस तीर्थंकर! कृपालुदेव ने भी थोड़ा बहुत कहा है।

दादा करें जीर्णोद्धार, महावीर शासन का

कड़वा लगता है थोड़ा-थोड़ा?

प्रश्नकर्ता : नहीं, नहीं।

क्षत्रिय थे, इसलिए इसका मंडान किया था भगवान महावीर ने। उनके शासन में हम क्षत्रिय हैं, जो इसका जीर्णोद्धार कर रहे हैं! अन्य किसी का काम नहीं है, जीर्णोद्धार करने का। जीर्णोद्धार तो होना ही चाहिए न!

जिसने हमारी यह ब्रह्मचर्य की पुस्तक पढ़ी हो, वही ब्रह्मचर्य का पालन कर सकता है, वर्ना ब्रह्मचर्य पालन कोई आसान चीज़ है?

मेरा तो 'ओपन टू स्काइ' जैसा है। एक बाल जितनी चीज़ भी गुप्त नहीं रखी है। यह ज्ञान होने के बाद मैंने अब्रह्मचर्य का कभी मन से भी सेवन नहीं किया है।

विषय का मुझे विचार तक नहीं आता। स्त्रियों को देखकर मुझमें विषय उत्पन्न नहीं होता, क्योंकि मुझे आत्मा ही दिखाई देता है। निर्विचार दशा, निरीच्छक दशा, जिसे किसी भी प्रकार की इच्छा ही नहीं है। आज अट्ठाईस साल से हमें विचार ही नहीं आया है। निर्विकारी दशा, निर्विकल्प दशा, कोई विकल्प ही नहीं। यह तो जगत् का कल्याण कर देगा!

जय सच्चिदानंद

मूल गुजराती शब्दों के समानार्थी शब्द

निकाल : निपटारा

अणहक्क : बिना हक़ का, अवैद्य

नियाणां : अपना सारा पुण्य लगाकर किसी एक चीज़ की कामना करना

निर्जरा : आत्म प्रदेश में से कर्मों का अलग होना

भोगवटा : सुख-दुःख का असर

चीकणी फाइल : गाढ़ ऋणानुबंधवाले व्यक्ति

आरा : कालचक्र के बारहवें हिस्से में से एक भाग

उपाधि : बाहर से आनेवाला दुःख

पूरण-गलन : चार्ज होना-डिस्चार्ज होना

ऊपरी : बॉस, वरिष्ठ

पुद्‌गल : जो पूरण और गलन होता है

गारवता : संसारी सुख की ठंडक में पड़े रहने की इच्छा

हूँफ : अवलंबन, सलामती

लप्पन-छप्पन : बेमतलब का व्यवहार या लेन-देन

चलण : नियंत्रण, सत्ताधीश, खुद के अधीन रखना

प्राप्तिस्थान

दादा भगवान परिवार

अडालज : त्रिमंदिर संकुल, सीमंधर सिटी, अहमदाबाद- कलोल हाईवे, पोस्ट : अडालज, जि.-गांधीनगर, गुजरात - 382421. फोन : (079) 39830100, E-mail : info@dadabhagwan.org

अहमदाबाद : दादा दर्शन, ५, ममतापार्क सोसाइटी, नवगुजरात कॉलेज के पीछे, उस्मानपुरा, अहमदाबाद-380014. फोन : (079) 27540408

राजकोट : त्रिमंदिर, अहमदाबाद-राजकोट हाईवे, तरघड़िया चोकड़ी (सर्कल), पोस्ट : मालियासण, जि.-राजकोट. फोन : 9274111393

भुज : त्रिमंदिर, हिल गार्डन के पीछे, एयरपोर्ट रोड. फोन : (02832) 290123

गोधरा : त्रिमंदिर, भामैया गाँव, एफसीआई गोडाउन के सामने, गोधरा (जि.-पंचमहाल). फोन : (02672) 262300

वडोदरा : दादा मंदिर, १७, मामा की पोल-मुहल्ला, रावपुरा पुलिस स्टेशन के सामने, सलाटवाड़ा, वडोदरा. फोन : (0265) 2414142

मुंबई	: 9323528901	**दिल्ली**	: 9310022350
कोलकता	: 033-32933885	**चेन्नई**	: 9380159957
जयपुर	: 9351408285	**भोपाल**	: 9425024405
इन्दौर	: 9893545351	**जबलपुर**	: 9425160428
रायपुर	: 9425245616	**भिलाई**	: 9827481336
पटना	: 9431015601	**अमरावती**	: 9823127601
बेंगलूर	: 9590979099	**हैदराबाद**	: 9989877786
पूना	: 9860797920	**जलंधर**	: 9463542571

U.S.A. : **Dada Bhagwan Vignan Institute** :
100, SW Redbud Lane, Topeka, Kansas 66606
Tel. : +1 877-505 (DADA) 3232 ,
Email :info@us.dadabhagwan.org

U.K. : +44 (0) 330 111 DADA 3232
Kenya : +254 722 722 063
Australia : +61 421127947
UAE : +971 557316937
Singapore : +65 81129229
NZ : +64 21 0376434

Website : www.dadabhagwan.org

अरे, ऐसा तो जाना ही नहीं था कभी !

लोगों को, अब्रह्मचर्य की बात में क्या नुकसान है, क्या फ़ायदा है और उसकी कितनी अधिक ज़िम्मेदारी है, यह समझ में आए और ब्रह्मचर्य का पालन करें, इसीलिए हमने ब्रह्मचर्य के बारे में बात की है. उसी से यह पुस्तक बनी है। सभी ने ऐसा कहा है कि 'अब्रह्मचर्य गलत है, ब्रह्मचर्य का पालन करना चाहिए' अरे भाई, अब्रह्मचर्य किस तरह बंद होगा, उसका रास्ता ही नहीं बताया है। अत: इस पुस्तक में ये सब रास्ते ही बताए गए हैं, ताकि लोग पढ़कर सोचें कि अब्रह्मचर्य से इतना अधिक नुकसान होता है! अरे, ऐसा तो हम जानते ही नहीं थे!

-दादाश्री

ISBN 978-93-82128-39-7
9 789382 128397
Printed in India

MRP ₹100

dadabhagwan.org